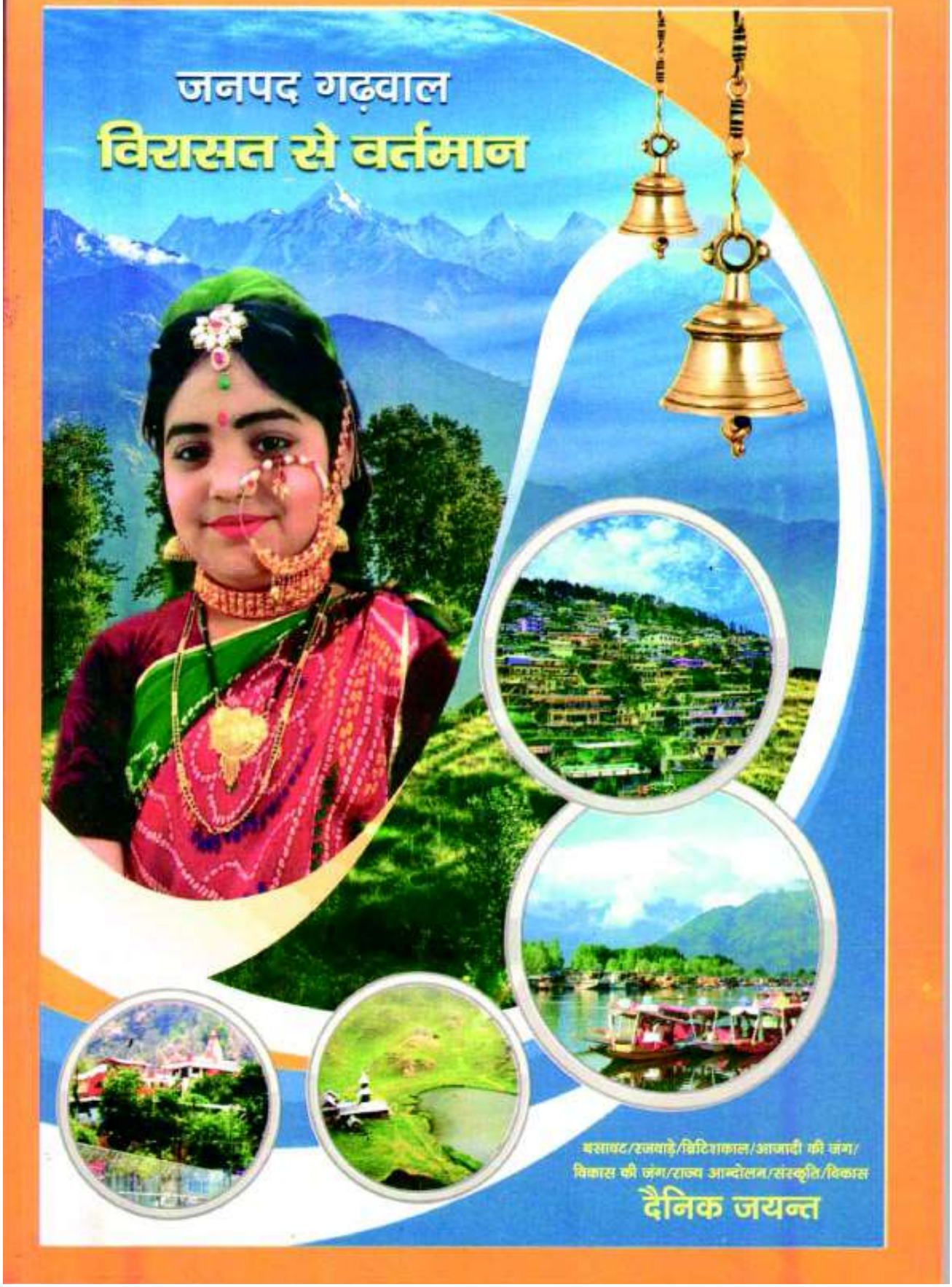
जनपद गढ़वाल
विरासत से वर्तमान
बसावट/रजवाड़े/ब्रिटिशकाल/आजादी की जंग/
विकास की जंग/राज्य आन्दोलन/संस्कृति/विकास
दैनिक जयन्त

समर्पण

प्रमुख लोकतंत्र सेनानी, गढवाल विश्व विद्यालय के संस्थापक, उत्तराखण्ड राज्य आन्दोलन के अग्रणी

दैनिक जयन्त संस्थापक

नरेन्द्र उनियाल

(12 मार्च 1952–23 जुलाई 1981)

''जनपद गढ़वाल: विरासत से वर्तमान''के प्रकाशन अवसर पर हम श्रद्धा के साथ आपका स्मरण करते हैं और आपके द्वारा दिखाई गई राह तथा आदर्शों पर चलने का संकल्प लेते हुए इस दस्तावेज को आपको समर्पित करते हैं।

समस्त **जयन्त** परिवार

जनपद पौड़ी गढ़वाल विरासत से वर्तमान तक

द्वितीय प्रकाशन
31 अक्टूबर 2021

संकलन, सम्पादक एवं प्रकाशक
नागेन्द्र उनियाल

दैनिक जयन्त द्वारा प्रकाशित जनपद गढ़वाल विरासत से वर्तमान तक के लिए प्रकाशक मुद्रक एवं सम्पादक नागेन्द्र उनियाल द्वारा दैनिक जयन्त कार्यालय कोटद्वार गढ़वाल उत्तराखण्ड से प्रकाशित एवं जयन्त प्रकाशन, डिग्री कॉलेज रोड कोटद्वार (गढ़वाल) उत्तराखण्ड से मुद्रित।

सम्पर्क :
9412081969
8384897348

मूल्य: रूपये 150.00

अनुक्रमिका

जनपद गढ़वाल आर्थिकी, भूगोल एवं प्रशासन	4-8
जनपद के लोकसभा एवं विधानसभा सदस्य	9-10
जनपद गढ़वाल का संक्षिप्त इतिहास	11-16
स्वतंत्रता संग्राम में गढ़वाल का योगदान	17-25
डोला-पालकी आन्दोलन	26-31
आजादी की तीसरी जंग पेशावर कांड	32-36
चन्द्रशेखर आजाद का नाथूपुर प्रवास	37-38
पराधीन भारत में नेहरू की गढ़वाल यात्रा	39-40
जनपद गढ़वाल के स्वतंत्रता संग्राम सैनानी	40-42
जनपद गढ़वाल के आजाद हिन्द फौज के सैनिक	43-46
जनपद गढ़वाल में समाचार पत्रों का गौरवमयी इतिहास	47-51
जनपद गढ़वाल के विकास के आन्दोलन	52
विश्वविद्यालय के लिए आन्दोलन	53-54
श्रमदान आन्दोलन की ऐसी मिसाल और कहां	55-56
चकबन्दी आन्दोलन	57
टिंचरी आन्दोलन	58
उत्तराखण्ड राज्य आन्दोलन में जनपद पौड़ी गढ़वाल का योगदान	59-66
गैरसैंण राजधानी के लिये एक मात्र शहीद	
जनपद गढ़वाल के बाबा मोहन उत्तराखण्डी	67
उत्तराखण्डी संस्कृति में जनपद गढ़ावल की भूमिका	68
गढ़वाल भाषा, साहित्य एवं संस्कृति का वैशिष्ट्य	69-70
जनपद गढ़वाल की लोक कलाएं	71-72
जनपद गढ़वाल के लोकगीत	73-74
जनपद गढ़वाल के प्रमुख मेले	74
जनपद गढ़वाल के प्रमुख धार्मिक/पर्यटक स्थल	75-76
जनपद गढ़वाल की दिवंगत विभूतियां	77-95
धधकता पहाड़ से जयन्त का नियमित प्रकाशन	96

सम्पादकीय

उत्तराखण्ड राज्य का जनपद गढ़वाल जिसे आम बोलचाल में पौड़ी गढ़वाल कहा जाता है, की विरासत से वर्तमान तक का विवरण हमने इस पुस्तक में देने का प्रयास किया है। इस पुस्तक के प्रकाशन का उद्देश्य साफ और स्पष्ट है कि जनपद की विरासत से वर्तमान तक का इतिहास अनेकों ग्रंथों, विभागीय पत्रावलीयों, सूचना पट्ट पर प्रचुर मात्रा में है। लेकिन वह भिन्न-भिन्न विषयों पर अलग-अलग बिखरा पड़ा है। जिससे ज्ञान प्राप्त करने वालों को अनेक पुस्तकों की खोज करनी पड़ती है। इसी प्रकार वर्तमान की स्थिति के लिए भी अलग-अलग दस्तावेजों में जानकारी उपलब्ध है।

दैनिक जयन्त ने जनपद पौड़ी गढ़वाल के इतिहास से लेकर वर्तमान तक के विवरण को भिन्न-भिन्न दस्तावेजों से संकलित कर एक साथ प्रकाशित करने का प्रयास किया गया है। ताकि हमारी आगे की पीढ़ी अपने इतिहास से सीख लेकर अपनी संस्कृति को मजबूत करते हुए अपना भविष्य उज्जवल करें।

यद्यपि इस पुस्तक में जनपद पौड़ी गढ़वाल के इतिहास से लेकर वर्तमान तक की पूर्ण जानकारी देने का प्रयास किया गया है, फिर भी कुछ महत्वपूर्ण जानकारी छूट गई होगी, इसे हमारी गलती न मानते हुए अभाव की कमी मान कर हमें इस पुस्तक के अगले संस्करण के लिए आप उपलब्ध कराएगे, ऐसी आपसे अपेक्षा है।

इस अवसर पर मैं उन सभी ग्रंथो के लेखकों, प्रकाशकों का भी आभार व्यक्त करना चाहता हूं जिनके प्रकाशनों से हम यह सामग्री जुटाने में सक्षम हुए है। यहां संदर्भित ग्रंथों या उनके लेखकों, संकलन कर्त्ताओं का व्यक्तिगत उल्लेख कर पाना इसलिए औचित्यपूर्ण नहीं है कि एक ही सामग्री कई ग्रंथों से सन्दर्भित ली गई है।

यह पुस्तक जहां पौड़ी गढ़वाल की विरासत से वर्तमान तक की जानकरी देता एक दस्तावेज है, वही यह एक सन्दर्भित पुस्तक की भूमिका के साथ-साथ सामाजिक, आर्थिक, राजनैतिक एवं विकास का आइना भी साबित होगी।

जनपद गढ़वाल आर्थिकी,भूगोल एवं प्रशासन

जनपद का सृजन

कुछ शताब्दी पूर्व तक गढ़वाल छोटे-छोटे राज्यों में बंटा हुआ था जो संख्या में 52 बताये जाते हैं। इन राज्यों को 15 वीं शताब्दी में चांदपुर के राजा ने जीत कर एक साथ जोड़कर श्रीनगर के निकट देवलगढ़ में राजधानी स्थापित की। 1804 ई0 में गोरखा सेना ने गढ़वाल पर आक्रमण किया। गोरखा सेना की बढती शक्ति को रोकने के लिए अंग्रेजों ने उनका विरोध किया और 1815 में गढ़वाल को गोरखों से मुक्त करने में सफल हुए, बदले में गढ़वाल के राजा ने राज्य को दो भागों में विभक्त कर, आधा गढ़वाल अंग्रेजों को सौंप दिया, जो ब्रिटिश गढ़वाल कहलाया। 1840 ई0 में ब्रिटिश गढ़वाल को एक पृथक जनपद बनाया गया तथा पौड़ी गढ़वाल का नाम दिया गया। 1960 में जनपद की चमोली तहसील को अलग जनपद बनाया गया तथा पौड़ी गढवाल अपने वर्तमान स्वरूप में आया। 09 नवम्बर 2000 में उत्तरांचल एक पृथक राज्य के रूप में आस्तित्व में आया, जिसके अन्तर्गत दो मण्डल क्रमशः गढ़वाल एवं कुमायूं सम्मिलित किये गये। जनपद पौड़ी गढ़वाल, गढ़वाल मण्डल के अन्तर्गत आता है।

जनपद पौड़ी गढ़वाल 29.2 से 30.15 डिग्री उत्तरी अक्षांश तथा 78.10 से 79.20 डिग्री पूर्व देशान्तर के मध्य स्थित है। इसके उत्तर में जनपद चमोली व रूद्रप्रयाग, दक्षिण में हरिद्वार व उत्तर प्रदेश राज्य का जनपद बिजनौर व पूर्व में अल्मोड़ा एवं नैनीताल तथा पश्चिम में टिहरी गढ़वाल एवं देहरादून जनपद स्थित हैं।

जलवायु-

जनपद की जलवायु में अत्यधिक विविधता है। जहां एक ओर पौड़ी, लैन्सडौन एवं नैनीडांडा विकास खण्ड में जाडों का तापमान शून्य से नीचे चला जाता है, वही दूसरी ओर अलकनन्दा घाटी एवं दुगड्डा विकास खण्ड के भाबर क्षेत्र में लगभग मैदानी जलवायु है। बसन्त ऋतु में औसत तापक्रम 10 से 20 डिग्री तक पहुंच जाता है जाडों में घाटियों में औसत तापक्रम 10 से 15 डिग्री तक रहता है तथा पर्वतों मे 5-10 डिग्री रहता है जनपद की औसत वर्षा 1500 मिमि0 रहती है।

प्रशासनिक ढांचा

जनपद गढ़वाल में वर्ष 1998-99 से पूर्व 3537 राजस्व ग्राम थे, तथा जनपद का भौगोलिक क्षेत्रफल 5397 वर्ग कि0मी0 था। वर्ष 1997-98 में विकास खण्ड खिर्सू से 72 राजस्व ग्राम जनपद रूद्रप्रयाग में स्थानान्तरित होने के फलस्वरूप अब **जनपद में** 3116 **राजस्व ग्राम हैं।** तथा जनपद का भौगोलिक क्षेत्रफल 5329 वर्ग कि0मी0 है। जिसमें 68 वर्ग किमी0 नगरीय क्षेत्र है।

जनपद राज्य की सबसे छोटी प्रशासनिक इकाई है, जिसमें सर्वोच्च अधिकारी जिलाधिकारी है । वे जिला प्रशासन के लिए मुख्य रूप से उत्तरदायी है। जिला प्रशासन में सुरक्षा एवं शान्ति व्यवस्था तथा जिले का सर्वांगीण विकास सम्मिलित है। विभिन्न विभागों के जिला स्तरीय अधिकारी, जिलाधिकारी के सामान्य प्रशासन में कार्य करते हैं। जिलाधिकारी ऐसे सभी मामलों में जो उन्हें सौंपे गये हैं, राज्य सरकार के प्रति सीधे अथवा मण्डलीय आयुक्त के माध्यम से मामले की स्थिति के अनुसार पूर्ण रूप से उत्तरदायी है।

परगनाधिकारियों को मजिस्ट्रेट के अधिकार प्राप्त हैं और वे फौजदारी के मामलों में भी निर्णय देते हैं। फौजदारी मामलों में उनके निर्णय के विरूध अपील जिला तथा सत्र न्यायाधीश के न्यायालय में की जाती है। भूमि सम्बन्धी विवादों में उनके निर्णय के विरूद्ध अपील आयुक्त तथा राजस्व परिषद में की जाती है। जिले में शान्ति एवं सुरक्षा व्यवस्था बनाये रखने के लिये पुलिस अधीक्षक का पद सृजित है। यह अधिकारी जिलाधिकारी से समन्वय एवं सम्बन्ध स्थापित कर अपराधों की रोकथाम जांच तथा अपराधियों के विरूद्ध मुकदमें दायर करने का काम करता है। पुलिस अधीक्षक, महानिरीक्षक पुलिस के अधीन कार्य करता है।

प्रशासनिक सुविधा के लिए जनपद को 10 तहसीलों पौड़ी, कोटद्वार, लैंसडाऊन, थैलीसैंण, चाकीसैण, धुमाकोट ,श्रीनगर , चौबट्टाखाल, यमकेश्वर व सतपुली में विभक्त किया गया है। राजस्व विभाग की मूल इकाई पटवारी है। जनपद के राजस्व ग्रामों को 238 पटवारी क्षेत्रों में बांटा गया है जिसमें 214 पटवारियों को पुलिस पावर प्राप्त है, पटवारियों के कार्यो के पर्यवेक्षण हेतु 23 सुपरवाइजर कानूनगों भी कार्यरत हैं। जनपद विकास कार्यो के संचालन हेतु 15 विकास खण्डों में विभक्त है ।

प्राकृतिक संरचना-

मोटे तौर पर जनपद को दो सम्भागों में बांटा जा सकता है। प्रथम भाग में जिले का उत्तरी भाग है, जो तहसील पौड़ी, श्रीनगर, लैन्सडाऊन, धुमाकोट, यमकेश्वर, चौबट्टाखाल, थैलीसैंण व सतपुली के अन्तर्गत है। तथा द्वितीय उप सम्भाग में तहसील कोटद्वार के दुगड्डा विकास खण्ड का भाबर क्षेत्र है। दोनों भागों में वर्षा, भूमि की बनावट एवं प्राकृतिक सम्पदा में काफी भिन्नता है। प्रथम भाग जो पूर्णतः पर्वतीय है, में 2831 ग्राम तथा 5 नगर क्षेत्र हैं। यह क्षेत्र समुद्र तल से 900 मी0 से 2250 मी0 तक ऊँचाई पर स्थित है। इसका लगभग 35 प्रतिशत भाग वनों से आच्छादित है। **द्वितीय उपसम्भाग में कोटद्वार तहसील के** 306 **ग्राम तथा** 3 **नगर क्षेत्र है,** जो समुद्रतल से 450 मी0 से 1200 मी0 की ऊँचाई पर है। इस क्षेत्र मे वर्षा कम होती है।

4-**नदियां**- जनपद में जल प्रवाह तन्त्र के अन्तर्गत मुख्य रूप से अलकनन्दा, पश्चिम नयार, पूर्वी नयार, मालन, खोह नदियां हैं। इसके अतिरिक्त रामगंगा, हिवल, रेवासन, आदि छोटी-छोटी नदियां हैं जिसमें वर्षाकाल में तथा इसके कुछ समय बाद तक ही पानी रहता है। जनपद में कोई झील नहीं है।

जनांकिकी

वर्ष 2011 की जनगणनानुसार जनपद की कुल जनसंख्या 687271 है, जिसमें 326829 पुरूष एवं 360442 स्त्रियां हैं। वर्ष 2001 में जनपद की जनसंख्या 697078 थी। जनपद के नगरीय क्षेत्र की जनसंख्या में वर्ष 2001 की तुलना में वर्ष 2011 की जनसंख्या में कमी हुई है। वर्ष्ा 2001-2011 में जनसंख्या वृद्धि दर 1.41 प्रतिशत रही है। वर्ष 2011 में ग्रामीण क्षेत्रों में जनसंख्या कम होने का प्रमुख कारण अन्य क्षेत्रों में रोजगार एवं शिक्षा हेतु पलायन है। वर्ष 2001-11 में विकास खण्ड एवं नगरवार 2011 की जनगणना के आंकड़े निम्न प्रकार है:-

जनसंख्या का घनत्व- जनसंख्या

क्र० सं०	विकास खण्ड	जनसंख्या 2011
1	कोट	23754
2	कल्जीखाल	29287
3	पौड़ी	28694
4	पाबौ	34645
5	खिर्सू	26731
6	थैलीसैंण	59806
7	बीरोखाल	40915
8	दुगड्डा	107028
9	यमकेश्वर	35904
10	द्वारीखाल	38106
11	जहरीखाल	26493
12	एकेश्वर	28035
13	रिखणीखाल	29466
14	पोखड़ा	21199
15	नैनीडांडा	32937
	योग-	563000
	वन क्षेत्र	11568
	नगरीय	112703
	योग जनपद	687271

की दृष्टि से जनपद में घनी आबादी नहीं है। 1981 में जनसंख्या का घनत्व 117 व 1991 में 124 तथा 2001 में 129 तथा 2011 में 128 व्यक्ति प्रति वर्ग कि0मी0 हो गया है। जबकि राज्य का वर्तमान जनसंख्या का घनत्व 159 है।

जनगणनानुसार जनपद की जनसंख्या 1901 से 2011 तक निम्नवत रही-

जनगणना वर्ष	कुल जनसंख्या
1901	283760
1911	316938
1921	320602
1931	352782
1941	397867
1951	422633
1961	482327
1971	553028
1981	637877
1991	671541
2001	697078
2011	687271

ग्रामीण एवं नगरीय गठन- जनपद की कुल जनसंख्या का लगभग 84 प्रतिशत भाग ग्रामों में निवास करता है। जनपद में 498652 ग्रामीण आबादी है। नगरीय जनसंख्या 188679 है, जो मुख्यत: पौड़ी, श्रीनगर एवं कोटद्वार नगरपालिका के अन्तर्गत आती है।

लिंग अनुपात- 2011 में जनपद में लिंग अनुपात (1000 पुरूषों पर स्त्रियों की संख्या 1103) है। लिंग अनुपात अधिकता का मुख्य कारण पुरूषों का रोजगार के लिये मैदानी क्षेत्रों में पलायन करना है।

अनुसूचित जाति/ जनजाति- वर्ष 2011 की जनगणनानुसार अनुसूचित जाति के लोगों की संख्या 122361 है, जो कुल जनसंख्या का 17.80 प्रतिशत है। अनुसूचित जनजाति जनसंख्या 2215 है जो कुल जनसंख्या का 0. 32 प्रतिशत है। 06 वर्ष तक के बच्चों की कुल जनसंख्या 83901 है जिसमें लड़को की संख्या 44055 तथा लडकियों की संख्या 39846 है। अनुसूचित जनजाति की संख्या थैलीसैण एवं धूमाकोट तहसील में नहीं है। अधिकत्तर जनजाति संख्या तहसील कोटद्वार में है।

धर्मानुसार जनसंख्या 2011 की जनगणना के अनुसार

	धर्म	जनसंख्या
1	हिन्दू	660507
2	मुस्लिम	22931
3	इसाई	2161
4	सिख	619
5	बौद्ध	58
6	जैन	212
7	अन्य तथा अवर्णित धर्म	783

जनसंख्या का आर्थिक वर्गीकरण

वर्ष 2011 की जनगणनानुसार कुल मुख्य कर्मकरों की संख्या 164439 है, जो कुल जनसंख्या का 23.92 प्रतिशत है। जनपद में कुल 105713 सीमान्त कर्मकर हैं, जो कुल जनसंख्या का 15.96 प्रतिज़त है।

काम करने वालों और काम न करने वालों का प्रतिशत नगरीय व ग्रामीण क्षेत्रों में अलग-अलग है। ग्रामीण क्षेत्रों में काम करने वालों का प्रतिशत 40. 27 है तथा नगरीय क्षेत्र में 28.19 प्रतिशत है। स्पष्ट है कि ग्रामीण क्षेत्र में काम करने वालों की संख्या नगरीय क्षेत्र की अपेक्षा कुछ अधि ाक है। जनपद के ग्रामीण क्षेत्रों में महिलायें अधिकतर कृषि कार्यो में संलग्न रहती हैं। अत: काम करने वालों में पुरूष, स्त्री अनुपात में अपेक्षाकृत अन्तर है। कुल जनसंख्या में काम न करने वालों का प्रतिशत 61.29 है, उसमें अधिकतर वृद्व व कम आयु वर्ग के लोग हैं। वर्ष 2011 की जनगणना के अनुसार प्रति हजार पुरूषों पर महिलाओं की संख्या 1103 है, इसका मुख्य कारण है कि पुरूष वर्ग काम धन्धे ों के लिये मैदानी भागों में चले जाते हैं और महिलायें अधिकतर घर को सम्भालती हैं।

आवासीय मकान एवं परिवार

वर्ष्ा २०११ की जनगणनानुसार कुल आवासीय मकानों की संख्या २६०९८२ है जिसमें 236449 ग्रामीण एवं 24533 नगरीय क्षेत्र में स्थित हैं, वर्ष्ा 2011 की जनगणना के अनुसार कुल परिवारों की संख्या 161778 है, जिसमें 136180 ग्रामीण क्षेत्र में तथा 25598 नगरीय क्षेत्र में हैं। परिवार का औसत आकार 5 व्यक्ति प्रति परिवार है

नगरीय जनसंख्या 2011 की जनगणना के अनुसार

क्र० सं०	नगर का नाम	कुल जनसंख्या	पुरूष	स्त्री
1	श्रीनगर नगरपालिका (नगर निगम)	20115	10751	9314
2	पौड़ी नगरपालिका	25440	13090	12350
3	लैन्सडौन कैन्ट	5667	3533	2134
4	दुगड्डा नगरपालिका	2422	1215	1207
5	कोटद्वार नगर निगम	135215	692057	65843
	योग-	188679	97846	90848

जनपद गढ़वाल एक दृष्टि में

साक्षरता जनगणना परिभाषा के अनुसार 7 वर्ष अथवा अधिक आयु के वे सभी व्यक्ति जो किसी भी भाषा में पढ़ने लिखने की क्षमता रखते हों, साक्षर की श्रेणी में आते हैं। साक्षरता की दृष्टि में जनपद का राज्य में तीसरा स्थान है। 2011 की जनगणना के अनुसार जनपद में कुल 92.02 प्रतिशत व्यक्ति साक्षर हैं, जिसमें 92.12 प्रतिशत पुरूष तथा 73.22 प्रतिशत स्त्रियां हैं। राज्य का साक्षरता प्रतिशत 79.63 है।

साक्षर व्यक्ति

वर्ष	कुल	पुरूष	स्त्री
1971	170971	122749	48222
1981	263915	171630	92285
1991	363278	220876	142402
2001	461675	253270	208405
2011	494889	262148	232741

जनपद में विगत चार दशकों में साक्षरता का प्रतिशत इस प्रकार है-

वर्ष	कुल	पुरूष	स्त्री
1971	32.93	51.18	17.26
1981	45.88	64.09	30.02
1991	54.10	67.67	41.26
2001	77.5	90.9	65.7
2011	92.02	92.12	73.22

खनिज सम्पदा

खनिज- कतिपय पुराने अभिलेखों से विदित होता है कि जनपद में चूना पत्थर, लोहा तांबा तथा सोना पाये जाने की संभावना है, किन्तु इस समय जनपद में कोई विशेष खनिज नहीं पाये जा रहे है। अनुमान के अनुसार जनपद में 3.50 लाख टन जिप्सम का भण्डार है। दूधातोली पर्वत के दक्षिण भाग में चांदी, जस्ता और शीशा विद्यमान है। सल्फाइड खनिज 1500 मी0 तक है। आवश्यक सर्वेक्षण के अभाव में उपलब्ध खनिजों से अभी तक कोई लाभ अर्जित नहीं किया जा सका है। जनपद में खनिज संम्पदा की उपलब्धता के सम्बन्ध में सम्भावित खनिज स्थलों के सर्वेक्षण की आवश्यकता है।

क्षेत्रफल	5230 वर्ग किमी
जनसंख्या	687271 (2011 के अनुसार)
पुरूष	- 326829
महिला	- 360442
नगर निगम	01
नगर पालिका	-03
नगर पंचायत	02
जिला पंचायत-	01
छावनी क्षेत्र	01
तहसील	13
विकासखण्ड	15
न्याय पंचायत	115
ग्राम पंचायत	1174
कुल ग्राम	3481
आबाद ग्राम	3140
गैर आबाद ग्राम	341
कुल वन ग्राम	34 (31.03.2019 के अनुसार)
आबाद वन ग्राम	26
गैर आबाद वन ग्राम	08

तहसीलों की संख्या उप तहसील सहित- 13

1. पौड़ी (सदर)
2. श्रीनगर
3. थलीसैंण
4. चौबट्टाखाल
5. कोटद्वार
6. धुमाकोट
7. लैंसडाउन
8. सतपुली
9. यमकेश्वर
10. चाकीसैंण
11. जाखणीखाल
12. बीरौखाल
13. रिखणीखाल (उप तहसील)

कुल विकासखण्डों की संख्या-15

1. पौड़ी
2. खिर्सू
3. कोट
4. पाबौ
5. थलीसैंण
6. बीरौखाल
7. नैनीडांडा
8. यमकेश्वर
9. रिखणीखाल
10. दुगड्डा
11. द्वारीखाल
12. जयहरीखाल
13. एकेश्वर (पणखेत)
14. पोखड़ा
15. कल्जीखाल

कुल स्थानीय निकायों की संख्या- 06

नगर निगम-कोटद्वार, श्रीनगर (प्रस्तावित)

नगर पालिका परिषद -

1. पौड़ी
2. दुगड्डा

नगर पंचायत

1. सतपुली
2. स्वर्गाश्रम जौंक
3. थलीसैंण

इंजीनियरिंग कालेज -
जीबी पन्त इंजीनियरिंग कालेज, घुड़दौड़ी।

मेडिकल कालेज -
वीर चंद्र सिंह गढ़वाली मेडिकल कॉलेज श्रीकोट, श्रीनगर।

केन्द्रीय विश्वविद्यालय -
हेमवती नन्दन बहुगुणा गढ़वाल केन्द्रीय विश्वविद्यालय, श्रीनगर

औद्योनिक विश्वविद्यालय-
औद्योनिकी एवं वानिकी विश्व विद्यालय भरसार।

महाविद्यालय/डिग्रीकालेज:-	09
राजकीय इण्टर कालेज -	165
कन्या इण्टर कॉलेज-	14
राजकीय हाईस्कूल (बालक+बालिका)-	114
राजकीय कन्या हाईस्कूल-	12
कक्षा 6 से 8-	254
कक्षा 01 से 05-	1431
कानूनगो (राजस्व निरीक्षक क्षेत्र)-	23
पट्टियां-	69
पटवारी (राजस्व उप निरीक्षक)-	234
लेखपाल (राजस्व उप निरीक्षक)-	04

जनपदीय अर्थव्यवस्था

1- जनपद पौड़ी गढ़वाल की प्रति व्यक्ति आय वर्ष 2017-18 के दौरान रू0 1,90,284 आकलित हुई है

2- वर्ष 2017-18 के अनुसार जनपद का सकल घरेलू उत्पाद प्रचलित भाव पर 82,83,56 लाख रूपये का आकलित किया गया।

3- वर्ष 2017-18 के अनुसार जनपद का सकल घरेलू उत्पाद स्थिर भाव पर 67,28,85 लाख रूपये आकलित किया गया।

4- जनपद की आर्थिक विकास दर स्थिर भाव पर वर्ष 2016-17 में 6.96 प्रतिशत रही।

5- जनपद गढ़वाल में कुल 111 राष्ट्रीयकश्त बैंक, 41 क्षेत्रीय ग्रामीण बैंक तथा 42 गैर

राष्ट्रीयकश्त बैंक शाखाओं का नेटवर्क है।

8- अन्तर्विकास खण्डीय विश्लेषण करने के उपरान्त जनपद गढ़वाल में विकासखण्ड द्वारीखाल, यमकेश्वर, बीरोंखाल, खिर्सू व पाबौं का स्तर उच्च, विकासखण्ड रिखणीखाल, थलीसैण, पौड़ी, पोखड़ा, कल्जीखाल व दुगड्डा का स्तर मध्यम तथा विकासखण्ड जयहरीखाल, एकेश्वर, नैनीडांडा व कोट का स्तर निम्न पाया गया।

9- जनपद पौड़ी गढ़वाल में वर्ष 2017-18 के अनुसार भूमि उपयोगिता के अन्तर्गत जनपद का कुल प्रतिवेदित क्षेत्रफल 669055 है0 है जिसमें 385094 है0 वन, 43553 है0 कशषि योग्य बंजर भूमि, 23791 है0 परती भूमि, 26504 है0 अन्य परती भूमि, 36641 है0 उसर भूमि एंव कशषि के अयोग्य भूमि, 32367 है0 चारागाह तथा 54111 है0 उद्यानों, वनों, वश्क्षों एंव झाड़ियों का क्षेत्रफल है।

10- जनपद में कशषि के अन्तर्गत शुद्व बोया गया क्षेत्रफल 49731 है0 व 21539 है0 एक बार से अधिक बोया गया क्षेत्रफल है।

11- जनपद में कशषि के अन्तर्गत सकल बोया गया क्षेत्रफल 71270 है0 है।

12- वर्ष 2017-18 में जनपद गढ़वाल में शुद्व सिंचित क्षेत्रफल 4855 है0 तथा सकल सिंचित क्षेत्रफल 9222 है0 है।

13- जनपद गढ़वाल में वर्ष 2018 के अनुसार 947.9 मि0मि0 वास्तविक वर्षा हुई।

14- जनपद गढ़वाल में वर्ष 2018 में 32.0 डिग्री सेन्टीग्रेड उच्चतम तथा -1.4 डिग्री सेन्टीगेड न्यूनतम तापमान रहा।

15- जनपद गढ़वाल में वर्ष 2018-19 में ग्लों का उत्पादन 38648.37 मी0ट0 व सब्जियों का उत्पादन 45763.50 मी0ट0 रहा।

16- जनपद गढ़वाल में वर्ष 2018-19 में रेशम विभाग के अन्तर्गत कीट पालकों की संख्या 1113 व उत्पादित रेशम धागा की मात्रा 14026 है।

17- जनपद में वर्ष 2018-19 में मत्स्य विभाग द्वारा व्यक्तिगत जलाशयों (0.26 है0) में 690(हजार संख्या) अंगुलिकाओं का वितरण किया।

18- वर्ष 2018-19 की स्थिति के अनुसार उद्योग विभाग में 365 लघु औद्योगिक इकाईयां है जिनमें 1947 व्यक्ति कार्यरत है इसके अतिरिक्त खादी ग्रामोद्योग की 39 इकाईयां स्थापित है जिनमें 160 व्यक्ति वर्तमान में कार्यरत है।

19- वर्ष 2018-19 की स्थिति के अनुसार जनपद गढ़वाल में समस्त 3114 राजस्व ग्राम विद्युतीकश्त है जिसमें विद्युतीकश्त अनु0जा0 बस्तियों की संख्या 2322 व विद्युतीकरण से असेबित अनु0जा0 बस्तियों की संख्या शून्य है।

20- जनपद में वर्ष 2018-19 की स्थिति के अनुसार ऊर्जीकश्त/निजी नलकूप पम्प सेटों की संख्या 08 है।

21- जनपद में वर्ष 2018-19 में कुल विद्युत उपभोग 525436 हजार किलोवाट घण्टा आकलित किया गया।

22- जनपद गढ़वाल में वर्ष 2018-19 के दौरान कुल 452466 पर्यटक भ्रमण पर आये जिसमें 441159 पर्यटक भारतीय तथा 11307 पर्यटक विदेशी थे।

23- पर्यटन की दश्ष्टि से जनपद गढ़वाल में 20 मुख्य पर्यटक स्थल, 8 पर्यटन आवास गश्ह, 7 रैन बसेरा, 370 होटल तथा पेइंग गैस्ट तथा 14 धार्मशालायें है।

24- वर्ष 2018-19 की स्थिति के अनुसार जनपद गढ़वाल में कुल 1661 जूनियर बेसिक स्कूल, 471 सीनियर बेसिक स्कूल, 451 हायर सेकेण्ड्री स्कूल, 08 महाविद्यालय तथा 02 स्नातकोत्तर महाविद्यालय है।

25- जनपद गढ़वाल में 07 प्राविधिक शिक्षण संस्थान (पॉलिटेक्निक), 18 औद्योगिक प्रशिक्षण संस्थान व 01 शिक्षण प्रशिक्षण संस्थान है।

26- जनपद गढ़वाल में 111 एलोपैथिक चिकित्सालय, 27 प्राथमिक स्वास्थ्य केन्द्र, 60 आयुर्वेदिक चिकित्सालय व 14 होम्योपैथिक चिकित्सालय है।

27- उक्त के अतिरिक्त 12 सामुदायिक स्वास्थ्य केन्द्र, 35 परिवार एंव मातश्शिशु कल्याण केन्द्र व 243 परिवार एंव मातश्शिशु कल्याण उपकेन्द्र कार्यरत है।

28- जनपद गढ़वाल में 01 जिला सहकारी बैंक के अतिरिक्त 26 सहकारी बैंक की शाखाएं है

29- जनपद में सहकारी विभाग के अन्तर्गत 132 प्रारम्भिक कशषि ;ण सहकारी समितियां है जिनमें 142271 सदस्य कार्यरत है।

30- समितियों द्वारा वर्ष 2018-19 में जनपद गढ़वाल में रू0 30489 अल्पकालीन, 265643 मधय कालीन ;ण वितरण किया गया।

31- वर्ष 2018-19 की स्थिति के अनुसार जनपद गढ़वाल में आरक्षित वन कुल 2316.428 वर्ग किमी0, वन विभाग के अन्तर्गत 2307.975 वर्ग किमी0, वन पंचायत के अन्तर्गत 0 वर्ग किमी0 क्षेत्रफल वनों से आच्छादित है।

32-वर्ष 2017-18 (अनन्तिम) में जनपद पौड़ी गढ़वाल का प्रचलित भाव पर सकल घरेलु उत्पाद (ळक्च्) 828356 (लाख रूपये में) आकलित किया गया।

33-वर्ष 2017-18 (अनन्तिम) में जनपद पौड़ी गढ़वाल का स्थिर भावों पर सकल घरेलू उत्पाद(लाख रूपये में) 672885 आकलित किया गया।

स्थिर भाव (वर्ष 2011-12) के अनुसार जनपद पौड़ी गढ़वाल की आर्थिक विकास दर 2016-17 में 6.96 प्रतिशत रही।

34-राज्य निवल घरेलू उत्पाद (Net State Domestic Product) के आधार पर वर्ष 2018-19 (प्रथम अग्रिम अनुमान) में उत्तराखण्ड की प्रति व्यक्ति आय प्रचलित भावों पर रू0 1,90,284 अनुमानित है। वित्तीय वर्ष 2017-18 (अनन्तिम) में अखिल भारतीय स्तर पर प्रति व्यक्ति आय रू0 1,12,835 जबकि उत्तराखण्ड राज्य की प्रति व्यक्ति आय रू0 1,74,622 अनुमानित है। इससे स्पष्ट है कि उत्तराखण्ड राज्य की प्रति व्यक्ति आय भारत की प्रति व्यक्ति आय से अधिक है। जनपद पौड़ी गढ़वाल की प्रति व्यक्ति आय वर्ष 2017-18 के दौरान रू0 1,90,284 आकलित हुई है।

पुलिस कानून व्यवस्था

जनपद के अन्तर्गत शांति एवं कानून व्यवस्था के लिए 13 थाने स्थापित है। इसमें से 01 महिला थाना श्रीनगर भी सम्मिलित है। इनमें 4 कोतवाली, 17 रिपोर्टिंग चौकी, 9 नॉन रिपोर्टिंग चौकी हैं। 13 पुलिस थानों में से 6 नगरीय व 7 ग्रामीण क्षेत्र में स्थित हैं। जनपद के बाकी ग्रामीण क्षेत्र में शांति व्यवस्था का कार्य राजस्व पुलिस द्वारा सम्पन्न किया जाता है। राजस्व पुलिस में राजस्व उपनिरीक्षक, (पटवारी) राजिस्व निरीक्षक (कानून-गो) द्वारा किया जाता है, जिसके कार्यो का पर्यवेक्षण नायब तहसीलदार द्वारा किया जाता है। जनपद के अन्तर्गत शांति एवं कानून व्यवस्था बनाये रखने हेतु पुलिस अधीक्षक, एवं 03 क्षेत्रधिकारियों के पद स्वीकृत है। वर्ष 2015 माह मार्च के प्रथम सप्ताह में जनपद में वरिष्ठ पुलिस अधीक्षक एवं द्वितीय सप्ताह में अपर पुलिस अधीक्षक, कोटद्वार का पद सृजित हुआ है। वरिष्ठ पुलिस अधीक्षक, जिलाधिकारी से समन्वय सम्पर्क स्थापित कर अपराधों की रोकथाम, जाँच तथा अपराधियों के विरूद्व अभियोग पंजीकृत कर कार्यवाही सुनिश्चित की जाती है।

जनपद पौड़ी गढ़वाल के कस्बा कोटद्वार एवं कालागढ़ के क्षेत्र को छोड़कर सम्पूर्ण क्षेत्र पर्वतीय है।

कस्बा कोटद्वार उ0प्र0 के जनपद बिजनौर से लगा होने के कारण यह क्षेत्र अपराधिक दृष्टि से संवेदनशील है। संवेदनशीलता के दृष्टिगत कौंड़िया में चैक पोस्ट/बैरियर एवं सनेह में बैरियर तथा अन्य स्थानों पर गश्त एवं पिकेट की व्यवस्था के साथ ही क्षेत्र में रह रहे बाहरी लोगों के सत्यापन की कार्यवाही सुनिश्चित की जाती है। जनपद में सड़क दुर्घटनाओं पर प्रभावी नियंत्रण हेतु ड्रंकन ड्राईविंग, ओवर स्पीड, ओवर लोड की चैकिंग हेतु गिवांई श्रोत, दुगड्डा, गुमखाल, सतपुली, बुआखाल, पौड़ी चुंगी श्रीनगर, सबधरखाल, गरूड़चटटी, रामनगर तिराह धूमाकोट में नियमित रूप से चैकिंग की जा रही है।

जनपद की प्रमुख समस्यायें एवं सुझाव

समस्या

जनपद का अधिकतर भाग पहाड़ी क्षेत्र में है । दुर्गम पहाड़ी क्षेत्र होने के कारण अभी तक आने-जाने के पर्याप्त साधन नहीं हैं, जिसके कारण विकास कार्य सम्पादित करने में परेशानियों का सामना करना पड़ता है। पर्वतीय क्षेत्र होने के कारण यातायात की सुविधाओं से अभी तक अधिकतर ग्राम नहीं जुड़ पाये हैं, जिससे इन क्षेत्रों का समुचित विकास नहीं हो पाया है। जनपद में लोगों का मुख्य व्यवसाय कृषि है । इस क्षेत्र में वैज्ञानिक विधियों से कृषि कार्य करने व नई-नई प्रजातियों के बीजों व रसायनिक खाद, दवाईयां आदि की जानकारी अधिकतर कृषकों को न होने से कृषि उत्पादन कम है। इसके अलावा जनपद का अधिकांश भाग पर्वतीय है। छोटी-छोटी नदियों व गधेरों के किनारे की ही भूमि समतल है, जिसका प्रतिशत बहुत कम है। इन क्षेत्रों में ही अधिकतर सिंचाई की सुविधा उपलब्ध है तथा भूमि अन्य क्षेत्रों की अपेक्षा अधिक उपजाऊ है। उद्योगों के लिये कच्चा माल न मिलने या अधिक मूल्य पर कच्चा माल उपलब्ध होने के कारण उद्योग स्थापित नहीं हो पाते हैं। विद्युतीकरण एवं दूरसंचार की सुविधा से भी अभी तक अधिकतर ग्राम वंचित हैं। पेयजल के सम्बन्ध में यद्यपि अधिकतर ग्रामों में पेयजल की सुविधा उपलब्ध है तथापि गर्मियों में पेयजल स्रोत सूख जाने व पानी की मात्रा कम होने तथा वर्षात में योजनाओं के क्षतिग्रस्त होने से कतिपय ग्रामों में पेयजल की समस्या बनी रहती है। वर्षात् के दिनों में मार्गो /सड़कों के क्षतिग्रस्त हो जाने के कारण विकास कार्यो से जुड़े हुये अधिकारी/ कर्मचारी के लिये कई बार गन्तव्य स्थान तक पहुचना सम्भव नहीं हो पाता है या इसमें अत्याधिक समय व परेशानियां का सामना करना पड़ता है।

सुझाव

कृषि के सम्बन्ध में कृषकों को नवीन कृषि तकनीक की जानकारी देकर व उन्नतशील बीज, रासायनिक/ जैविक खाद के विषय में उचित जानकारी देकर कृषि उत्पादन में वृद्धि की जा सकती है। इसी प्रकार से नकदी फसलों को उत्पादित करने के लिये कृषकों को प्रोत्साहित किया जाना चाहिये। उद्यानीकरण के अन्तर्गत कृषकों का ध्यान आकर्षित करने हेतु गोष्ठियों व क्षेत्र भ्रमण करवाकर जानकारी दी जानी चाहिये। जिलें में उद्यानीकरण, सब्जी उत्पादन, फूलों के उत्पादन, दुग्ध उत्पादन के लिए वातावरण अनुकूल है। वर्तमान समय में स्वयं सहायता समूहों के माध्यम से इन सम्भावनाओं का समुचित लाभ उठाने के लिये प्रशासन, विकास एजेंसियों, बैकिंग संस्थाओं को मिलजुल कर कार्य करना चाहिये। जनता द्वारा उत्पादित माल की विक्रय की व्यवस्था की जानी चाहिये। जनपद के अन्तर्गत एक शीत भण्डार होना आवश्यक है। सरकार द्वारा स्वरोजगार परक योजनाओं में बेरोजगारों को आर्थिक सहायता दी जानी चाहिये। यातायात की सुविधाओं का अधिकाधिक विकास दूरस्थ वाले क्षेत्रों तक किया जाना चाहिये।

लोक सभा में गढ़वाल सांसद

1	1951–1957	भक्तदर्शन	आई.एन.सी.
2	1957–1962	भक्तदर्शन सिंह	आई.एन.सी.
3	1962–1967	भक्तदर्शन सिंह	आई.एन.सी.
4	1967–1971	भक्तदर्शन सिंह	आई.एन.सी.
5	1971–1977	प्रतापसिंह नेगी	आई.एन.सी.
6	1977–1980	जगन्नाथ शर्मा	जनता पार्टी
7	1980–1984	हेमवतीनंदन बहुगुणा	कांग्रेस आई
8	1984–1989	चन्द्रमोहन सिंह नेगी	कांग्रेस आई
9	1989–1991	चन्द्रमोहन सिंह नेगी	जनता दल
10	1991–1996	भुवन चन्द्र खण्डूरी	बीजेपी
11	1996–1998	सतपाल महाराज	कांग्रेस आई
12	1998–1999	भुवन चन्द खण्डूरी	बीजेपी
13	1999–2004	भुवन चन्द खण्डूरी	बीजेपी
14	2004–2007	भुवन चन्द खण्डूरी	बीजेपी
उपचुनाव			
	2007–2009	टी.पी.एस.	बीजेपी
15	2009–2014	सतपाल महाराज	आई.एन.सी.
16	2014–2019	भुवन चन्द खण्डूरी	बीजेपी
6	2019–वर्तमान	तीरथ सिंह रावत	बीजेपी

संयुक्त प्रान्त उत्तप्रदेश विधानसभा में गढ़वाल (पौड़ी)

1951

क्र.सं.	विधानसभा क्षेत्र	विधायक	दल
1	चमोली दक्षिण पौड़ी उत्तर	श्री गंगाधर मैठाणी	एस.पी.
2	चमोली उत्तर पौड़ी पूर्व	श्री चन्द्रसिंह रावत	कांग्रेस
3	लैंसडौन पूर्व	श्री रामप्रसाद नौटियाल	कांग्रेस
4	लैंसडौन पश्चिम	श्री जगमोहन सिंह नेगी	कांग्रेस

1957

1	श्री बदरीकेदार	श्री घनश्याम	निर्दलीय
2	श्री केदारनाथ	श्री नरेन्द्र सिंह भण्डरी	कांग्रेस
3	पौड़ी	श्री चन्द्रसिंह रावत	कांग्रेस
4	लैंसडौन	श्री रामप्रसाद नौटियाल	काग्रेस
5	गंगा सलाण	श्री जगमोहन सिंह नेगी	कांग्रेस

1962

(24 फरवरी 1960 को जनपद पौड़ी के उत्तरीभाग को नया जिला चमोली स्थापित किया गया)

1	पौड़ी	श्री चन्द्रसिंह रावत	कांग्रेस
2	लैंसडौन	श्री मुकुन्दीलाल	निर्दलीय
3	गंगा सलाण	श्री जगमोहन सिंह नेगी	कांग्रेस

1967

1	कर्णप्रयाग	श्री वाई प्रसाद	कांग्रेस
2	पौड़ी	श्री चन्द्र सिंह रावत	कांग्रेस
3	एकेश्वर	श्री आर प्रसाद	निर्दलीय
4	लैंसडौन	श्री भैरव दत्त धूलिया	एसडब्ल्यूए

1969

1	कर्णप्रयाग	श्री शेरसिंह दानू	जनसंघ
2	पौड़ी	श्री शिवानन्द नौटियाल	निर्दलीय
3	एकेश्वर	श्री मेहरबान सिंह	निर्दलीय
4	लैंसडौन	श्री चन्द्र मोहन सिंह नेगी	कांग्रेस

1974

1	कर्णप्रयाग	श्री शिवानन्द नौटियाल	कांग्रेस
2	पौड़ी	श्री भगवती चरण	कांग्रेस
3	लैंसडौन	श्री भारत सिंह रावत	कांग्रेस

1977

1	कर्णप्रयाग	श्री शिवानन्द नौटियाल	जनता पार्टी
2	पौड़ी	श्री भगवती चरण	जनता पार्टी
3	लैंसडौन	श्री भारत सिंह रावत	जनता पार्टी

1980

1	कर्णप्रयाग	श्री शिवानन्द नौटियाल	निर्दलीय
2	पौड़ी	श्री नरेन्द्र सिंह भण्डारी	निर्दलीय
3	लैंसडौन	श्री चन्द्रमोहन सिंह नेगी	कांग्रेस

1985

1	कर्णप्रयाग	श्री शिवानन्द नौटियाल	लोकदल
2	पौड़ी	श्री पुष्कर सिंह रौथाण	कांग्रेस
3	लैंसडौन	श्री सुरेन्द्र सिंह नेगी	कांग्रेस

1989

1	कर्णप्रयाग	श्री शिवानन्द नौटियाल	कांग्रेस
2	पौड़ी	श्री नरेन्द्र सिंह भण्डारी	जनता दल
3	लैंसडौन	श्री भारत सिंह रावत	कांग्रेस

1991

1	कर्णप्रयाग	श्री रमेश पोखरियाल	भाजपा
2	पौड़ी	श्री हरक सिंह रावत	भाजपा
3	लैंसडौन	श्री भारत सिंह रावत	कांग्रेस

1993

1	कर्णप्रयाग	श्री रमेष पोखरियाल निशंक	भाजपा
2	पौड़ी	श्री हरक सिंह रावत	भाजपा
3	लैंसडौन	श्री सुरेन्द्र सिंह नेगी	निर्दलीय

1996

1	कर्णप्रयाग	श्री रमेश पोखरियाल निशंक	भाजपा
2	पौड़ी	श्री मोहन सिंह रावत	भाजपा
3	लैंसडौन	श्री भारत सिंह रावत	भाजपा

नवोदित राज्य उत्तराखण्ड विधानसभा में जनपद पौड़ी गढ़वाल के विधायक

9 नवम्बर 2000(अन्तरिम विधान सभा)

1	कर्णप्रयाग	श्री रमेश पोखरियाल निशंक	भाजपा
2	पौड़ी	श्री मोहन सिंह गांववासी	भाजपा
3	लैंसडौन	श्री भारत सिंह रावत	भाजपा

2002 (निर्वाचित विधानसभा)

1	यमकेश्वर	श्रीमती विजया बड़थ्वाल	भाजपा
2	कोटद्वार	श्री सुरेन्द्र सिंह नेगी	आईएनसी
3	धूमाकोट	श्री तेजपाल सिंह रावत	आईएनसी
4	बीरोखाल	श्रीमती अमृता रावत	आईएनसी
5	लैंसडौन	डॉ0 हरक सिंह रावत	आईएनसी
6	पौड़ी	नरेन्द्र सिंह भण्डारी	आईएनसी
7	श्रीनगर(एस सी)	सुन्दरलाल मन्द्रवाल	आईएनसी
8	थैलीसैंण	गणेश प्रसाद गोदियाल	आईएनसी

2007

1	यमकेश्वर	श्रीमती विजया बड़थ्वाल	भाजपा
2	कोटद्वार	श्री शैलेन्द्र सिंह रावत	भाजपा
3	धूमाकोट	श्री तेजपाल सिंह रावत	आईएनसी
	धूमाकोट	श्री मेजर जनरल भुवन	भाजपा
4	बीरोखाल	श्रीमती अमृता रावत	आईएनसी
5	लैंसडौन	डॉ0 हरक सिंह रावत	आईएनसी
6	पौड़ी	यशपाल बेनाम	आईएनडी
7	श्रीनगर	बृजमोहन कोटवाल	भाजपा
8	थैलीसैंण	रमेश पोखरियाल निशंक	भाजपा

2012

1	यमकेश्वर	श्रीमती विजया बड़थ्वाल	भाजपा
2	कोटद्वार	श्री सुरेन्द्र सिंह नेगी	आईएनसी
3	चौबट्टाखाल	श्री तीरथ सिंह	भाजपा
4	लैंसडौन	श्री दलीप सिंह रावत	भाजपा
5	पौड़ी(एस सी)	श्री सुन्दर लाल मन्द्रवाल	आईएनडी
6	श्रीनगर	श्री गणेष गोदियाल	आईएनडी

2017

1	यमकेश्वर	श्रीमती ऋतु खण्डूडी	भाजपा
2	कोटद्वार	डा0 हरक सिंह रावत	भाजपा
3	चौबट्टाखाल	श्री सतपाल महाराज	भाजपा
4	लैंसडौन	श्री दलीप सिंह रावत	भाजपा
5	पौड़ी (एस सी)	श्री मुकेश कोली	भाजपा
6	श्रीनगर	डा0 धनसिंह रावत	भाजपा

गढ़वाल का संक्षिप्त इतिहास

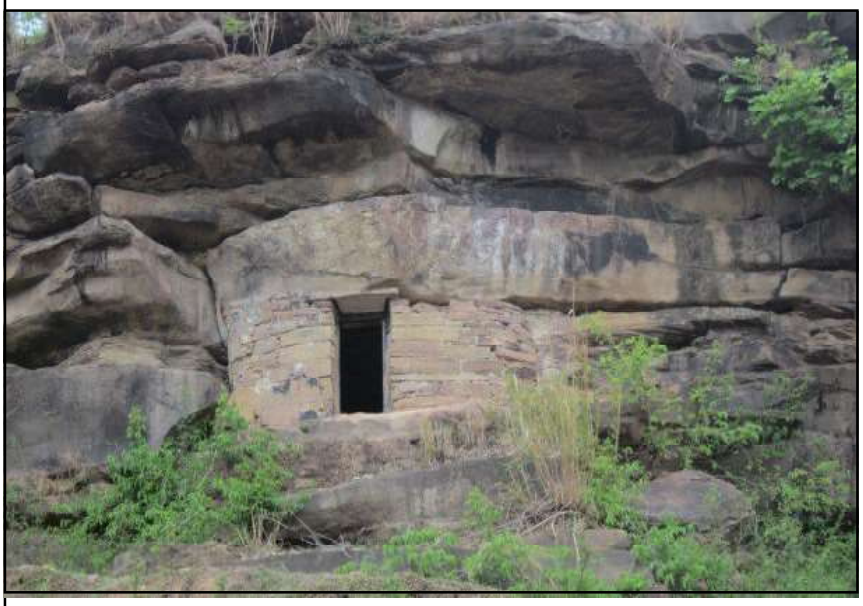

इतिहास (History) ग्रीक शब्द historia से बना है जिसका अर्थ है जांच अर्थात खोजबीन से प्राप्त जानकारी इतिहास कहलाती है। दूसरे शब्दों में भूतकाल की बातों की खोज एवं संग्रह कर संगठित रूप में प्रस्तुतीकरण इतिहास कहलाता है। इतिहास से हमें भूतकाल की सामाजिक, आर्थिक, राजनैतिक, धार्मिक एवं सांस्कृतिक पहलुओं की विस्तृत जानकारी प्राप्त होती है। जिससे हम भविष्य का मार्ग तय करते हैं।

गढ़वाल क्षेत्र में मानव की उपस्थिति उतनी ही प्राचीन है जितनी शेष भारत की, लेकिन अपनी सादगी और प्रचार-प्रसार की सोच से दूर भाटगिरी को नापसन्द करना शायद इस क्षेत्र के 780 ई0 तक के मुखियाओं की प्रवृत्ति रही होगी, इसलिए इससे पहले का इतिहास किसी भी इतिहासवेत्ता को उपलब्ध नहीं हो पाया। इसलिए यहां के प्राचीन इतिहास को जानने के लिए विभिन्न धार्मिक अथवा साहित्यिक पुस्तकों में इस क्षेत्र से सम्बन्धित उद्धरणों, यात्रियों के विवरणों एवं पुरातात्विक स्रोतों पर आश्रित होना पड़ता है। अमेरिका के एक विद्वान डेविड फ्रेनी ने अपनी पुस्तक 'वैदिक एस्ट्रॉलाजी एण्ड क्रिएटिव विजन ऑफ अर्ली उपनिषद' में कहा है कि यहां पर ईसा से तीन हजार साल पहले ताम्र और लौहयुगीन संस्कृति अस्तित्व में रही होगी। चमोली जिले के डुमरी गांव के समीप गोरखा उड्यार से प्रागैतिहासिक चित्रों की प्राप्ति से इस क्षेत्र में पाषाणकाल से ही मानव की उपस्थिति प्रमाणित होती है। कुछ इतिहासकार तो ऋग्वेद में वर्णित सप्तसिन्धु को यहां की अलकनन्दा व उसकी सहायक नदियों को मानते हुए इसे आर्यों का मूल प्रदेश तक मानते हैं।

रामायण और महाभारत काल की सभ्यता की जानकारी भले लिखित इतिहास के रूप में उपलब्ध नहीं है किन्तु लोकगाथाओं और किंवदंतियों से जान पड़ता है कि उनके अनेक पात्र गढ़वाल में आए थे या यहीं पर क्रिया कलाप हुए होंगे। आज के गढ़वाल जनपद के कोट ब्लॉक की सितोनस्यूं पट्टी के देवल में आज भी किवदंती है कि माता सीता ने यहां पर धरती माता की गोद में समाकर इस लोक से पलायन किया था। भूमि के ऊपर उनके छूटे बालों की आज भी पूजा होती है। देहरादून को द्रोणाचार्य की नगरी भी कहा जाता है। जनपद उत्तरकाशी में प्रचलित लाक्षागृह जो खुदाई के बाद मिला, महाभारत काल की सभ्यता को उजागर करता हुआ बताया गया है। स्कन्दपुराण में इस क्षेत्र को केदारखण्ड कहा गया है तथा इसका विस्तार तक बतलाया गया है। केदारखण्ड में टिहरी जिले के बिसान गांव के निकट वशिष्ठ गुफा एवं कुण्ड स्थित होने का विवरण है। किरातार्जुनीय के अनुसार श्रीनगर के निकट स्थित बिल्वकेदार में किरात रूप शिवजी एवं अर्जुन के बीच युद्ध हुआ था। महाभारत में वर्णित किरातों के राजा सुबाहु की राजधानी श्रीपुर (श्रीनगर) बताई गई है। महाभारत में वर्णित बाणासुर की पुत्री ऊषा व भगवान श्रीकृष्ण के पौत्र अनिरुद्ध की प्रेमगाथा का साक्षी ऊखीमठ है। पाण्डवों का स्वर्गारोहण के लिए इस क्षेत्र में आना, कालिदास के रघुवंशम् में इस क्षेत्र में निवास करने वाली किरात जाति से राजा रघु के युद्ध का वर्णन, अभिज्ञानशाकुन्तलम में कण्वाश्रम का उल्लेख, परवर्ती बौद्ध साहित्य में भगवान बुद्ध का इस क्षेत्र में भ्रमण (हरिद्वार एवं सुघ्ननगर) का उल्लेख प्राचीन काल में भी इस क्षेत्र के महत्व के साक्षी है। साफ है कि इस क्षेत्र की प्राचीनता को लेकर किसी प्रकार का संदेह नहीं किया जा सकता है। यहां की संस्कृति उतनी ही प्राचीन है जितनी कि शेष भारतवर्ष की। मौर्यकाल से पूर्व तक यहां कोल, किरात, खश एवं शक आदि जातियों का आगमन हो चुका था। मौर्यकाल में यह क्षेत्र सम्राट अशोक के अधीन रहा इसका प्रमाण कालसी शिलालेख

यद्यपि हम यहां आज के गढ़वाल जनपद का इतिहास देना चाहते है किन्तु इतिहास ऐसा है कि यह मध्य हिमालय, गढ़वाल मण्डल, ब्रिटिश गढ़वाल से होते हुए 1840 के जिला गढ़वाल के रास्ते 1960 में चमोली को तथा 1997 में रूद्रप्रयाग को छोड़ते हुए आज के गढ़वाल तक चलना हमारी मजबूरी है।

है। इस क्षेत्र में दूसरी शताब्दी ईसा पूर्व से लेकर तीसरी शताब्दी तक कुणिन्द साम्राज्य का अस्तित्व रहा। विभिन्न क्षेत्रों से प्राप्त कुणिन्दकालीन सिक्कों से इसकी पुष्टि होती है। चांदी के बने इन सिक्कों पर कुणिन्द राजाओं के नाम के साथ-साथ स्तूप व त्रिरत्न के चिह्न अंकित हैं। डॉ0 शन्तनसिंह नेगी कृत 'मध्य हिमालय का राजनीतिक एवं सांस्कृतिक इतिहास' में श्रीनगर के समीप सुमाड़ी ग्राम एवं अल्मोड़ा से कुणिन्दकालीन सिक्के मिलने का उल्लेख है। बौद्ध ग्रन्थों में हरिद्वार के निकटवर्ती स्थान का उल्लेख उशीरगिरि के नाम से किया गया है जहां बौद्ध धर्म के विद्वानों का निवास था। यह सब उस दौरान इस क्षेत्र पर बौद्ध धर्म का प्रभाव होना दिखलाता है। जब गुप्तकाल के दौरान यहां नागवंशी शासकों का राज था। बाड़ाहाट (उत्तरकाशी) व गोपेश्वर के त्रिशूल अभिलेखों से भी इस क्षेत्र पर नागवंशी शासकों के शासन की पुष्टि होती है। प्रयागप्रशस्ति के अनुसार समुद्रगुप्त ने कुर्तपुर पर विजय प्राप्त की थी। गुप्तों के शासनकाल में यहां धीरे-धीरे बौद्ध धर्म का ह्रास हुआ तथा वैष्णव ध र्म का उत्थान हुआ। इसी काल में यहां गुप्तकालीन प्रभाव वाले विभिन्न विष्णु, शिव व शक्ति तथा सूर्य देव के मन्दिरों का निर्माण बड़े पैमाने पर हुआ। गुप्त नरेशों की शक्ति का ह्रास होने पर कुछ काल तक के लिए इस क्षेत्र पर हूणों का वर्चस्व रहा। यशोवर्मन के 'मन्दसौर अभिलेख' गंगाजी के स्रोत प्रदेश पर हूणों का अधिकार होने की जानकारी देता है। शिवप्रसाद डबराल कृत 'उत्तराखण्ड का इतिहास' के अनुसार सन् 633 ई0 से पूर्व हर्ष का सुघ्न नगर व ब्रह्मपुर पर अधि कार हो चुका था। सातवीं शताब्दी में चाइनीज यात्री हवेनसांग ने इस क्षेत्र का भ्रमण किया था तथा अपने यात्रा वृतान्तों में ब्रह्मपुर साम्राज्य के अस्तित्व का उल्लेख किया था। अल्मोड़ा के 'तालेश्वर ताम्रशासन' से 5 पौरव नरेश के नाम मिलते हैं जिनकी राजधानी ब्रहमपुर थी।

पं० हरिकृष्ण रतूड़ी द्वारा रचित 'गढ़वाल का इतिहास' में दी गई **58** गढ़ों की सूची

1. नागपुरगढ़	2. कोल्लीगढ़	3. रवाड़गढ़	4. फल्याणगढ़
5. बांगरगढ़	6. कुईलीगढ़	7. भरपूरगढ़	8. कुजणीगढ़
9. सिलगढ़	10. मुंगरागढ़	11. रैकागढ़	12. मोल्यागढ़
13. उप्पुगढ़	14. नालागढ़	15. सांकरीगढ़	16. रामीगढ़
17. बिराल्टागढ़	18. चांदपुरगढ़	19. चौण्डागढ़	20. तोपगढ़
21. राणीगढ़	22. श्रीगुरूगढ़	23. बधाड़गढ़	24. लोहबागढ़
25. दशोलीगढ़	26. कण्डारागढ़	27. धौनागढ़	28. रतनगढ़
29. एरासूगढ़	30. इडियागढ़	31. लंगूरगढ़	32. बागगढ़
33. गढ़कोटगढ़	34. गडतांगगढ़	35. बनगढ़गढ़	36. भरदारगढ़
37. चौंदकोटगढ़	38. नयालगढ़	39. अजमीरगढ़	40. कांडागढ़
41. सावलीगढ़	42. बदलपुरगढ़	43. संगेलागढ़	44. गुजड़गढ़
45. जौंटगढ़	46. देवलगढ़	47. लोदगढ़	48. जौंलपुरगढ़
49. चम्पागढ़	50. डोडरा क्वाँरागढ़	51. भुवनागढ़	52. लोदनगढ़

कत्यूरी राज

पौरववंश के पतन के पश्चात कत्यूरी राजवंश का अभ्युदय हुआ। राहुल सांस्कृत्यायन कृत 'हिमालय परिचय' के अनुसार सन् 850 ई0 के इर्द-गिर्द कत्यूरी राजवंश ने हिमालय में अपना राज्य स्थापित कर लिया था। राहुल सांस्कृत्यायन तथा एटकिंसन ने वासुदेव को कत्यूरी वंश का संस्थापक माना है। कत्यूरी शासन के दौरान ही नौवीं शताब्दी में दक्षिण भारत के शंकराचार्य ने इस क्षेत्र का भ्रमण किया तथा ज्योर्तिमठ की स्थापना की। सम्भवत: बद्रिकाश्रम के जीर्णोद्धार में कत्यूरी नरेशों ने भी सहायता प्रदान की थी। इस वंश के शासकों ने प्रारम्भ में अपनी राजधानी कार्तिकेयपुर (जोशीमठ) में स्थापित की, किन्तु उत्तरवर्ती कत्यूरी नरेशों ने राजधानी बैजनाथ में स्थानान्तरित कर ली थी। शिवप्रसाद डबराल के अनुसार सन् 1000 ई0 में नरसिंहदेव कत्यूरी ने अपनी राजधानी बैजनाथ में स्थापित की थी। 12वीं शताब्दी के दौरान इस क्षेत्र पर अशोकचल्ल का आक्रमण हुआ। शिवप्रसाद डबराल कृत 'उत्तराखण्ड का इतिहास' के विवरणानुसार अशोकचल्ल की राजधानी गोपेश्वर थी तथा सन् 1191 ई0 से सन् 1207 ई0 तक सारे उत्तराखण्ड व पश्चिमी नेपाल तक इस नरेश का अधिकार हो गया था। 'वालेश्वर ताम्रशासन' के अनुसार सन् 1223 ई0 में इस क्षेत्र पर क्राचल्लदेव ने अधिकार कर लिया था। इसका शासन तेरहवीं शताब्दी के मध्य समाप्त हो गया था।

तेरहवीं शताब्दी के मध्य क्राचल्लदेव के पतन के उपरान्त गढ़वाल क्षेत्र में धीरे-धीरे अराजकता फैलने लगी और यह क्षेत्र छोटे-छोटे ठकुराई राज्यों (गढ़ों) में बंट गया। इन गढ़ों के शासकों को गढ़पति कहते थे। इन्होने ऊंचे स्थानों पर दुर्गों का निर्माण किया। इन गढ़ों के खण्डहर आज भी कई स्थानों पर मौजूद हैं। प0 हरिकृष्ण रतूड़ी ने इन गढ़ों की संख्या 52 बताई है। इन गढ़ों के गढ़पति आपस में लड़ते-झगड़ते रहते थे।

कनकपाल द्वारा पंवारवंश की स्थापना

ठाकुराई राजाओं में चांदपुरगढ़ का राजा भानुप्रताप था। उनकी दो पुत्रियां थी। उन्होंने अपनी छोटी पुत्री का विवाह बद्रीनाथ यात्रा पर जा रहे मालवा के धारानगरी के राजकुमार कनकपाल से कर दिया तथा उसका राजतिलक कर स्वयं रानी सहित बद्रिकाश्रम चले गए। लोक अनुश्रुति के अनुसार गढ़नरेश भानुप्रताप को भगवान बद्रीनाथ ने स्वप्न में आदेश दिया था कि बद्रीनाथ की यात्रा पर आये हुए राजकुमार (कनकपाल) से अपनी पुत्री का विवाह कर दो, इसी से तुम्हारा वंश चलेगा। इस प्रकार नौवीं शताब्दी में (पं0 हरिकृष्ण रतूड़ी ने कनकपाल के राज्यरोहण की तिथि सन् 888 ई0 बताई है।) चांदपुरगढ़ नरेश के रूप में कनकपाल द्वारा पंवार वंश की स्थापना की गई। पं0 हरिकृष्ण रतूड़ी कृत 'गढ़वाल का इतिहास' के विवरणानुसार सन् 875 ई0 में धारा की गद्दी पर बैठने वाले वाक्पति पंवार का कनकपाल विमातु छोटा भाई था। मौलाराम एवं भरतकवि आदि विद्वानों ने इस वंश के शासकों को चन्द्रंवशी कहा है। राजावलियों में पंवारवंश का 34वां राजा जगतपाल बताया गया है। 'देवप्रयाग ताम्रशासन' में जगतपाल का विवरण प्राप्त होने से उसकी ऐतिहासिकता प्रमाणित होती है। इस अभिलेख में जगतपाल की तिथि सन् 1455 ई0 बताई गई है। एटकिंसन (द हिमालय गजेटियर) के विवरणानुसार जगतपाल अजयपाल का प्रपितामह था।

अजयपाल द्वारा ठकुराई राज्यों का एकीकरण

चन्द्रवंशी पंवार नरेशों के वंशज अजयपाल सन् 1500 ई0 (पं0 हरिकृष्ण रतुड़ी व शिवप्रसाद डबराल ने अजयपाल के राज्यरोहण की तिथि 1500 ई0 मानी है।) में चांदपुरगढ़ की गद्दी पर बैठा। बैकेट द्वारा प्रस्तुत वंशावली तथा मौलाराम कृत 'गढ़राजवंश काव्य' में अजयपाल को वंशक्रम में 37वां नरेश माना गया है। उनके राज्यरोहण से पूर्व तक यह क्षेत्र छोटे-छोटे ठकुराई राज्यों में विभक्त था। अजयपाल ने धीरे-धीरे इन समस्त ठकुराई राज्यों (गढ़ों) को पराजित कर एकीकृत गढ़वाल राज्य की स्थापना की। हालांकि उप्पूगढ़ के गढ़पति 'कफ्फू चौहान' को हराने में अजयपाल को कड़ी मशक्कत करनी पड़ी थी। अपनी वीरता के कारण 'कफ्फू चौहान' का नाम आज भी सम्मान से लिया जाता है। अजयपाल के पूर्ववर्ती शासकों की राजधानी चांदपुरगढ़ी थी किन्तु कुमायूं नरेश कीर्तिचन्द के आक्रमण के उपरान्त अजयपाल ने अपनी राजधानी देवलगढ़ स्थानान्तरित कर ली। कुछ समय के उपरान्त अजयपाल द्वारा श्रीनगर में नई राजधानी की स्थापना की गई। हार्डविक के अनुसार अजयपाल ने छोटी-छोटी ठकुराईयों को जीतकर गढ़वाल राज्य की स्थापना करके अपने राज्य के मध्य श्रीनगर में अपनी राजधानी की स्थापना की जो उसके वंश के 60वें नरेश 'प्रद्युम्नशाह' के शासनकाल तक बनी रही। रामायण-प्रदीप में भी अजयपाल को श्रीनगर स्थापना का श्रेय दिया गया है। अजयपाल द्वारा श्रीनगर में विशाल एवं भव्य राजप्रासाद का निर्माण कराया गया। नाप तौल की एक समान पद्धति के लिए अजयपाल द्वारा एक निश्चित माप का पाथा (2 किलोग्राम) प्रचलित किया गया। अजयपाल एक महान विजेता होने के साथ-साथ उच्चकोटि का राजनीतिज्ञ एवं कुशल शासक भी था। उसने विजित गढ़ों के गढ़पतियों को जागीरें, थोकदारियां एवं उच्च पद प्रदान कर अपनी शक्ति में वृद्धि की तथा राज्य की सीमाओं का निर्धारण कर अपने राज्य का नाम गढ़वाल रखा। उनके शासनकाल में गढ़वाल एक शक्तिशाली राज्य बन गया तथा राज्य के भीतर सर्वत्र शान्ति छाई रही। यदि अजयपाल को गढ़वाल राज्य का वास्तविक संस्थापक कहा जाय तो कोई अतिशयोक्ति नहीं होगी।

बलभद्रशाह अजयपाल की मृत्यु के बाद उसका पुत्र सहजपाल तथा उसके बाद बलभद्रशाह गढ़देश की गद्दी पर बैठा। बलभद्रशाह (सोलहवीं शताब्दी) पहला गढ़वाल नरेश था, जिसने शाह पदवी धारण की उससे पूर्ववर्ती गढ़नरेशों के नामान्त में पाल शब्द जोड़ने की प्रथा थी। यद्यपि अनुश्रुतियों के अनुसार दिल्ली के मुगल बादशाह द्वारा गढ़नरेश को शाह की उपाधि प्रदान की गई थी किन्तु इस बात की संभावना ज्यादा है कि बलभद्रशाह के शासनकाल के समय समस्त भारतवर्ष के राजपूत राजाओं में शाह पदवी लगाने की प्रथा प्रचलन में आ गई थी लिहाजा बलभद्रशाह द्वारा नामान्त में शाह शब्द जोड़ना प्रारम्भ किया होगा। बलभद्रशाह के शासनकाल के दौरान कुमायूं के साथ बधाण गढ़ का युद्ध हुआ जिसमें कुमायूंनी सेना को परास्त होना पड़ा तथा उनका सेनापति पुरूषोत्तम पंत मारा गया। वाल्टन (अल्मोड़ा गजेटियर) ने बधाण गढ़ यद्ध की तिथि सन् 1581 ई0 दी है।

मानशाह बलभद्रशाह के उपरान्त मानशाह राजगद्दी पर बैठा। भरतकवि ने मानशाह को सहजपाल का पुत्र बताया है। देवप्रयाग स्थित क्षेत्रपाल के मन्दिर के शिलालेख एवं रघुनाथ मन्दिर के अभिलेखों से मानशाह की ऐतिहासिकता प्रमाणित होती है। रामायण प्रदीप के विवरणानुसार मानशाह ने छपराड. के युद्ध में दावा के नरेश को परास्त किया था तथा उसके महल में लगे स्वर्णकलशों को उठा लाया था तथा उन्हें कालीमठ के मन्दिर में अर्पित कर दिया था।

मानशाह एवं कुमायूं के राजा लक्ष्मीचन्द के बीच कई बार युद्ध हुआ जिसमें लक्ष्मीचंद को भारी क्षति उठानी पड़ी थी। 'मानोदय काव्य' के अनुसार मानशाह ने श्रीनगर के एक भाग में अलकनन्दा के तट पर राजधानी स्थापित की थी और उसका नाम मानपुर रखा। भरतकवि, मानशाह का दरबारी कवि था भरतकवि द्वारा 'मानोदय काव्य' की रचना की गई जो कि उसके संस्कृत विद्वान एवं महान रचनाकार होने का स्पष्ट प्रमाण है। 'मानोदय काव्य' साहित्यिक दृष्टिकोण से एक महान कृति है इसमें अलंकारों एवं छन्दों का प्रयोग बड़ी कुशलता के साथ किया गया है। भरत कवि होने के साथ-साथ एक कुशल ज्योतिषी भी थे। जिसके कारण उनका सम्मान मुगल दरबार तक में था।

ऐसा समझा जाता है कि बादशाह द्वारा उन्हें 'ज्योतिषराय' की उपाधि दी गई थी। भरत कवि का जन्म गढ़वाल जिले के पुष्करगांव में हुआ था। अपनी विद्वता के बल पर भरत को मानशाह के दरबार में मंत्रीपद हासिल हुआ था।

श्यामशाह मानशाह की मृत्युपरान्त उसका पुत्र श्यामशाह गद्दी पर बैठा। उसके शासनकाल के सम्बंध में शंकर गुरू कृत 'वास्तुशिरोमणि', मौलाराम कृत 'गढ़राजवंशकाव्य', विदेशी यात्रियों के विवरण एवं देवप्रयाग से प्राप्त श्यामशाह के ताम्रपत्र से जानकारी प्राप्त होती है। राहुल सांस्कृत्यायन के 'हिमालय परिचय' के अनुसार श्यामशाह ने तिब्बत पर आक्रमण कर उन्हें पराजित किया था तथा प्रतिवर्ष कर देने हेतु मजबूर किया था। शंकर गुरू मानशाह के दरबार में राजकवि था। ये संस्कृत के प्रकाण्ड विद्वान एवं ज्योतिष के ज्ञाता थे। इन्होने 'वास्तुशिरोमणि' ग्रन्थ की रचना की। राहुल सांस्कृत्यायन एवं प0 हरिकृष्ण रतूड़ी ने इस शासक को जिद्दी एवं घमण्डी शासक बतलाया है।

महीपतिशाह हरिकृष्ण रतूड़ी के विवरणानुसार श्यामशाह की कोई सन्तान नहीं थी इस कारण से उसका चाचा महीपतिशाह उसके उपरान्त गद्दी पर बैठा। महीपति शाह (सन् 1624 ई0 से 1631 ई0) ने अपने शासनकाल के दौरान योग्य सेनापतियों की नियुक्ति, सैन्य विस्तार व सैन्य व्यवस्था का सुधार करके गढ़वाल साम्राज्य की सीमाओं में विस्तार कर उसे स्थायित्व प्रदान किया।

उसने अपने शासनकाल के दौरान चार प्रमुख सेनापतियों रिखौला लौदी, माधोसिंह भण्डारी, बनवारी दास तुंवर व दोस्तवेग मुगल की नियुक्ति की। महीपतिशाह ने अपने शासनकाल मे दावा (तिब्बत), सिरमौर व कुमायूं पर विजय प्राप्त की थी। हरिकृष्ण रतूड़ी के अनुसार

महीपतिशाह के शासनकाल में सेनापति माधोसिंह भण्डारी ने तिब्बत राज्य के साथ सीमा निर्धारण हेतु चबूतरों का निर्माण कराया जिनमें से कई अभी तक पाए जाते हैं। मौलाराम के अनुसार ऋषिकेश से हरिद्वार जाते हुए महीपतिशाह को मार्ग में अस्त्र-शस्त्रधारी नागा साधु मिले राजा ने क्रोधित होकर उन्हें कत्ल करवा दिया था। महीपतिशाह विद्वानों और वीरों का आश्रयदाता था। उसने तुंवर सैनिकों एवं पठानों को अपनी सेना में स्थान दिया था। उसने श्रीनगर में महिषमर्दिनी के मन्दिर की स्थापना की थी।

रानी कर्णावती
(नक-कट्टी रानी)

महीपतिशाह की मृत्यु के उपरान्त उसका अवयस्क पुत्र पृथ्वीपतिशाह सन् 1631 में गद्दी पर बैठा। 'रामायण प्रदीप' एवं 'गढ़राजवंश काव्य' में पृथ्वीपतिशाह को महीपतिशाह का पुत्र बतलाया गया है। राजकुमार की अवयस्कता के कारण रानी कर्णावती ने उसकी संरक्षिका के रूप में शासन चलाना प्रारम्भ किया।

मुस्लिम इतिहासकारों ने इस रानी का नक-कट्टी रानी के नाम से उल्लेख किया है। ब्रजरत्नदास के अनुसार जो कोई उसकी आज्ञा की अवहेलना करता था, वह उसकी नाक कटवा देती थी फलस्वरूप वह 'नक-कट्टी रानी' के नाम से प्रसिद्ध हो गई थी। उसके शासन के दौरान मुगल बादशाह ने नजाबत खां के नेतृत्व में गढ़देश पर आक्रमण हेतु सेना भेजी। यद्यपि मुगल सेना को प्रारम्भ में कुछ सफलता प्राप्त हुई किन्तु अन्ततः रानी ने अपनी रणनीतिक चातुर्य से मुगलसेना को हराकर भागने के लिये मजबूर कर दिया। एटकिंसन के अनुसार रानी कर्णावती ने दूध ातोली के निकट स्थित बिनसर महादेव मन्दिर में मण्डप का निर्माण करवाया था। उसने अपने राज्य के विभिन्न हिस्सों में नहरों व तालाबों का निर्माण करवाया व देहरादून में करणपुर शहर की स्थापना की।

पृथ्वीपतिशाह पृथ्वी पतिशाह ने 1640 ई0 के उपरान्त स्वतन्त्र रूप से शासन की बागडौर अपने हाथों में ले ली। उसके शासन के दौरान सिरमौर के साथ युद्ध हुआ जिसमें गढ़सेना की हार हुई। डॉ0 शन्तन सिंह नेगी कृत 'मध्य हिमालय का राजनीतिक एवं सांस्कृतिक इतिहास' के उल्लेखानुसार इस यृद्ध में महान सेनापति माधोसिंह भण्डारी का देहावसान हुआ था। दिल्ली के बादशाह शांहजहां के पुत्रों में सत्ता के लिये चल रहे संघर्ष के दौरान दाराशिकोह के पुत्र सुलेमान शिकोह ने गढ़नरेश से शरण मांगी तो इस पर गढ़नरेश पृथ्वीपतिशाह ने उसे ससम्मान शरण देते हुए उसकी रक्षा का विश्वास दिलाया। पृथ्वीपतिशाह ने अपने वचन को निभाया किन्तु उसके पुत्र मेदिनीशाह ने षडयंत्र रचकर सुलेमान शिकोह को औरंगजेब को सौंप दिया तथा बादशाह का कृपापात्र बन गया। मुस्लिम इतिहासकारों के अनुसार औरंगजेब ने मेदिनीशाह को 2000 जात व 1000 सवार का मनसबदार नियुक्त किया था। मेदिनीशाह ने सुलेमान के साथ आये केहरदास व श्यामदास जैसे चित्रकारों को शरण देकर श्रीनगर में ही बसा लिया। उन्हीं के वंशज मौलाराम हुए। आज भी मौलाराम के वंशज श्रीनगर में तुंवर (तोमर) जाति के माने जाते हैं। मेदिनीशाह द्वारा सुलेमान को औरंगजेब को सौंपने की घटना से पृथ्वीपतिशाह को अत्यधिक दुःख हुआ और उसने अपने पुत्र के स्थान पर अपने पौत्र फतेहशाह को उत्तराधिकारी घोषित कर दिया। हरिकृष्ण रतूड़ी के विवरणानुसार पृथ्वीपतिशाह ने देहरादून के निकट पृथ्वीपुर नामक नगर की स्थापना की तथा इसके निकट ही एक दुर्ग का भी निर्माण करवाया था।

फतेपतिशाह कुछ इतिहासकारों का मत है कि पृथ्वीपतिशाह ने अपने जीवनकाल में ही फतेहशाह (फतेपतिशाह) को गद्दी सौंप दी थी तथा स्वयं उसके संरक्षक के रूप में कार्य किया। अल्मोड़ा सूची, वाल्टन एवं राहुल सांस्कृत्यायन के अनुसार फतेहशाह की राज्यावधि सन् 1684 ई0 से सन् 1716 ई0 है। टिहरी गढ़वाल राजवंशावली के अनुसार सन् 1693 ई0 में फतेहशाह ने बैराटगढ़ को जीता था। फतेहशाह ने अपने शासनकाल के दौरान गुरू रामराय के दून प्रदेश आने पर खुड़बुड़ा, राजपुर और चामासारी नामक तीन ग्राम गुरूमन्दिर को प्रदान किए। इनसे प्राप्त होने वाली आय से गुरू रामराय अपने परिवार का निर्वहन करते थे। गुरू रामराय सिक्खों के गुरू हरराय के पुत्र थे। गुरू हरराय के बाद उनका कनिष्ठ पुत्र हरकृष्ण गुरू बन गये। किन्तु इसके बावजूद सिक्ख जनता का एक भाग रामराय को अपना गुरू मानता था। गुरू रामराय द्वारा दून के खुड़बुड़ा में डेरा डालने तथा उसके निकट धामूवाला में गुरू दरबार स्थापित करने से उनके अनुयायियों ने वहां आकर बसना प्रारम्भ कर दिया था। इस स्थान पर गुरू के डेरा डालने के कारण ही यह क्षेत्र डेरादून (देहरादून) नाम से प्रसिद्ध हो गया। फतेहशाह के शासनकाल के दौरान सन् 1688 ई0 में पहाड़ी राजाओं की मिलजुली शक्ति व गुरू गोविन्द सिंह के बीच भंगाड़ी का युद्ध हुआ। गुरू गोविन्द सिंह की आत्मकथा 'विचित्र नाटक' के उल्लेखानुसार इस युद्ध में पहाड़ी राजाओं की पराजय हुई। पुरिया नैथानी, फतेहशाह का सुप्रसिद्ध राज्याधिकारी था। फतेहशाह विद्वानों का आश्रयदाता था। उसके दरबार में संस्कृत व ज्योतिष के प्रकाण्ड विद्वान रहते थे। जटाधर, राजदरबार का महान ज्योतिषाचार्य था। उसके द्वारा 'फतेशाह प्रकाशकरण' की रचना की गई। दरबारी कवि रामचन्द्र कंडियाल ने 'फतेपतिशाह यशोवर्णन' नामक ग्रन्थ लिखा।

राणीराज फतेहशाह की मृत्यु के बाद उपेन्द्रशाह गढ़नरेश हुआ। मौलाराम ने उपेन्द्रशाह की राज्यावधि 9 माह बतलाई है। उपेन्द्रशाह के उपरान्त प्रदीपशाह गद्दी पर बैठा। अल्मोड़ा सूची एवं राहुल सांस्कृत्यायन के अनुसार प्रदीपशाह की राज्यावधि सन् 1717 ई0 - 1772 ई0 थी। राज्यरोहण के समय प्रदीपशाह के अवयस्क होने के कारण इसकी माता ने संरक्षिका के रूप में शासन की बागडौर अपने हाथों में ले ली। मौलाराम ने इस समय के शासनकाल को 'राणीराज' कहा है। राणीराज में गुटबाजी हावी हो गई थी। रानी पर अपने पांच भाई कठोचों का विशेष प्रभाव था। इन्होने रानी का विश्वास प्राप्त कर प्रजा पर अनेक नये कर लगा दिए, जिनमें स्यूंदी-सुप्पाकर, चूल्हाकर आदि प्रमुख थे। इन करों से प्रजा असंन्तुष्ट थी। प्रजा में इनके खिलाफ आक्रोश इतना ज्यादा बढ़ा कि अन्ततः उन्होने इन्हें घेरकर मार डाला। पांच भाई कठौचों के बध के बाद अव्यवस्था का लाभ उठाते हुये कठैतों ने प्रमुख पदों पर अधि

कार करना शुरू कर दिया तथा अपनी शक्ति बढाने के उद्देश्य से बालक राजा की हत्या का षडयन्त्र रचने लगे। इस दौरान पुरिया नैथानी ने बालक राजा प्रदीप शाह को अपने संरक्षण में रखा।

प्रदीपशाह

डा0 शन्तन सिंह नेगी कृत 'मध्य हिमालय का राजनीतिक एवं सांस्कृतिक इतिहास' के उल्लेखानुसार सन् 1730 ई0 में प्रदीपशाह ने पूर्ण सत्ता अपने हाथों में ले ली। कुमायूं के साथ हुए तामाढ़ौड़ के युद्ध में गढ़नरेश को पराजय का सामना करना पड़ा था तथा गढ़सेना के सेनापति नरपतिसिंह गुलेरिया को जान से हाथ धोना पड़ा। प्रदीपशाह के शासनकाल के दौरान ही सहारनपुर के फौजदार नजीब-उ-दौला ने सन् 1757 ई0 में दून पर अपना अधिकार कर लिया। प्रदीपशाह ने मेधाकर शास्त्री एवं मौलाराम जैसे विद्वानों को आश्रय प्रदान किया था। मेधाकर शास्त्री ने 'रामायण प्रदीप' की रचना की जबकि मौलाराम 'गढराजवंश काव्य' का रचियता तथा प्रसिद्ध चित्रकार था।

ललितशाह प्रदीपशाह की मृत्यु के उपरान्त उसका पुत्र ललितशाह गद्दी पर बैठा। अल्मोड़ा सूची, वैकेट एवं राहुल सांस्कृत्यायन के अनुसार ललितशाह की राज्यावधि सन् 1772 ई0-1780 ई0 थी। मौलाराम के अनुसार ललितशाह को डोटियाणी रानी से विशेष अनुराग था तथा उसके प्रभाव में आकर उसने सिरमौर एवं कुमायूं पर आक्रमण करने का विचार किया था। सिरमौर अभियान में गढ़नरेश को न सिर्फ हार का मुंह देखना पड़ा बल्कि भारी जन-धन की हानि भी उठानी पड़ी, यहां तक कि राजा को निजी कोष का सोना-चांदी तक बेचना पड़ा था। बद्रीदत्त पाण्डे के उल्लेखानुसार कुमायूं अभियान के दौरान मलेरिया रोग से ललितशाह की मृत्यु हो गई।

जैकीर्तिशाह

ललितशाह की मृत्यु के पश्चात उसका पुत्र जैकीर्तिशाह गद्दी पर बैठा। अल्मोड़ा सूची, वैकेट, मुकुन्दीलाल एवं राहुल सांस्कृत्यायन के अनुसार जैकीर्तिशाह की राज्यावधि सन् 1780 ई0-1785 ई0 थी। जैकीर्तिशाह के शासनकाल के दौरान दलबन्दी अपने चरम पर पहुंच गई थी तथा दरबार में नित्यानन्द खण्डूड़ी एवं कृपाराम डोभाल के नेतृत्व में दो दल सक्रिय थे। दलबन्दी ने उग्र रूप धारण कर शासन व्यवस्था को अस्त-व्यस्त कर दिया था। मौलाराम ने कई बार राजा की सहायता कर उसे कठिनाइयों से बचाया था। किन्तु अन्ततः षडयन्त्रों ने उसे दुःखान्त मृत्यु प्रदान की। मौलाराम के उल्लेखानुसार उसके राज्यकाल के अन्तिम दिनों एवं मृत्यु के उपरान्त राजसम्पत्ति से लेकर उसकी व्यक्तिगत सम्पत्ति की लूट-खसोट हुई और राजकोष खाली हो गया। जैकीर्तिशाह के शासनकाल के दौरान प्रद्युम्नशाह, प्रद्युम्नचन्द के नाम से कुमायूं का राजा बन बैठा था, हालांकि वह नाममात्र का ही कुमायूं का शासक था क्योंकि उच्च राज्यपदाधिकारी जोशी बन्धुओं ने वास्तविक सत्ता अपने हाथों में ले रखी थी।

प्रद्युम्नशाह एवं गोरखा आक्रमण

सन् 1785 ई0 में जैकीर्तिशाह की मृत्यु के बाद प्रद्युम्नशाह गढ़वाल का भी शासक बन बैठा। अल्मोड़ा सूची एवं मुकुन्दीलाल के अनुसार प्रद्युम्नशाह की राज्यावधि सन् 1785 ई0-1804 ई0 थी। प्रद्युम्नशाह ऐसा पहला शासक था जो गढ़वाल एवं कुमायूं दोनों राज्यों की सत्ता पर एक साथ आरूढ़ था। प्रद्युम्नशाह का भाई पराक्रमशाह गढ़नरेश बनना चाहता था जबकि प्रद्युम्नशाह स्वयं गढ़नरेश बनकर पराक्रमशाह

वैकेट द्वारा प्रस्तुत वंशावली

1. कनकपाल
2. श्यामपाल
3. पाण्डुपाल
4. अविगतपाल
5. सीगलपाल
6. रतनपाल
7. सालीपाल
8. विधिपाल
9. मदनपाल
10. भक्तिपाल
11. जयचन्दपाल
12. पृथ्वीपाल
13. मदनपाल ।।
14. अगस्तिपाल
15. सुरतिपाल
16. जयतसिंहपाल
17. अनन्तपाल ।
18. आनन्दपाल।
19. विभोगपाल
20. सुभाजनपाल
21. विक्रमपाल
22. विचित्रपाल
23. हंसापाल
24. सोनपाल
25. कांदिलपाल
26. कामदेवपाल
27. सालखारीदेव
28. लखनदेव
29. अनन्तपाल।।
30. पूरबदेव
31. अभयदेव
32. जयरामदेव
33. असलदेव
34. जगतपाल
35. जीतपाल
36. आनन्दपाल।।
37. अजयपाल
38. कल्याणशाह
39. सुन्दरपाल
40. हंसदेवपाल
41. विजयपाल
42. सहजपाल
43. बलभद्रशाह
44. मानसाह
45. स्यामसाह
46. महीपतसाह
47. पृथ्वीसाह
48. मेदिनीसाह
49. फतेसाह
50. उपेन्द्रसाह
51. प्रदीप्तसाह
52. ललितसाह
53. जकरतसाह
54. प्रद्युम्नसाह

पं० हरिकृष्ण रतूड़ी द्वारा प्रस्तुत वंशावली

1. कनकपाल
2. श्यामपाल
3. पाण्डुपाल
4. अभिगतपाल
5. सीगतपाल
6. रत्नपाल
7. शालिपाल
8. विधिपाल
9. मदनपाल ।
10. भक्तिपाल
11. जयचन्द्रपाल
12. पृथ्वीपाल
13. मदनसिंहपाल
14. अगस्तपाल
15. सुरतिपाल
16. जयत्सिंहपाल
17. सत्यपाल
18. आनन्दपाल
19. विभोगपाल
20. शुभयानपाल
21. विक्रमपाल
22. विचित्रपाल
23. हंसपाल
24. सोनपाल
25. कान्तिपाल
26. कामदेवपाल
27. सुलक्षणपाल
28. सुदक्षणपाल
29. अनन्तपाल
30. पूर्वदेवपाल
31. अभयदेवपाल
32. जयरामदेवपाल
33. आशलदेवपाल
34. जगतपाल
35. जीतपाल
36. आनन्दपाल ।।
37. अजयपाल
38. कल्याणशाह
39. सुन्दरपाल
40. हंसदेवपाल
41. विजयपाल
42. सहजपाल
43. बलभद्रपाल, बहादुरशाह
44. मानशाह
45. शामशाह
46. महीपतिशाह
47. पृथ्वीपतिशाह
48. मेदिनीशाह
49. फतेशाह
50. उपेन्द्रशाह
51. प्रदीपशाह
52. ललितशाह
53. जयकृतशाह
54. प्रद्युम्नशाह
55. सुदर्शनशाह
56. भवानीशाह
57. प्रतापशाह
58. कीर्तिशाह
59. नरेन्द्रशाह

को कुमायूं का राजा बनाना चाहते थे। इससे दरबार में दलबन्दी ने उग्र रूप धारण कर लिया और आपसी प्रतिद्वन्दिता के चलते कुमायूं का राज्य भी गढ़नरेश के हाथ से निकल गया। सन् 1790 ई0 में गोरखा सेना ने कुमायूं पर अधिकार कर लिया तथा तदोपरान्त गढ़वाल पर आक्रमण की योजना बनाई। डेनियल बन्धुओं ने गढ़देश पर गोरखा आक्रमण का उल्लेख किया है। अपनी योजना को कार्यरूप प्रदान करने के लिए गोरखा सेना ने सन् 1791 ई0 में लंगूरगढ़ी पर घेरा डाल दिया परन्तु एक वर्ष तक घेरा डाले रहने के बावजूद गोरखा सेना को इसे विजित करने में सफलता नहीं मिली। अन्ततः गढ़नरेश से सन्धि होने पर वे वापस लौट गये। 'एशियाटिक रिसर्चेज' के उल्लेखानुसार सन्धि की शर्तो के अनुसार गढ़नरेश ने प्रतिवर्ष नेपाल को कर देना तथा नेपाल दरबार के एक प्रतिनिधि को रखना स्वीकार किया था। मौलाराम की 'गणिका नाटक' के अनुसार सन् 1794-95 ई0 में गढ़वाल में भयंकर अकाल पड़ा तथा 1803 में विनाशकारी भूकम्प आया। अकाल व भूकम्प से अपार जन-धन की हानि हुई तथा राज्य की आर्थिक स्थिति दयनीय हो गई, यहां तक कि राजा को प्रशासनिक कार्यों को चलाने के लिए देवालयों से ऋण लेना पड़ा था। दूसरी ओर सत्ता को लेकर राज्य में गृह युद्ध छिड़ गया ऐसी स्थिति का लाभ उठाते हुए गोरखाली सेना ने अमर सिंह थापा के नेतृत्व में 1804 ई0 में गढ़वाल पर अक्रमण कर दिया। गढ़नरेश युद्ध में पराजित होकर सहारनपुर चला गया। मौलाराम एवं एटकिंसन के उल्लेखानुसार राजा प्रद्युम्नशाह ने सहारनपुर में सेना बटोर कर देहरादून आकर खुड़बुड़ा में (1805ई0) गोरखा सेना से पुनः युद्ध किया इसमें प्रद्युम्नशाह की हार हुई। प्रद्युम्नशाह मौके पर ही मारा गया। 'एशियाटिक रिसर्चेज' में भी युद्धभूमि में ही प्रद्युम्नशाह को वीरगति मिलने का उल्लेख है। इस युद्ध में पराजय मिलने पर राजकुमार सुदर्शनशाह ने ज्वालापुर जाकर शरण ली।

गोरख्याणी इस प्रकार गढ़नरेश प्रद्युम्नशाह की मृत्यु के उपरान्त सन् 1805 ई0 में सम्पूर्ण गढ़वाल पर गोरखाओं का एकछत्र राज हो गया। अपने 12 वर्षीय छोटे शासनकाल के दौरान गोरखाओं ने गढ़वालियों पर घोर अत्याचार किये। वे प्रजा के धन व जीवन का स्वयं को मालिक समझने लगे थे। उनके शासनकाल में दासों के क्रय-विक्रय को खूब बढ़ावा मिला। हजारों गढ़वाली स्त्री, पुरूष व बच्चों को गुलाम बनाकर नेपाल भेजा गया।

गोरखा शासन के दौरान धनी व्यक्तियों को लूटना व सुन्दर स्त्रियों की पतिव्रता नष्ट करना उनका स्वाभाविक कार्य बन चुका था। उनके अत्याचारों से तंग आकर लोग घर छोड़कर जंगलों में छिप जाते थे। गोरखाओं के शासन में प्रजा अत्यन्त दुःखी थी।

अंग्रेजों द्वारा गोरखाओं को पराजित करना बाद में सुदर्शनशाह ने ईस्ट इण्डिया कम्पनी से सहायता मांगी। कम्पनी भी गोरखाओं को उनकी उदण्डता का सबक सिखाना चाहती थी लिहाजा 1814 ई0 में कम्पनी ने गोरखाओं के विरूद्ध युद्ध की घोषणा कर दी। इस युद्ध में अंग्रेजों की विजय हुई और गोरखाओं को गढ़वाल व कुमायू दोनों जगहों से भागने के लिए मजबूर होना पड़ा। कुमायूं का राज्य ब्रिटिश राज्य में मिला दिया गया जबकि गढ़वाल राज्य पर महाराजा सुदर्शनशाह का अधिकार हो गया, किन्तु युद्ध का हरजाना न दे पाने पर अलकनन्दा व मंदाकिनी नदी का पूर्वी भाग ब्रिटिश गढ़वाल के नाम से अंग्रेजी राज्य में मिला दिया गया।

मौलाराम द्वारा प्रस्तुत वंशावली

1. भुवनपाल
2. अभयपाल
3. कर्णपाल
4. विशेषणपाल
5. सोमपाल
6. विगतपाल
7. सुरथपाल
8. जैतपाल
9. पुन्नपाल
10. सतपाल
11. अविगतपाल
12. सालिवाहनपाल
13. संगीतपाल
14. मंगीतपाल
15. रत्नपाल
16. मदनपाल
17. विधिपाल
18. भगदत्तपाल
19. चन्द्रपाल
20. कीर्तिपाल
21. मदनसिंहपाल
22. अणिरूद्धपाल
23. विभोगितिपाल
24. विधानपाल
25. विक्रमपाल
26. विजैपाल
27. सहजपाल
28. सोनपाल
29. कांधपाल
30. सहदेवपाल
31. सुलक्षणपाल
32. लखणदेव
33. अलखणपाल
34. अनन्तदेव
35. अपर्वदेवपाल
36. अभयदेवपाल
37. अजैपाल
38. अजैदेव
39. प्रतापपाल
40. जैराजदेवपाल
41. गतदेवपाल
42. जितारथपाल
43. कल्याणपाल
44. अनन्तपाल
45. दीपान्तपाल
46. प्रियनिहार जैपाल
47. सुन्दरपाल
48. सहजपाल
49. विजैराजपाल
50. वलभद्रसाह
51. सीतलसाह
52. मानसाह
53. स्यामसाह
54. दुलोरामसाह
55. महीपतिसाह
56. प्रथीपतसाह
57. मेदिनीसाह
58. फतेसाह
59. उपेन्द्रसाह
60. प्रदीपसाह
61. ललितसाह
62. जैकीर्तिसाह
63. प्रद्युम्नसाह

विलियम्स द्वारा प्रस्तुत वंशावली

1. कनकपाल
2. विशेश्वरपाल
3. सुमन्तपाल
4. पूरणपाल
5. अभगतपाल
6. शक्तिपाल
7. रेतिपाल
8. शालिवाहनपाल
9. मदनपाल
10. विधिपाल
11. भुगदत्तपाल
12. विभोगपाल
13. जयचन्द्रपाल
14. हीरतपाल
15. मदनसहाई
16. अभिगतपाल
17. सूरजपाल
18. जयतपाल
19. अनीरूदोपाल
20. विभोगपाल
21. गुग्यानपाल
22. विक्रमपाल
23. विचित्रपाल
24. हानापाल
25. सुवर्णपाल
26. क्रान्तिकृपापाल
27. कामदेवपाल
28. सुलक्षणपाल
29. महासुलक्षणदेव
30. सुतपाल
31. अपूर्वदेव
32. जयदेव
33. जितंगपाल
34. कल्याणपाल
35. अजयपाल
36. अनन्तपाल
37. सुन्दरपाल
38. सहजपाल
39. विजयपाल
40. बहादुरपाल
41. सीललसहाई
42. मानसाह
43. सामसाह
44. महीपतिसाह
45. पृथ्वीसाह
46. मदनीसाह
47. फतेसाह

स्वंत्रता संग्राम में गढ़वाल का योगदान

देश को अंग्रेजों की गुलामी से मुक्ति देने के लिए शुरू हुए स्वाधीनता संग्राम में गढ़वालवासियों का योगदान देश के किसी भी क्षेत्र से कम नहीं था, बल्कि आजादी के तीन आंदोलनों में से एक पेशावर कांड पर तो अकेले गढ़वालियों का ही एकाधिकार रहा है।

देश की आजादी के पीछे उन हजारों क्रांतिकारियों के बलिदान त्याग व संघर्ष का एक लंबा इतिहास है। इस इतिहास के पन्नों से अनेक सपूतों ने भी वीरतापूर्वक अपने त्याग को स्वर्णिम अक्षरों से लिखा है।

जनपद के इन आजादी के मतवालों में एक दो नाम हों तो यहां लिखे जाएं, यहां तो स्वाधीनता संग्राम में अपनी भागीदारी सुनिश्चित करने वालों की सूची इतनी लंबी है कि उससे लगता है कि तब हमारे महापुरूषों में इसके लिए त्याग की होड़ सी लगी होगी। इस सूची को भी हम यहां अंत में दे रहे हैं। फिर भी कुछ ऐसी ऐतिहासिक घटनाएं हैं जिन्होंने गढ़वाल का नाम देश में ही नहीं बल्कि पूरे विश्व में गौरवान्वित किया हैं। आजादी की दूसरी लड़ाई और आजादी के लिए पहली सैनिक क्रांति पेशावर कांड ने अंग्रेजों को भारत को आजादी देने के लिए बुरी तरह उद्वेलित कर दिया था। पेशावर में निहत्थे सत्याग्रहियों पर 2/18 रॉयल गढ़वाल राइफल्स के जवानों ने वीर चंद्र सिंह गढ़वाली के नेतृत्व में गोली चलाने से इंकार किया तो इसे भारत की पहली सैनिक क्रांति का दर्जा मिला। इसी सैनिक क्रांति से ओतप्रोत देश की आजादी की लड़ाई लड़ने के लिए गढ़वाली सैनिकों में जो जोश बढ़ा उसके परिणाम स्वरूप आजाद हिंद फौज के 24 हजार सैनिकों में से 2500 सैनिक गढ़वाली थे।

गढ़वाल में स्वाधीनता भी उत्तराखंड राज्य आंदोलन की भांति शोषण और असामाजिक कानूनों से ही बढ़ता चला गया, कुली, बेगार और डोला पालकी प्रथा ने गढ़वाल में आजादी के आंदोलन को गति दी। कुली, बेगार प्रथा को समाप्त करने के लिए जो लोग आगे आए वे अंग्रेज शासकों की आंख की किरकरी बनते चले गए। डोला पालकी प्रथा को समान रूप से लागू करने की मांग पर भी आंदोलन हुए हैं।

इसके अलावा चंद्रशेखर आजाद का प्रवास, पं. जवाहरलाल नेहरू की यात्रा इस बात की गवाह है कि गढ़वाल में स्वाधीनता संग्राम की लड़ाई देश की आजादी के आंदोलन को भारी ताकत दे रही थी।

हमारे महानायकों द्वारा देश की आजादी में किए गए अपने सहयोग व त्याग से आज समूचे गढ़वाल का माथा ऊंचा है। हम गौरवान्वित हैं। हम उन्हें कभी नहीं भूल सकते और न भूलेंगे इस श्रद्धा के साथ आजादी के आंदोलन में गढ़वाल व गढ़वालवासियों के योगदान को संक्षिप्त में प्रस्तुत कर रहे हैं।

जनपद गढ़वाल में स्वाधीनता संग्राम की गौरव गाथा

पंवार वंशीय अजय पाल ने सोलहवीं शताब्दी के आरंभ में गढ़वाल राज्य की स्थापना की उस पर उसके वंशजो ने तीन सौ वर्षो (1500 से 1800 तक) तक एक छत्र राज किया। इस लंबे युग में गढ़वाल राज्य को सिरमौर, कुमाऊं, मुगलों, सिक्खों व रूहेलों के अनेक भयावह और योजनाबद्ध आक्रमणों का सामना करना पड़ा फिर भी गढ़वाल राज्य का स्वतंत्र अस्तित्व बना रहा। लेकिन 1815 में गढ़वाल राज्य का विघटन व विभाजन हो गया। एक भाग टिहरी रियासत व दूसरा भाग ब्रिटिश गढ़वाल कहलाया। इस विभाजन के बाद गढ़वाल का मानचित्र ही बदल गया। साथ ही राजधानी भी बदल गई, यहां तक कि गढ़वाल के लोक जीवन व लोक संस्कृति का भी विभाजन हो गया।

साधारणतया यह विश्वास किया जाता है कि सन् 1815 में गढ़वाल विभाजन का एकमात्र मुख्य कारण यह था कि सन् 1804 में गोरखों द्वारा पराजित होने के बाद राजा सुदर्शन शाह राज्य विहीन हो गया था। अत: सुदर्शनशाह ने अपना राज्य पुन: प्राप्त करने के लिए ब्रिटिश ईस्ट इंडिया कंपनी से सहायता मांगी। ब्रिटिश ईस्ट इंडिया कंपनी ने गढ़वाल से गोरखा शक्ति का उन्मूलन कर गढ़वाल के राजा को उसका पैत्रिक राज्य पुन: दिला दिया, लेकिन गढ़वाल का राजा युद्ध व्यय के रूप में ईस्ट इंडिया कंपनी द्वारा मांगी गई धनराशि अदा नहीं कर पाया। इसलिए राजधानी श्रीनगर सहित गढ़वाल के आधे से अधिक भूभाग पर ईस्ट इंडिया कंपनी ने अपने अधिकार में ले लिया। गढ़वाल का यही भूभाग कालांतर में ब्रिटिश गढ़वाल कहलाया। गढ़वाल का शेष भाग जो ईस्ट इंडिया कंपनी द्वारा गढ़वाल के राजा को दिया गया, टिहरी रियासत कहलाया। इस प्रकार सन् 1815 में गढ़वाल का विभाजन हो गया। सन् 1815 गढ़वाल के राजा सुदर्शन शाह ने अपनी राजधानी श्रीनगर के स्थान पर टिहरी स्थापित की। यह स्थान भागीरथी व भिलंगना नदियों के संगम पर स्थित था। राजधानी श्रीनगर एवं इसे पूर्व के भूभाग को प्रशासन के लिए कुमाऊं कमिश्नरी के साथ मिला लिया गया। नैनीताल में कुमाऊं कमिश्नरी का प्रधान कार्यालय था। सन् 1815 से सन् 1840 तक कुमाऊं कमिश्नरी के अधीन

रहा। सन् 1840 तक कुमाऊं कमिश्नरी के अधीन रहा। सन् 1840 तक कुमाऊं तक ब्रिटिश गढ़वाल कुमाऊं कमिश्नरी के अधीन रहा। सन् 1840 तक कुमाऊं कमिश्नरी में नैनीताल एवं अल्मोड़ा को ही जिले का स्थान प्राप्त था। सन् 1840 में पौड़ी की भौगोलिक स्थिति एवं जलवायु को मद्देनजर रखते हुए इसे जिले का स्थान दिया गया व पौड़ी में डिप्टी कमिश्नर की अदालत स्थापित की गई। इस अदालत में संपूर्ण ब्रिटिश गढ़वाल के मुदकमों की सुनवाई होती थी। सन् 1854 में पौड़ी में अमेरिकन एपिसकोपल मैथोडिस्ट चर्च की स्थापना की गई। यद्यपि इस चर्च का प्रमुख कार्य ब्रिटिश गढ़वाल में ईसाई धर्म का प्रचार-प्रसार करना था, लेकिन इस चर्च ने ब्रिटिश गढ़वाल में आर्थिक विपन्नता में जीवन यापन कर रहे गढ़वाली परिवारों को ईसाई बनाने का कार्य बहुतायत किया गया।

सन् 1857 की क्रांति के समय सर हेनरी रामजे कुमाऊं का कमिश्नर था। क्रांति का समाचार उसे 22 मई 1857 को गढ़वाल के हिमाच्छादित क्षेत्र (उत्तरी पैनखंडा) में मिला। वहां से वह तुरंत अल्मोड़ा पहुंचा और कर्नल मैकौसलैंड से आवश्यक सलाह मशविरा कर नैनीताल पहुंचा। क्रांति काल में कुमाऊं कमिश्नरी में शांति विद्यमान होने पर भी वहां विद्रोह की अग्नि न भड़कने देने के लिए रामजे ने संपूर्ण कुमाऊं कमिश्नरी में फौजी कानून लगा दिर्या क्रांतिकाल में बेकेट, डिप्टी कमिश्नर गढ़वाल था। सन् 1857 की क्रांति में ब्रिटिश गढ़वाल में कोई महत्वपूर्ण घटना नहीं हुई यद्यपि बेकेट ने मैदानी क्षेत्रों से ब्रिटिश गढ़वाल को जोड़ने वाले समस्त मार्गो पर कड़ी नाकेबंदी कर दी थी। ऐतिहासिक प्रमाणों से यह स्पष्ट है कि ब्रिटिश गढ़वाल के थोकदारों, जमींदारों यहां तक कि प्रजा ने भी ब्रिटिश सरकार की मद्द की। क्रांतिकारियों ने श्रीनगर गढ़वाल में क्रांति की ज्वाला भड़काने का प्रयास भी किया, लेकिन वे इस कार्य में असफल रहे। क्रांतिकाल में ब्रिटिश गढ़वाल में कैदियों से कुलियों का काम लिया जाता था। ब्रिटिश गढ़वाल की भांति रियासत टिहरी में भी सन् 1857 की क्रांति के समय शांति विद्यमान रही। क्रांतिकाल में सुदर्शन शाह ने ब्रिटिश सरकार की बहुत सेवा की एवं ब्रिटिश सरकार को एक लाख रूपए की आर्थिक सहायता भी दी। साथ ही साथ अपनी रियासत में शरण लेने वाले अंग्रेज परिवारों को पूर्ण सुरक्षा प्रदान की। यदि सन् 1859 में सुदर्शन शाह की मृत्यु न होती तो क्रांतिकाल में ब्रिटिश सरकार की सेवा के पुरस्कार स्वरूप उसे श्रीनगर की जागीर भी प्राप्त हो सकती थी, लेकिन राजा की मृत्यु हो जाने से ऐसा संभव नहीं हो पाया। सुदर्शन शाह का अपनी रानियों से कोई पुत्र नहीं था। अत: ब्रिटिश सरकार ने उसकी प्रार्थना पर क्रांतिकाल में उसके द्वारा की गई सेवाओं को ध्यान में रखते हुए उसे अपनी उपपत्नी से उत्पन्न पुत्र भवानी सिंह को अपना उत्तराधिकारी घोषित करने की अनुमति प्रदान कर दी थी। सुदर्शन शाह की मृत्य के पश्चात ब्रिटिश सरकार ने भवानी सिंह को टिहरी का राजा घोषित किया, जो भवानीशाह के नाम से सिंहासन पर बैठा।

सन् 1857 की क्रांति में संपूर्ण गढ़वाल हिमालय में शांति विद्यमान रही। इस शांति के अनेक कारण थे। प्रमुख कारण गोरखाओं का अन्यायपूर्ण शासन रहा। गोरखों ने अपने अल्पकालीन अन्यायपूर्ण शासन (सन् 1804 से सन् 1815 तक) में गढ़वालवासियों पर अनेक अमानवीय अत्याचार किए। गोरखों ने गढ़वाल के गांव के गांव जलाकर राख कर दिए थे। स्त्रियों के साथ अनाचार किया। उनके अत्याचारों से आतंकित होकर गढ़वालवासी जंगलों में भाग गए थे। जनता को भारी कर देने पड़ते थे। कर न दे पाने की स्थिति में संपत्ति कुर्क कर दी जाती थी, यहां तक कि लोगों को बेच भी दिया जाता था। गोरख्याली शासकों के हृदय अत्यधिक कठोर थे। वे मनुष्यों को चींटी की तरह कुचल देते थे और बच्चों को ओखली में कूट देते थे। राजधानी श्रीनगर में भद्र पुरूषों को अपमानित करने व स्त्रियों के साथ बलात्कार की घटनाएं प्रतिदिन होती थी। गोरखा शासनकाल में घटनाएं प्रतिदिन होती थी। गोरखा शासनकाल से ही गढ़वाल के नर नारियों को दास बनाकर बेचे जाने की प्रथा प्रारंभ हुई थी।

गढ़वाल के अभागे स्त्री-पुरूषों को दस रूपए से लेकर एक सौ पचास रूपए तक की दर से बेचा जाता था। जेबी प्रेजर का मत है कि गोरखों ने अपने अल्पकालीन शासन में लगभग दो लाख गढ़वालियों को दास बनाकर बेच दिया था। गढ़वाल के अंदर उस समय हरिद्वार के दासों के क्रय विक्रय की सबसे बड़ी मंडी थी। गोरखों के अमानवीय अत्याचार के फलस्वरूप गढ़वालवासियों के हृदय में उनके प्रति घृणा की भावना उत्पन्न हो गई थी। यही कारण था कि गढ़वाल से गोरखा शक्ति के उन्मूलन से सन् 1857 तक गढ़वाल की जनता ने ब्रिटिश सरकार की सहायता की। कुमाऊं कमिश्नर ट्रेल के शासनकाल में सन् (1816 से सन् 1830 तक) में गढ़वाल में दासों के क्रय-विक्रय की कुप्रथा को सदैव के लिए समाप्त कर दिया गया था। सन् 1857 की क्रांति का गढ़वाल हिमालय पर प्रभाव न पड़ने का एक कारण यहां यातायात के साधनों का नितांत अभाव होना रहा। समाचार-पत्रों का अभाव, गढ़वाल हिमालय में अशिक्षा व संचार माध्यमों के अभाव के कारण भी गढ़वाल हिमालय में क्रांति का प्रभाव नहीं पड़ा। सन् 1885 में भारत में पहली राजनीतिक संस्था कांग्रेस की स्थापना की गई। संस्थापक थे एओ ह्यूम। भारत में कांग्रेस की स्थापना होने के पश्चात प्रगति का मार्ग प्रशस्त हुआ। भारत के विभिन्न नगरों में पाश्चात्य शिक्षा ग्रहण कर रहे गढ़वाल नवयुवक गढ़वाल की ओर आकर्षित होने लगे। उनके मन में गढ़वाल की सड़ी-गली व्यवस्थाओं को बदलने का विचार हिलोरें लेने लगा। सन् 1919 तक गढ़वाल की जनता ने गढ़वाल यूनियन, गढ़वाल भ्रातृ मंडल, गढ़वाल सभा, सनातन धर्म सभा, गोरक्षणी आदि संस्थाओं की स्थापना कीं। कुमाऊं में कुमाऊं परिषद की स्थापना की गई। कुमाऊं मंडल में यह पहली राजनैतिक संस्था थी। इस संस्था का पहला अधिवेशन नैनीताल जिले के मझेडा ग्राम में हुआ था। इस संस्था का प्रमुख उद्देश्य कुमाऊं कमिश्नरी में व्याप्त कुप्रथाओं को समाप्त करना था। सन् 1919 में मुकंदीलाल बैरिस्टरी पास करके विलायत से स्वदेश लौटे। स्वदेश लौटने पर सबसे पहले वे इलाहाबाद गए, वहां वे पं.जवाहरलाल नेहरू के सानिध्य में रहे। तत्पश्चात लैंसडौंन आए व अपनी वकालत प्रारंभ की। गढ़वाल में मुकुंदीलाल जी ने कांग्रेस सदस्यता अभियान आरंभ किया। सदस्यता शुल्क चार आना निर्धारित किया गया। साथ ही गढ़वाली कांग्रेस का संपर्क प्रदेश एवं राष्ट्रीय कांग्रेस से स्थापित किया गया। मुकंदीलाल जी के इस कार्य से उन्हें अखिल भारतीय कांग्रेस कमेटी का सदस्य बना लिया गया।

ब्रिटिश गढ़वाल में उस समय कुली बेगार, कुली उतार, एवं कुली बदार्यश नामक कुप्रथाएं प्रचलित थी। रियासत टिहरी में भी छोटी बर्दायश, बड़ी बर्दायश, बराबेगार एवं प्रभु सेवा नामक कुप्रथाओं का चलन था। जिनके अनुसार स्थानीय जनता को शासक वर्ग के लिए नि:शुल्क कुली के रूप में कार्य करने पड़ते थे, चूंकि यातायात के साधनों का गढ़वाल हिमालय में नितांत अभाव था। अत: शासक वर्ग के लिए नि:शुल्क खाद्य सामग्री का प्रबंध भी स्थानीय जनता को करना पड़ता था। यद्यपि कुलियों के लिए मेहनताना तय था, लेकिन शासक वर्ग की सेवा में नियुक्त भारतीय कर्मचारी इन कुलियों का मेहनताना स्वयं हड़प कर जाते थे। इन भारतीय कर्मचारियों को रिश्वत देकर भी इन कुप्रथाओं से बचा जा सकता था। सन् 1919 में इन कुप्रथाओं के विरोध में व्यापक आंदोलन हुए। ब्रिटिश गढ़वाल में स्थानीय जनता ने सरकार को बेगार देने से स्पष्ट इंकार कर दिया। तत्पश्चात गढ़वाल के डिप्टी कमिश्नर पी मैंशन ने ब्रिटिश गढ़वाल से कुली बेगार समाप्त करने की घोषणा की। ब्रिटिश गढ़वाल में कांग्रेस की यह बहुत बड़ी उपलब्धि थी। 6 अप्रैल, 1930 को महात्मा गांधी ने दांडी में समुद्र से नमक उठाकर सत्याग्रह प्रारंभ किया। ब्रिटिश गढ़वाल में नमकीन पानी के स्त्रोतों का बहिष्कार कर यहां नमक सत्याग्रह का शुभारंभ किया गया। गढ़वाल के निवासियों में एक अभूतपूर्व लहर इस आंदोलन में आयी। 23 अप्रैल 1930 का 2/18 रॉयल गढ़वाल राइफल्स के 63 गढ़वाली सैनिकों ने हवलदार चंद्र सिंह गढ़वाली के नेतृत्व में पेशावर (पाकिस्तान) शहर में कांग्रेस का अधिवेशन कर रहे हजारों कांग्रेसी कार्यकर्ताओं पर ब्रिटिश सरकार के गोली चलाने के आदेश की अवहेलना कर सेना में बगावत कर दी। कांग्रेसी कार्यकर्ताओं का नेतृत्व सीमांत गाधी के नाम से विख्यात खान अब्दुल गफ्फारखां कर रहे थे। गढ़वाली सैनिकों ने स्वतंत्रता के लिए प्रयासरत कार्यकर्ताओं पर अपने उच्चाधिकारियों के गोली चलाने के आदेश की अवहेलना कर विश्व में अद्वितीय देशभक्ति का उदाहरण प्रस्तुत किया। संभवतया विश्व में यह प्रथम सैनिक क्रांति थी, जो बिना रक्तपात के संपन्न हुई।

गढ़वाली सैनिकों द्वारा अपने आदेशों की अवहेलना होने पर ब्रिटिश शासन में खलबली मच गयी, बागी सैनिकों को ब्रिटिश सरकार मार देना चाहती थी, लेकिन भारतीय जनता में इन सैनिकों के प्रति उत्साह की लहर देखकर ब्रिटिश सरकार ऐसा नहीं कर पायी। सभी 63 गढ़वाली सैनिकों पर सैनिक अदालत में मुकदमा चला तीन सैनिक सरकारी गवाह बन गए। शेष 60 को एक वर्ष से लेकर आजीवन कारावास तक का दंड दिया गया।

सन् 1930 में स्थान-स्थान पर ब्रिटिश गढ़वाल में अधिवेशन हुए, राजनैतिक सम्मेलन हुए, हजारों आंदोलनकारी गिरफ्तार कर लिए गए, आंदोलनकारियों के साथ अभद्र व्यवहार किए जाने पर गढ़वाल के डिप्टी कमिश्नर ईबटसन को कंडोलिया के समीप में काले झंडे दिखाए गए। उसके सैनिकों पर पथराव किया गया। परिणामस्वरूप ईबटसन ने अपार भीड़ को नियंत्रित करने के लिए भीड़ पर घोड़े दौड़ाने के आदेश दे दिए। प्रमुख आंदोलनकारी गिरफ्तार

कर लिए गए व उन्हें सजाएं दी गई। सन् 1930 के नमक सत्याग्रह आंदोलन के दौरान देहरादून में विद्यार्थियों ने शराब की दुकानों पर खड़े अंग्रेज सैनिकों पर पथराव करने के साथ दुकानों में तोड़फोड़ की, जिसके फलस्वरूप उन्हें पकड़ लिया गया। पुलिस ने इन आंदोलनकारियों को गाड़ियों में भरकर शहर से दूर जंगलों में छोड़ने की नीति अपनाई। सन् 1930 में रियासत टिहरी में रवांई गोलीकांड हुआ, जिसे भारतीय इतिहास में गढ़वाल के जलियावांला बाग हत्याकांड की संज्ञा दी गई है। रियासत टिहरी की जनता वनों में अपने अधिकारों को लेकर आंदोलनरत थी, लेकिन रियासत के अधिकारी वनों में जनता को किसी भी प्रकार के अधिकार देने के पक्ष में नहीं थी। शांत जनता जब तिलाड़ी के मैदान में एकत्रित होकर आंदोलन की रूपरेखा तैयार कर रही थी, तो रियासत के दीवान चक्रधर जुयाल ने सेना के माध्यम से जनता पर गोलियों की वर्षा आरंभ कर दी, जिससे सैकड़ों आंदोलनकारी घटनास्थल पर ही हताहत हो गए एवं 1250 आंदोलनकारियों को गिरफ्तार कर लिया गया। वर्षो तक उन पर सियासत की ओर से मुकदमा चलता रहा। टिहरी नरेश नरेंद्र शाह इस समय यूरोप यात्रा पर थे। लौटने पर उन्होंने दीवान जुयाल को दंड न देकर उनके कार्य को उचित ठहराया, जिससे रियासत की जनता राजा के विरूद्ध हो गई थी। 13 जून 1932 को संयुक्त प्रांत के गवर्नर लार्ड मैल्कम हैली के सम्मान में पौड़ी नगर में एक सम्मेलन का आयोजन किया गया। ब्रिटिश गढ़वाल के सभी कांग्रेसी कार्यकर्ताओं को गिरफ्तार कर जेल भेज दिया गया, लेकिन समाज के सबसे दबे वर्ग के नेता जयानंद भारती ने गवर्नर की सभा में तिरंगे का प्रदर्शन कर सभी को दिखा दिया कि ब्रिटिश गढ़वाल में कांग्रेस के अस्तित्व को समाप्त नहीं किया जा सकता। उन्हें तुरंत गिरफ्तार कर लिया गया व एक वर्ष कठोर कारावास की सजा दी गई। प्रदर्शन स्थल बंदोबस्त कार्यालय था। सन् 1939 में प्रांतीय विधानसभा के लिए चुनाव हुए। जनपद नैनीताल से पं. गोविंद बल्लभ पंत, जनपद अल्मोड़ा से पं. हरगोविंद पंत व ब्रिटिश गढ़वाल से अनुसूया प्रसाद बहुगुणा विजयी रहे। पं. गोविंद बल्लभ पंत को संयुक्त प्रांत का मुख्यमंत्री बनाया गया। पंत जी ने ब्रिटिश गढ़वाल में यातायात की सुविधा के लिए सड़कों के निर्माण हेतु 20 हजार रूपए का बजट बनाया, जिसका समस्त ब्रिटिश गढ़वाल में विरोध किया गयाएवं यहां पर जो थोड़ी बहुत बसें भी चलती थी उन पर पांच आना किराया बढ़ा दिया गया। उनके इस कार्य से गढ़वाल वासियों में रोष उत्पन्न हो गया। 5 एवं 6 मई 1938 को पं. जवाहर लाल नेहरू एवं विजयलक्ष्मी पंडित श्रीनगर गढ़वाल आए। भक्त दर्शन, भैरव दत्त धूलिया एवं प्रताप सिंह नेगी ने संपूर्ण स्थितियों से नेहरू जी के हस्तक्षेप से किराए की बढ़ी राशि समाप्त की गई एवं पौड़ी-कोटद्वार सड़क निर्माण को स्वीकृति दी गई। अभी सड़क का निर्माण सतपुली तक ही हो पाया था कि द्वितीय विश्व युद्ध प्रारंभ हो गया। राष्ट्रीय कांग्रेस के आदेश पर उत्तर प्रदेश (संयुक्त प्रांत) सरकार ने त्यागपत्र दे दिया। तत्पश्चात ब्रिटिश सरकार ने उत्तर प्रदेश का शासन अपने हाथों में ले लिया।

टिहरी राज्य के उत्साही युवकों ने टिहरी प्रजा मंडल की विधिवत स्थापना 23 जनवरी 1938 को एमएन रॉय की अध्यक्षता में राजपुर (देहरादून) के राजनैतिक सम्मेलन में की। गोविंद राम भट्ट तथा श्याम चंद्र नेगी इसके संस्थापक सदस्य बने। इस संस्था का प्रमुख उद्देश्य रियासत टिहरी की स्थिति को सुधारना व नागरिकों को उनके अधिकार दिलाना था। श्रीदेव सुमन इसके प्रधानमंत्री थे। चूंकि रियासत की सरकार द्वारा प्रजा मंडल के समस्त कार्यो का संचालन देहरादून से ही किया जाता था। सन् 1940 में रियासत में विद्यार्थी आंदोलन हुआ। रियासत में श्रीदेव सुमन की प्रेरणा से विद्यार्थियों ने अध्यापकों की ज्यादतियों के विरूद्ध आंदोलन किया। प्रताप इंटर कालेज के प्रधानाचार्य को मौत के घाट उतारने की चेतावनी भी दी गई। अप्रैल 1941 में छात्र नेता रामचंद्र उनियाल की गिरफ्तारी के साथ ही रियासती कर्मचारियों ने इस आंदोलन को कठोरता से दबा दिया। सन् 1940 में महात्मा गांधी के आह्वान पर संपूर्ण देश में व्यक्तिगत सत्याग्रह आंदोलन प्रारंभ हुआ। 8 दिसंबर, 1940 को डाडामंडी से ब्रिटिश गढ़वाल में सत्याग्रह का आरंभ हुआ। जगमोहन सिंह नेगी प्रथम सत्याग्रही के रूप में गिरफ्तार किए गए। चमोली में अनुसूया प्रसाद बहुगुणा को गिरफ्तार कर लिया गया। 21 जनवरी 1941 तक ब्रिटिश गढ़वाल के लगभग 20 सत्याग्रही गिरफ्तार कर लिए गए थे। इस समय गढ़वाल में हरिजनों को डोला-पालकी का प्रयोग नहीं करने दिया जाता था। यदि वे इसका प्रयोग करते थे, तो सवर्णो द्वारा उन पर अत्याचार किए जाते थे। व्यक्तिगत सत्याग्रह आंदोलन के समय भी डोला-पालकी के प्रश्न पर सवर्णो ने हरिजनों के साथ अत्याचार किया। हरिजनों पर हो रहे अत्याचारों की जानकारी रमेशचंद्र बहुखंडी ने गांधी जी को दी। गांधी जी पर इस समाचार की तीव्र प्रतिक्रिया हुई। तत्पश्चात उन्होंने ब्रिटिश गढ़वाल में सत्याग्रह पर प्रतिबंध लगा दिया। 23 फरवरी 1941 को लैंसडौंन में गढ़वाल से डोला-पालकी नामक कुप्रथा को समाप्त किए जाने का निर्णय लिया गया। बलदेव सिंह आर्य एवं कलम सिंह नेगी ने इस कार्य में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई। तत्पश्चात पुनः गांधी जी के आदेश पर ब्रिटिश गढ़वाल में व्यक्तिगत आंदोलन प्रारंभ किया गया। अप्रैल 1941 को भक्त दर्शन गिरफ्तार कर लिए गए, लेकिन प्रमाणों के अभाव में उन्हें रिहा कर दिया गया। व्यक्तिगत सत्याग्रह में ब्रिटिश गढ़वाल के 308 सत्याग्रहियों को गिरफ्तार किया गया, जिनमें 118 व्यक्तियों को एक दिन से एक वर्ष तक कठोर कारावास की सजा व पांच रूपए से लेकर 125 रूपए तक का जुर्माना किया गया। जुर्माना अदा न करने पर उनकी सजा की अवधि बढ़ा दी गई। 9 अगस्त 1942 को अखिल भारतीय कांग्रेस कमेटी ने अपना ऐतिहासिक प्रस्ताव 'अंग्रेजों भारत छोड़ो' पारित किया व महात्मा गांधी ने समस्त देशवासियों को 'करो या मरो' का संदेश दिया। 10 अगस्त 1942 को भक्त दर्शन सर्वप्रथम गिरफ्तार कर लिए गए व उन्हें बिजनौर जेल पहुंचा दिया गया। भक्त दर्शन ''कर्मभूमि'' साप्ताहिक समाचार पत्र का संपादन एवं प्रकाशन भी कर रहे थे। उन्हें गिरफ्तार करने के पश्चात ''कर्मभूमि'' के संपादन का दायित्व ललिता प्रसाद नैथानी पर आ गया, लेकिन शीघ्र ही ललिता प्रसाद नैथानी जी को भी नजर बंद कर दिया गया। ''कर्मभूमि'' आंदोलन को गति प्रदान कर रहा था। अतः इस समाचार पत्र पर प्रतिबंध लगा दिया गया। आंदोलन के प्रथम चरण में ही ब्रिटिश गढ़वाल के प्रमुख नेता एवं कार्यकर्ता गिरफ्तार कर लिए गए। पुलिस दमनचक्र के बावजूद ढौरी (डबरालस्यूं) में जिले भर के कार्यकर्ताओं का एक गुप्त सम्मेलन हुआ, जिसमें 29 सितंबर 1942 को लैंसडौंन छावनी पर आक्रमण की रूपरेखा तैयार की गई, लेकिन ब्रिटिश गुप्तचरों द्वारा यह योजना विफल

कर दी गई। उस समय सौरोंपाणी के डाक बंगले को जलाने के अतिरिक्त अन्य कोई तोड़-फोड़ की कार्यवाही नहीं हुई। चमोली तहसील में उप डाकघर को जलाने का प्रयास किया गया और टेलीफोन के तार काट दिए गए। खदेड़ पट्टी में स्थित वन विभाग का बंगला जला दिया गया। इस बंगले को जलाने के अपराध में नारायण सिंह को 7 वर्ष कारावास का दंड दिया गया। 5 सितंबर 1942 को राम प्रसाद बहुगुणा को विद्यार्थियों के आंदोलन का नेतृत्व करते हुए नंदप्रयाग में गिरफ्तार कर लिया गया। योगेश्वर प्रसाद खंडूरी, श्रीधर आजाद, शिव सिंह चौहान, शंभू प्रसाद आदि चमोली के आंदोलनकारियों को गिरफ्तार कर पौड़ी जेल लाया गया। स्वतंत्रता संग्राम में सक्रिय रहने वाले कई कुशल एवं योग्य गढ़वाली कार्यकर्ता स्वतंत्रता प्राप्ति से पूर्व ही जेल की अनेक यातनाओं को सहते हुए एवं गिरे स्वास्थ्य के कारण अकाल मृत्यु के शिकार हो गए। इन सेनानियों में सर्वश्री भोला दत्त चंदोला, सुंदरलाल शास्त्री, लीला नंद डबराल एवं अनुसूया प्रसाद बहुगुणा आदि प्रमुख थे।

छवाण सिंह नेगी ने हरिद्वार में लकड़ी के टाल को जलाने की योजना बनायी, लेकिन असफल रहे, पुलिस से बचते हुए वे दिल्ली चले गए। 8 नवंबर 1942 को दीपावली के अवसर पर पुलिस ने भैरवदत्त धूलिया के निवास पर छापा मारकर क्रांतिकारी थान सिंह रावत, छवाण सिंह व योगेश्वर प्रसाद बहुखंडी को गिरफ्तार कर लिया। सभी को लैंसडौंन लाया गया। जहां इन पर मुकदमा चलाया गया। भैरवदत्त धूलिया को अपराधियों को शरण देने के अपराध में 7 वर्ष कठोर कारावास का दंड दिया गया। पौड़ी में विद्यार्थियों ने राष्ट्रीय ध्वज के साथ जुलूस निकाले। गढ़वाल में कई स्थान पर पुलिस ने आंदोलनकारियों के दमन हेतु गोलियां भी चलाई। 1942 के भारत छोड़ो आंदोलन में जहां सैंकड़ों गढ़वालवासी जेल गए, वहीं अंग्रेजों द्वारा ब्रिटिश गढ़वाल में 5,959 रूपया सामूहिक जुर्माने के रूप में वसूल किया गया। रियासत टिहरी में सन् 1942 के आंदोलन के समय सार्वभौम सत्ता से नाता तोड़ो एवं अपनी जनता से नाता जोड़ो का नारा बुलंद किया गया। 29 अगस्त 1942 को देवप्रयाग पुलिस द्वारा श्रीदेव सुमन गिरफ्तार कर लिए गए। इन्हें टिहरी जेल में न रखकर देहरादून भेज दिया गया। श्रीदेव सुमन को गिरफ्तार कर लेने के पश्चात मसूरी के नवयुवकों का एक दल राष्ट्रीय ध्वज लहराता हुआ टिहरी पहुंचा। इसे देख रियासती सरकार जो ब्रिटिश सरकार द्वारा संरक्षित थी, सचेत हो गई उसने इन नवयुवकों को गिरफ्तार कर लिया। बाद में इन्हें भारी जमानतें देने पर रिहा किया गया। साथ ही इन नवयुवकों को प्रतिदिन थाने में अपनी उपस्थिति देनी अनिवार्य कर दी गई। भगवती प्रसाद पांथरी, आनंद शरण रतूड़ी, श्याम चंद्र नेगी एवं शंकर दत्त डोभाल को आगरा जेल भेज दिया गया। प्रेमलाल वैद्य इन मध्य रियासती आंदोलनों का संचालन करते रहे। 27 दिसंबर 1943 को श्रीदेव सुमन को पुनः गिरफ्तार कर लिया गया एवं टिहरी जेल में बंद किया गया। 35 सेर वजनी बेड़िया इनके पैरों पर डाल दी गई एवं अनेक अत्याचार इनके साथ किए गए, जिसके विरोध में इन्होंने जेल में ही आमरण अनशन प्रारंभ किया। एवं 84 काली संध्यायें गिन-गिनकर 25 जुलाई 1944 को अपना नश्वर शरीर त्याग दिया। इनकी लाश को बोरी में बंद कर चुपचाप भिलंगना नदी में प्रवाहित कर दिया गया। सन् 1946 में डांगचौरा का किसान आंदोलन चरमोत्कर्ष पर था। उनकी प्रमुख मांग राज्य की ओर से वसूल किए जा रहे लगान को बंद करना था। 29 अगस्त 1946 को राजा द्वारा प्रजा मंडल को टिहरी में अवैध घोषित किया गया। 15 अगस्त 1947 को भारत स्वतंत्र हुआ, परंतु टिहरी के लिए यह स्वतंत्रता अभी दूर थी। राजा साहब ने इस दिन एक तरफ शाही महल पर तिरंगा झंडा फहराया तो दूसरी ओर उन्होंने इसी दिन किसान आंदोलन के नेताओं को जेल की सलाखों के पीछे भेजकर टिहरी में प्रजामंडल कार्यालय पर हमला करवाया एवं अध्यक्ष परिपूर्णानंद पैन्यूली को गिरफ्तार करवाया। 16 दिसंबर 1947 सकलाना के मुआफीदारों ने अपने समस्त अधिकार प्रजामंडल को सौंपकर स्वतंत्रता संग्राम की घोषणा कर दी। 10 जनवरी 1948 को कीर्तिनगर को टिहरी रियासत के बंधन से मुक्त कराने के उद्देश्य से आंदोलन हुआ। आंदोलन का नेतृत्व इस बार नागेंद्र दत्त सकलानी कर रहे थे। 11 जनवरी 1948 को आंदोलनकारियों एवं रियासती कर्मचारियों के मध्य भयंकर संघर्ष हुआ, जिसमें नागेंद्र दत्त सकलानी एवं मोलूराम शहीद हुए, लेकिन इनकी शहादत व्यर्थ नहीं गई। इनकी शव यात्रा से ही रियासती कर्मचारी हथियार डालकर आंदोलनकारियों के साथ मिलते चले गए। फरवरी 1948 में टिहरी में अंतरिम सरकार की स्थापना कर दी गई। भारत सरकार ने एक विज्ञप्ति प्रसारित करके 1 अगस्त 1949 को टिहरी राज्य को संयुक्त प्रांत में मिलाने की घोषणा कर दी। इस प्रकार भारतीय स्वतंत्रता संग्राम में गढ़वाल हिमालय एवं यहां की जनता का योगदान अति महत्वपूर्ण है।

आजाद हिन्द फौज

आजादी के इतिहास में आज हिंद फौज की बात न हो स्वयं में स्वतंत्रता संग्राम अधूरा सा प्रतीत होता है। द्वितीय विश्व युद्ध के आरंभ हो जाने पर भारतीय कांग्रेस के शीर्षस्थ नेताओं की वही पुरानी अपील भारतीय नागरिकों से रही कि जैसे भी हो इस समय हमें अंग्रेजों की सहायता करनी चाहिए और उसके बदले स्वराज्य प्राप्त करना ही हमारा प्रमुख लक्ष्य है, लेकिन बंगाल के विप्लवी और उनका नेतृतव कर रहे सुभाष चंद्र बोस इस अवसर को व्यर्थ नहीं जाने देना चाहते थे। उनका मत था कि इस महायुद्ध के अवसर पर अंग्रेजों को दोनों ओर से घेरा जाए जिससे उनमें भय व्याप्त हो जाए। एक ओर से जर्मन का भाग्य विधाता हिटलर इंगलैंड पर भयंकर हमले कर रहा, तो दूसरी ओर सुभाष चंद्र बोस भारतीयों को संगठित कर अंग्रेजों पर हमला करना चाहते थे, लेकिन उनके लिए भारत में रहकर सीमित साधनों से यह कार्य कर पाना आसान नहीं था। ऐसे समय कांग्रेस के शीर्षस्थ नेता इनकी बढ़ती लोकप्रियता से चिंतित थे। स्वयं ब्रिटिश सरकार को यदि किसी से भय था तो वे नेताजी थे। यही कारण था कि इनके स्वतंत्र विचारों के कारण सरकार ने इन्हें 2 जुलाई 1940 को बंदी बना लिया, लेकिन अंग्रेजी हुकूमत उन्हें अधिक समय तक बंदी बनाकर न रख सकी। स्वास्थ्य ठीक न होने के कारण अंग्रेजी हुकूमत ने 5 दिसंबर 1940 को नेताजी को जेल से रिहा तो कर दिया, लेकिन उनके गुप्तचर बराबर उन पर निगाह रखे हुए थे। अंत में 17 जनवरी 1941 आ ही गई। यह दिन भारत के स्वतंत्रता संग्राम के इतिहास का अविस्मरणीय दिन है। संसार व्यापी महायुद्ध छिड़ा हुआ था। ऐसे समय में साम्राज्यवादी शक्तियों का बेड़ा फांदकर सात-समुंदर तेरह नदिया पार कर कैसे वे इतनी दूर बर्लिन जा पहुंचे वहां उपस्थित होना कैसे संभव हो सका, यह तो अविश्वसनीय हैं प्रबल पराक्रांत ब्रिटिश साम्राज्य के इतिहास में ऐसी असंभव बात की कोई कल्पना तक नहीं कर सकता था। विशेष रूप से युद्ध काल में तो यह असंभव ही था,

फिर भी यह संभव हुआ था। बड़े परिश्रम से असीमित अत्याचार, उत्पीड़न और प्रचुर धैर्य से ही संभव हो सका था। 'आजाद हिंद फौज' का गठन एकाएक नहीं हुआ। इसकी पृष्ठभूमि वर्षो पूर्व विदेशी भूमि पर तैयार की जा रही थी। एक दिन बर्लिन की भूमि पर सुभाष के 'आजाद हिंद संघ' ने जन्म लिया। प्रतिदिन सुनने को मिलता था- 'यह आजाद हिंद रेडियो बर्लिन' है। बंगला में समाचार सुना रहे हैं कुसुमपाल। आजाद हिंद रेडियो के प्रारंभ होने वाले दिन से अंतिम दिन तक अपने देशवासियों को वे ही समाचार सुनाते रहे। उस समय भारतवासियों के पास दूर संचार के साधनों का नितांत अभाव था, लेकिन जिसके पास भी उस समय रेडियों था वह भी गुप्त स्थान पर जाकर ही आजाद हिंद रेडियो से समाचार सुन सकता था। सॉडनी कांस्टेशन कैंप के बंदी जीवन से उकता चुके थे सब। जिस समय वे घोर निराशा के दौर से गुजर रहे थे, उसी समय अचानक परराष्ट्र विभाग से आवश्यक निर्देश आया-'अविलंब समस्त भारतीय कैदियों को मुक्त कर दिया जायें' कारण किसी को ज्ञात न था। स्वयं कैंप के इंचार्ज कर्नल स्मिथ तक को कारण ज्ञात न था। समस्त भारतीय कैदी रिहा कर दिए गए। सभी के मन में एक ही प्रश्न उठ रहा था कि मामला क्या है? इसका कारण सिर्फ सुभाष थे, क्योंकि उन्होंने जर्मन सरकार से मांग की थी कि अविलंब समस्त भारतीय सैनिकों को, जो युद्ध बंदी के रूप में जर्मनी के विभिन्न जेलों में कैद थे, रिहा कर दिए जाए। सुभाष का कहना था कि उन्हीं सैनिकों की सहायता से मैं आजाद हिंद फौज बनाऊंगा।

केवल बर्लिन में ही नहीं, जापान में भी इसी तरह के प्रयास कर रहे थे-रासबिहारी बोस, जो लगातार 26 वर्षो से जापान में रह रहे थे। महान विप्लवी रास बिहारी बोस , जिनके क्रांतिकारी संगठनों से चिंतित होकर ब्रिटिश सरकार ने इन्हें जिंदा या मुर्दा पकड़वाने के लिए एक लाख रूपए की रकम घोषित की हुई थी। इनके लिए भारत से बाहर जाने वाले सभी मार्गो पर कड़ी सुरक्षा व्यवस्था का प्रबंध किया गया था, लेकिन ये भारत से बाहर निकलने में व ब्रिटिश सरकार को चकमा देने में सफल रहे। कवि रवींद्रनाथ टैगोर के रिश्तेदार बनकर इन्होंने पासपोर्ट जांच करने वाले अधिकारी को बतलाया कि इनका नाम राजा पीएन टैगोर है और ये कवि रवींद्रनाथ टैगोर के संबंधी होने के साथ-साथ

जब मैं लैंसडौंन में शिक्षा ग्रहण करता था, तो मेरे साथ सेना के अन्य अधिकारियों के बच्चे भी शिक्षा ग्रहण करते थे। वे हम सब हिन्दुस्तानियों को नफरत की नजरों से देखते थे और बात-बात पर हमारे लिए गुलाम शब्द का प्रयोग करते थे। इतना ही नहीं लैंसडौन के सदर बाजार में यदि किसी व्यक्ति को सफेद टोपी पहने किसी अंग्रेज ने देख लिया, तो उस पर उस व्यक्ति को बुलाकर उसकी टोपी अपनी छड़ी से जमीन पर गिरा देते थे। तत्पश्चात उस टोपी को बूट से रौंदकर कुत्ते से फड़वा दिया करते थे, उन्हें गांधी टोपी से बहुत चिढ़ थी।...

भवानी सिंह रावत

उनके निजी सचिव भी है। इन्होंने उक्त अधिकारी से कहा 'मुझे जापान का पासपोर्ट चाहिए', आपने समाचार पत्रों में पढ़ा ही होगा कि ''कवि टैगोर जापान जायेंगे, मैं वहां उनके निजी सचिव के रूप में जा रहा हूं ताकि उनके ठहरने की पूरी व्यवस्था कर सकूं।'' सन् 1912 में वायसराय लॉर्ड हार्डिंग पर बम फेंकने का अपराध रास बिहारी बोस पर था। तब से वे भूमिगत जीवन व्यतीत कर रहे थे। अतंत: 12 मई 1915 में रवींद्र नाथ टैगोर के रिश्तेदार और निजी सचिव राजा पीएन टैगोर के वेश में जापानी जहाज 'सानू की मारू' के डेक पर खड़े थे रास बिहारी बोस। वहीं से इन्होंने अपने देश, अपनी जन्म भूमि के अंतिम दर्शन किए। इन्हीं के निरंतर प्रयत्नों से सन् 1924 में इंडियन इंडिपेंडेंस लेगी नामक संस्था की स्थापना हुई 15 फरवरी 1942 को सिंगापुर का पतन हुआ। 16 फरवरी को सवेरे के आठ बजे थे कि विशाल टैंक वाहिनी को सामने रखकर विजय के गर्व से सिर उठाए जापानी सेनापति लैंफ्टिनेंट जनरल इयामासिटा ने सिंगापुर में प्रवेश किया। उस दिन जापानियों ने ब्रिटिश के 15,000, आस्ट्रेलिया के 13,000 और भारत के 45,000 सैनिकों को गिरफ्तार किया इसके अतिरिक्त 8,000 वे सैनिक थे, जो घायल थे। शाहनवाज खां के अनुसार '16 फरवरी को जब हम अपने कैंपों में जा रहे थे, तो हमारा कमांडिंग अफसर मेजर मकाडम दूसरे अंग्रेज अफसरों के साथ हमसे विदा लेने आया-मुझसे हाथ मिलाते हुए वह बोला कि मैं समझता हूं कि आज से हम और तुम अलग-अलग होते है। उस समय में उसकी इस बात का पूरा मतलब नहीं समझा था, क्योंकि मुझको जापानियों का इरादा मालूम न था। कप्तान मोहन सिंह के कार्यो और उनके आजाद हिंद फौज खड़ी करने के इरादे के बारे में तब तक हममें से बहुत कम लोग जानते थे। हां उच्च पदाधिकारियों को सब मालूम था, पर हमसे सब कुछ छिपाकर रखा गया था। इसलिए जब हम फरेर पार्क में एकत्रित हुए तो हमें कुछ भी मालूम न था कि आगे क्या होने वाला है?' 17 फरवरी 1942 को दोपहर करीब दो बजे फरेर पार्क में मलाया के ब्रिटिश फौजों के हेडक्वार्टर का एक स्टॉफ लेफ्टिनेंट कर्नल हंट, मेजर फुजिवारा, कर्नल एनएस गिल, कप्तान मोहन सिंह और कुछ जापानी व हिन्दुस्तानी अधिकारियों के साथ आया। उसने वहां पर माइक्रोफोन पर कहा -तुम सब आज से लड़ाई के कैदी हो। मैं आज ब्रिटिश सरकार की ओर से तुम सबको जापानी सरकार को सौंपता हूं। आज तक जैसे तुम हमारा आदेश मानते रहे, वैसे ही आज से तुम जापानी सरकार का आदेश मानो, यदि नहीं मानोगे तो तुम सबको सजा होगी' इसके बाद जापानी अफसर मेजर फजिवारा ने कहा मैं जापान सरकार की ओर से तुम सबको अपनी कमान में लेता हूं। कुछ देर बाद फिर उसने कहा कि 'मैं जापान सरकार की ओर से तुम सबको जनरल अफसर कमाडिंग कप्तान मोहन सिंह को सौंपता हूं और उनको तुम्हारे मरने-जीने का पूरा अख्तियार होगा'। कौन थे ये कैप्टेन मोहन सिंह? क्यों जापान के मेजर फजिवारा ने चालीस हजार से भी अधिक भारतीयों को उनके हाथों सौंपा।

सन् 1942 दिसंबर का महीना, हर जगह मलय में मार खाकर उन दिनों ब्रिटिश सेना पीछे हट रही थी। इसी तरह 1/14 नंबर पंजाब रेजीमेंट सेना भी मलय से पीछे हट रही थी। छिन्न-भिन्न, तितर-बितर, दिशाहीन। जापानी अब दूर नहीं रह गए हैं आ ही गए समझो। इस सैनिक जत्थे में थे कमांडिंग अपर लेफ्टिनेंट कर्नल फिज फैट्रिक, कैप्टन मोहन सिंह, कैप्टन मोहम्मद अकरम खां आदि। भूख-प्यास से सभी व्याकुल थे, उस पर कमांडिग अफसर फिज पैट्रिक घायल हो गए थे। उनके लिए एक कदम चलना भी कठिन हो गया था। जो भाग्य में लिखा था वहीं हुआ। सभी जापानियों द्वारा कैद कर लिए गए। कैद में अधिकांश भारतीय सैनिक जो भयभीत थे कि जापानी अब उनके

साथ न जाने कैसा व्यवहार करे। इन सैनिकों को सांत्वना देने एक वृद्ध सिक्ख आगे आए और सभी सैनिकों से बोले 'तुम लोग डरो मत, साहस से काम लो। एक दिन अच्छे दिन आएंगे। मोहन सिंह अवाक् रह गए। ये सिक्ख थे ज्ञानी प्रीतम सिंह, जिन्होंने मोहन सिंह को सारी परिस्थितियों से अवगत कराया और स्वयं फुजिवारा के पास इन्हें ले गए। तत्पश्चात फुजिवारा ने समस्त भारतीय कैदी सैनिकों को कैप्टन मोहन सिंह के हाथों सौंप दिया। इस सारे प्रकरण के पीछे एक ही व्यक्ति का हाथ था और वे थे रासबिहारी बोस, जिन्होंने जापान सरकार से कहा था कि वे इन्हीं भारतीय सैनिकों के सहयोग से आजाद हिंद फौज बनाएंगे।

एक सितंबर 1942 को इंडियन इंडिपेंडेंस लीग को नया नाम दिया गया आजाद हिंद फौज सर्वसम्मति से इसके सभापति चुने गए रासबिहारी बोस, लेकिन रास बिहारी बोस कुछ और ही सोच रहे थे। उनका शरीर वृद्ध हो गया था, स्वास्थ्य टूट चुका था। मृत्यु का भय उन्हें निराश कर रहा था कि उनकी मृत्यु के बाद आजाद हिंद फौज का क्या होगा? उनकी नजर में केवल सुभाष ही ऐसे विप्लवी वीर पुरूष थे, जो सब कुछ संभाल सकते थे।

रास बिहारी के प्रयत्नों से जापान सरकार के माध्यम से सुभाष को बुलावा भेजा गया। बुलावा मिलने पर सुभाष के मन में यह चिंता होने लगी कि हमें दक्षिण पूर्वी एशिया जाना ही होगा। जापान सरकार ने बुलाया है। रास बिहारी बोस ने संदेश भेजा है 'सुभाष तुम आओ', न सिर्फ मैं बल्कि दक्षिण पूर्वी एशिया के तीस लाख भारतीय आज तुम्हारा रास्ता देख रहे हैं। मैं बीमार हूं, तुम आकर मेरी सारी जिम्मेदारी संभाल लो और मुझे मुक्ति दो। उस समय द्वितीय महायुद्ध की अग्नि जल, थल और अंतरिक्ष में फैली हुई थी। ऐसी परिस्थिति में जापान तक सुरक्षित पहुंचने की आशा पांच प्रतिशत थी, लेकिन सुभाष दृढ़ संकल्पित थे। उन्होंने जर्मन सरकार के पास एक नोट भेजा, जिस पर लिखा था 'मैं विश्वास करता हूं कि अभी भी हवाई जहाज, जहाज या सबमेरीन द्वारा मेरे जाने की व्यवस्था की जा सकती है। मैं जानता हूं कि इस काम में काफी खतरा है, लेकिन मैं स्वेच्छा और स्वच्छता से यह खतरा मोल लेने को तैयार हूं कि मेरी यह चेष्टा सफल होगी। किसी तरह की भी मुसीबत, कैसा भी खतरा, कोई भी असुविधा क्यों न हो, इस विषय पर मेरी सहायता करने पर मैं कृतज्ञ रहूंगा। मैं जितनी जल्दी जा सकूंगा उतना ही भारत और हम सबके लिए मंगलमय होगा।'जर्मन का भाग्य विधाता हिटलर किसी भी कीमत पर सुभाष के लिए खतरा मोल नहीं लेना चाहता था, लेकिन सुभाष के मित्र व शुभचिंतक वान ट्रंट के प्रयत्नों द्वारा अंत में हिटलर सुभाष को जापान भेजने को तैयार हो गया। 8 फरवरी 1943 को लगभग 11 बजे प्रातः सब हिन्दुस्तानी नागरिक, जापानी दूत सैनिक स्टॉफ और आजाद हिंद फौज के उच्च अधिकारी एक गैर सैनिक हवाई अड्डे पर सुभाष का स्वागत करने को एकत्रित हुए। दोपहर को दो इंजिनों का एक जापानी हवाई जहाज आया और हवाई अड्डे पर उसी जगह उतरा, जहां सभी लोग प्रतीक्षारत थे। हवाई जहाज से नेताजी सुभाष चंद्र बोस अपने निजी सचिव आबिद हसन के साथ बाहर आ गए उनके साथ थे रास बिहारी बोस के अतिरिक्त कुछ जापानी अधिकारी, जो टोकियो से सिंगापुर तक की इस यात्रा में उनके साथ थे। 4 जुलाई, 1943 को नेताजी ने पूर्ण एशियावासी हिंदुस्तानियों के प्रतिनिधियों के सम्मेलन का एक आरंभिक अधिवेशन किया। कैथे इमारत में एक सभा हुई। इमारत का हाल खचाखच भरा हुआ था। इस सभा में रास बिहारी बोस ने एक ऐतिहासिक भाषण दिया और हिन्दुस्तान की स्वतंत्रता के आंदोलन की बागडोर नेताजी के हाथ में सौंप दी। नेता जी ने उस भारी उत्तरदायित्व को, जो उन्हें सौंपा गया था स्वीकार करते हुए कहा–'मित्रों, अंग्रेजों के विरूद्ध लड़ने के लिए आज तक सेना की कमी थी, आपने हमारी वह कमी पूरी कर दी है। मातृभूमि को दासता मुक्त करने के लिए हम सबको प्राणोत्सर्ग करने लिए के आगे आना होगा।'

25 अगस्त 1943 को सुभाष ने 'आजाद हिंद फौज' के सेनाध्यक्ष का पद ग्रहण किया उस दिन उन्होंने घोषणा की 'हिन्दुस्तान के स्वतंत्रता आंदोलन और आजाद हिंद फौज के हित की दृष्टि से मैंने आज से अपनी सेना की सीधी कमान संभाल ली है। यह मेरे लिए प्रसन्नता और गर्व की बात है। किसी भी हिन्दुस्तानी के लिए हिन्दुस्तान स्वतंत्रता की सेना का सेनापति होने से बढ़कर कोई दूसरी बात सम्मानजनक नहीं हो सकती। मैं अपने आपको 38 करोड़ हिन्दुस्तानियों का सेवक मानता हूं। साथियों हमारा कार्य शुरू हो गया है। ''दिल्ली चलो का'' नारा लगाते हुए हमें तब तक लड़ते जाना है जब तक कि हमारा राष्ट्रीय झंडा नई दिल्ली में वायसराय भवन पर लहराने नहीं लग जाता और आजाद हिंद फौज हिन्दुस्तान की राजधानी के पुराने लाल किले के अंदर विजय परेड नहीं करती। '21 अक्टूबर 1943 के दिन नेताजी ने स्वतंत्र भारत की अस्थायी सरकार की स्थापना की। जिसे 23 अक्टूबर को जापान सरकार ने मान्यता दी और कहा 'हां आजाद हिंद फौज कानूनन वैध है। हम इसे स्वीकृति देते हैं।'

इसके बाद 24 अक्टूबर को वर्मा ने, 27 अक्टूबर को क्रोटिया ने, 29 को जर्मनी ने तथा मांचुकी ने 1 नवंबर को आजाद हिंद फौज सरकार को मान्यता दी। एक नवंबर को चीन की नाकिंग सरकार ने भी इसे मान्यता दी। 19 नवंबर को इटली और उसके बाद फिलिपाइन सबसे अंत में थाईलैंड की सरकार ने इसे मान्यता प्रदान की। दूर आयरलैंड से बधाई पत्र भेजा डि बैलेरा ने, दुनिया के सुविख्यात विप्लवी थे डि बैलरा। इस प्रकार संसार के नौ राष्ट्रो ने आजाद हिंद फौज को मान्यता प्रदान की। 25

अक्टूबर 1943 को अस्थायी आजाद हिंद सरकार ने सिंगापुर में म्युनिसिपल भवन के सामने अकस्मात हिंदुस्तानी नागरिकों और आजाद हिंद फौज के सैनिकों के विराट समारोह की मौजूदगी में ब्रिटेन और संयुक्त राज्य अमेरिका के विरूद्ध युद्ध की घोषणा की। नेताजी ने यह घोषणा पढ़ी-'मंत्रियों की कौसिंल ने अपनी दूसरी बैठक में आधी रात के बाद पांच मिनट व्यतीत होने पर यह प्रस्ताव पास किया, अस्थायी आजाद हिंद सरकार ब्रिटेन और संयुक्त राज्य के विरूद्ध युद्ध की घोषणा करती है।'

जैसे ही यह घोषणा की गई वैसे ही नारों से आकाश गूंजने लगा। वहां पर उस समय पचास हजार व्यक्ति उपस्थित थे। सभी बेकाबू होने लगे और नेताजी तक पहुंचने का प्रयास करने लगे इस पर नेताजी ने कहा कि सभी अपने-अपने स्थानों पर खड़े रहें और हाथ उठाकर युद्ध में सम्मिलित होने की स्वीकृति दें, तो ऐसा प्रतीत होता था, मानों हाथों का एक जंगल खड़ा हो गया। उसके बाद फौज सिपाहियों ने अपनी बंदूकें उठाई और उन्हें अपने कंधों पर रखा। उन्होंने अनगिनत संगीने उठाकर अपनी स्वीकृति दी। इस प्रकार आरंभ हुआ युद्ध का प्रथम चरण। सुभाष चंद्र बोस की क्रांतिकारी गूंज ने गढ़वाली सूरमाओं को भी उद्देशित किया। द्वितीय विश्व युद्ध के दौरान पश्चिमी और पूर्वी दोनों मोर्चो पर गढ़वाल राइफल्स के सैनिक भेजे गए थे। दक्षिण पूर्व एशिया के युद्ध में गढ़वाल राइफल्स की 2/18 तथा 5/18 बटालियन पहले से ही मौजूद थी। 15 फरवरी 1942 को सिंगापुर पर जापानियों का आधिपत्य होने पर लगभग 1800 गढ़वाली सैनिक व अधिकारियों को विभिन्न स्थानों पर बंदी बनाया गया।

गढ़वाल राइफल्स में अधिकतर अंग्रेज अधिकारी थे। सिंगापुर के पतन के समय केवल पांच भारतीय कमांडिंग अफसर रह गए थे। द्वितीय गढ़वाल राइफल्स में केवल कर्नल बुद्धि सिंह रावत और पांचवी बटालियन में कर्नल पितृशरण रतूड़ी ही रह गए थे। सिंगापुर के समर्पण के कुछ दिन पूर्व दूसरी बटालियन के लिए अतिरिक्त सैनिक टुकड़ी के साथ लेफ्टिनेंट कर्नल चंद्र सिंह नेगी व लैफ्टिनेंट कर्नल बागम्बर सिंह नेगी सिंगापुर पहुंचे थे। जनरल जे.के. भोंसले, जिन्होंने सिंगापुर में संयुक्त गढ़वाल राइफल्स की कमान 11 फरवरी 1942 को संभाली थी, वे भी आत्मसमर्पण के समय बटालियन के साथ थे। जून और जुलाई 1942 में गढ़वाली युद्धबंदी, जो सिंगापुर के अतिरिक्त मलाया में भिन्न-भिन्न कैंपों में थे, इन सबको सिंगापुर लाया गया। इन सभी सैनिकों के सम्मुख मुख्य प्रश्न यह था कि इन परिस्थितियों में क्या निर्णय लिया जाए। यह प्रश्न अत्यधिक महत्वपूर्ण था और इस प्रश्न पर निर्णय लेना आसान भी नहीं था। ऐसी स्थिति में सभी सैनिकों को वास्तुस्थिति से अवगत कराया गया और अपने-अपने विचार व्यक्त करने का पूरा-पूरा अवसर दिया गया। कई दिनों के विचार विमर्श के पश्चात सर्वसम्मति से यह निर्णय लिया गया कि जो भी कदम उठाया जाए वह सबको मानना होगा तो सामूहिक रूप से सभी सम्मिलित होंगे और यदि इसे बाहर रहना होगा तो सभी बाहर रहेंगे। यह एक जटिल समस्या थी। क्योंकि वास्तविक निर्णय होना अभी शेष था। पढ़े-लिखे नौजवान सिपाही, एनसीओ, वीसीओ में राष्ट्रीयता की भावना अवश्य थी। इन सैनिकों में बहुत से ऐसे थे, जो सन् 1930 पेशावर कांड के समय गढ़वाल राइफल्स की दूसरी बटालियन में थे और वीर चंद्र सिंह गढ़वाली का उदाहरण उनके सामने था। वस्तुस्थिति यह थी कि सभी जापानियों से सशंकित थे। वे सोच रहे थे कि क्या जापानी वास्तव में भारत की स्वतंत्रता चाहते हैं या मात्र अपना हित लाभ करने के लिए इस सेना का निर्माण कर रहे हैं। कई दिनों तक विचार-विमर्श होता रहा। अंत में गढ़वाली सैनिकों ने सोचा कि जापानी जेलों में चुपचाप पड़े रहने से तो अच्छा है, आजाद हिंद फौज का सैनिक बनना। इसलिए सभी सामूहिक रूप से आजाद हिंद फौज में सम्मिलित हो गए। मिस्टर फिलिप मेंशन जो युद्ध के दौरान भारत सरकार के रक्षा सचिव थे और युद्ध से पहले गढ़वाल के डिप्टी कमिश्नर रह चुके थे, ने गढ़वाल राइफल्स की बटालियन के बारे में ह्यूटूबाल की पुस्तक 'स्प्रिंगिग टाइगर' की प्रस्तावना में लिखा है 'मैं इस बटालियन में जवानों से परिचित था, वे सुदूर पहाड़ी क्षेत्र के रहने वाले थे। सही नेतृत्व पाने पर वे अच्छे सैनिक थे। इस बटालियन में सिंगापुर के पतन होने से कुछ पहले एक भारतीय ऑफिसर की नियुक्ति हुई थी। उसने कहा था कि अंग्रेज हार गए हैं और अब उनके समक्ष दो ही विकल्प हैं-या तो जापानियों की टट्टी खोदना या फिर सैनिक बनना, लेकिन उस समय स्वतंत्र भारत की सेवा के लिए उन्होंने (गढ़वालियों ने) सैनिक बनना स्वीकार किया।' फिलिप मेंशन के उपरोक्त कथन से यह स्पष्ट हो जाता है कि गढ़वाली सैनिकों में 'आजाद हिंद फौज' में सम्मिलित होने का जो निर्णय लिया वह राष्ट्रीयता की भावना से ओत-प्रोत था। आजाद हिंद फौज में गढ़वाली सैनिकों की दो बटालियनें बनायी गई। एक बटालियन को फर्स्ट फील्ड रेंजीमेंट में और दूसरी को सुभाष रेंजीमेंट में सम्मिलित किया गया। सिंगापुर में बनने वाली आजाद हिंद फौज से पूर्व जर्मन में निर्मित सुभाषचंद्र बोस की आजाद हिंद फौज में गढ़वाली सैनिकों का विशेष योगदान रहा। जर्मन में इस सेना में गढ़वाली सैनिकों की संख्या लगभग 250 थी। इसमें वारंट ऑफिसर अमर सिंह भंडारी, शंकर सिंह नेगी, बृजमोहन रतूड़ी, गोविंद सिंह व हेमचंद्र रमोला ने प्रमुख भूमिका निभाई। नेताजी के जापान चले जाने से भी जर्मनी में आजाद हिंद फौज बनी रही। चूंकि जर्मन शाखा भारत की सीमा से अत्यधिक दूर थी अतः इस सेना को युद्ध में भाग लेने का सुअवसर प्राप्त नहीं हो पाया, लेकिन फिर भी इस शाखा के जवानों से मिलने पर ज्ञात होता है कि आज भी उनके हृदय में नेताजी व देश के प्रति प्राणोत्सर्ग की भावना ज्यों की त्यों बनी हुई थी। जनवरी 1944 में नेताजी ने अपना मुख्यालय सिंगापुर से रंगून ले गए, ताकि वे भारत-वर्मा सीमा पर ही रहकर अपनी सेना का संचालन कर सकें। इसी क्रम में आजाद हिंद फौज का पहला डिवीजन वर्मा पहुंच चुका था और इस डिवीजन में एक गढ़वाली बटालियन भी थी। दूसरी गढ़वाली बटालियन दूसरे डिवीजन में बाद में बर्मा पहुंची। भारत में प्रवेश करने का आजाद हिंद फौज के सैनिकों में सर्वप्रथम सौभाग्य गढ़वाली सैनिकों को मिला। इस प्रकार वर्षो तक मातृभूमि से दूर रहे स्वतंत्रता के इन मतवाले सैनिकों में गढ़वाली सैनिक सबसे आगे थे। सुभाष रेजीमेंट की इस गढ़वाली बटालियन का नेतृत्व जनरल शाहनवाज खां कर रहे थे। कमांडिग अफसर थे पदम सिंह गुंसाई। यह बटालियन भारत वर्मा सीमा के अंदर मणीपुर फ्रंट पर तैनात की गई थी। दूसरी बटालियन में मेजर दर्शन सिंह नेगी की कमांड में मध्य बर्मा क्षेत्र में इरावदी नदी के किनारे तथा पोपा पहाड़ी के समीप युद्ध में भाग लिया। दोनों बटालियनों ने युद्ध के मैदान में अनेक वीरतापूर्वक कार्य किए। आजाद हिंद फौज में 23266 भारतीय

सैनिकों व अफसरों ने भाग लिया, जिसमें गढ़वाली सैनिकों व अफसरों की संख्या 2500 थी। अपने साहसिक कार्यो एवं विश्वसनीय पदों पर कार्य करके गढ़वाली सैनिकों व अधिकारियों ने आजाद हिंद फौज में अपने लिए विशिष्ट स्थान बना लिया था। युद्ध के दौरान गढ़वाली सैनिक अपने प्राणों का मोह त्याग आगे बढ़ रहे थे। परिणामस्वरूप आजाद हिंद फौज में वीरता प्रदर्शित करते हुए 600 गढ़वाली सैनिक शहीद हुए। यहां तक कि आजाद हिंद फौज में प्रथम शहीद होने का गौरव गढ़वाल के जीत सिंह को मिला। उनके साथियों ने उनके मृत देह के सामने शपथ ली थी-'मित्र हम तुम्हें कभी नहीं भूलेंगे इसका बदला हम लेकर रहेंगे, हमारा तो हिसाब सीधा सा है-खून का बदला खून, जान का बदला जान।'

गढ़वालवासियों की वीरता व योग्यताओं को देखते हुए नेताजी ने उन्हें ऊंचे-ऊंचे पदों पर प्रतिष्ठित किया। 2/18 बटालियन के कैप्टन चंद्र सिंह नेगी को लैफ्टिनेंट कर्नल का पद प्राप्त हुआ और उन्हें सिंगापुर में स्थापित ऑफिसर्स ट्रेनिंग स्कूल में कमांडेंट के पद पर नियुक्ति दी गई। उसी बटालियन के सूबेदार देव सिंह दानू को मेजर बना कर नेताजी ने अपनी अंगरक्षक गढ़वाली बटालियन का कमांडर नियुक्त किया। कैप्टेन बुद्धि सिंह रावत को लैफ्टिनेंट कर्नल बनाकर नेताजी ने अपना निजी सहायक नियुक्त किया। 5/18 गढ़वाल राइफल्स के कैप्टन पितृशरण रतूड़ी को लेफ्टिनेंट कर्नल बनाकर सुभाष रेजीमेंट की प्रथम बटालियन का कमांडर नियुक्त किया गया। ले. कर्नल रतूड़ी के नेतृत्व में इस बटालियन के जवानों ने सर्वप्रथम सन 1944 में भारत में कदम रखा और मौडोक (अब बंगलादेश) एक अफ्रिकन बटालियन पर आक्रमण कर उसे बीस मील पीछे खदेड़ दिया। इस बटालियन की टुकड़ियों ने कावम बाजार पर भी, जोकि भारत की सीमा के अंदर है पर भी अधिकार कर लिया। आजाद हिंद फौज के मेजर जनरल शहनवाज खां के शब्दों में 'लेफ्टिनेंट कर्नल रतूड़ी के नेतृत्व में पहली बटालियन के मोडोक पर रात के समय तेजी से आक्रमण किया, शत्रु इस आक्रमण के लिए तैयार नहीं था। यह भाग खड़ा हुआ और अपने पीछे भारी मात्रा में राशन, आटा, घी, चीनी आदि के साथ ही ढेर सारा गोला बारूद जिसमें तीन मोर्टर भी शामिल थे और जिनकी हमें उस समय अत्यधिक आवश्यकता थी, छोड़ गया।' इस प्रशंसनीय कार्य को ही करने का परिणाम था कि नेताजी ने स्वयं अपने हाथो से उन्हें 'सरदार ए जंग' का पदक प्रदान किया। कुछ समय पश्चात उन्हें नेताजी ने व्यक्तिगत स्टॉफ में नियुक्त किया गया। सूबेदार मेजर पदम सिंह गुंसाई को मेजर का पद प्रदान कर उन्हें सुभाष रेजीमेंट की तीसरी बटालियन का कमांडर नियुक्त किया गया। इस बटालियन नें उनके नेतृत्व में वर्मा से आगे बढ़ते हुए असम की सीमा पर आक्रमण की बागडोर संभाली थी, परंतु युद्ध सामग्री उपलब्ध न होने के कारण इसे वापस लौटना पड़ा। 27 मई 1945 के दिन पदम सिंह गुंसाई के नेतृत्व में यह बटालियन बैंकाक में नेताजी से मिलने के लिए चल पड़ी, परंतु लगभग साढ़े तीन हजार मील लंबी इस पैदल यात्रा में पदम सिंह गुसांई शहीद ए भारत बन गए। आजाद हिंद फौज में बहादुर ग्रुप नामक कुछ विशेष टुकड़ियां बनाई गई थी। इनका कार्य दुश्मन के कार्यो की निगरानी करना था तथा तोड़-फोड़ की कार्यवाही कर दुश्मन की संचार व्यवस्था को नष्ट करना था। इन टुकड़ियों में गढ़वाली सैनिकों का योगदान काफी सराहनीय था। इनमें प्रमुख मेजर मान सिंह भंडारी, कैप्टन गुमान सिंह भंडारी व लेफ्टिनेट गुमान सिंह रावत थे, जिनका कार्य प्रशंसनीय रहा।

नेताजी की अंगरक्षक टुकड़ी के कमांडर कैप्टन गजेंद्र सिंह पुंडीर थे, जिन्होंने प्रारंभ से अंत तक अपना उत्तरदायित्व बखूबी निभाया। नेताजी के निजी अर्दली के लिए कुंदन सिंह को चुना गया। कुंदन सिंह ने नेताजी की जो सेवा की उसका परिणाम यह हुआ कि वह नेताजी का विश्वासपात्र बन गया। नेताजी ने अपने व्यक्तिगत प्रयोग के लिए जिस वाहन को चुना था। उसका चालक भी गढ़वाली सैनिक हवलदार मनबर सिंह नेगी था।

युद्ध के समय भयंकर गोलाबारी में भी मनबर सिंह नेगी ने नेताजी की कार का संचालन बड़े साहस व कुशलता से किया। 'आजाद हिंद फौज' में सम्मिलित गढ़वाली सैनिकों के बारे में जनरल मोहन सिंह ने कहा था 'पेशावर सैनिक विद्रोह से आजाद हिंद फौज की नींव डालने में प्रेरणा मिली और पेशावर सैनिक विद्रोह से प्रेरित गढ़वाल सैनिक सर्वप्रथम आजाद हिंद फौज में सम्मिलित होने आगे आए।'

कर्नल बुद्धि सिंह रावत का कहना है कि 'अधिकांश गढ़वाली सैनिक अंग्रेजों की रंगभेद की नीति के कारण सुभाषचंद्र बोस के समर्थक हो गए थे। वे कहते थे कि सिंगापुर में आत्मसमर्पण के बाद ब्रिटिश अफसरों को अलग कर दिया गया था और भारतीय अफसरों को अलग। इस भेदभावपूर्ण व्यवहार का कारण केवल यह था कि भारतीय अंग्रेजों के अधीन थे।'

'आजाद हिंद फौज' में गढ़वाली वीरों का योगदान ज्ञान सिंह बिष्ट के बिना अधूरा ही रहेगा। मलाया में आजाद हिंद फौज की स्थापना के समय उन्हें सैकिंड लैफ्टिनेंट का पद प्रदान किया गया था। तत्पश्चात उन्हें नेहरू ब्रिग्रेड की ओर से इरावदी नामक स्थान पर शत्रु से लड़ने का आदेश दिया गया था। इस क्षेत्र टौंगजिन नामक स्थान पर 17 मार्च 1945 के दिन ज्ञान सिंह बिष्ट को अपने केवल अठानब्बे सैनिकों के साथ शक्तिशाली ब्रिटिश सेना से लड़ना पड़ा, जिसमें उन्हें वीरगति प्राप्त हुई। इस संदर्भ में मेजर जनरल शहानवाज खां ने लिखा है

'चौकी और बटालियन हैडक्वार्टर के बीच कोई संचार साधन उपलब्ध न होने पर ज्ञान सिंह ने जब यह अनुभव किया कि मात्र राइफलों से शत्रु को अधिक देर तक रोका जाना असंभव है और यदि हम अपनी खाइयों में ही छिपे रहते हैं तो हम सबकी कैद या मृत्यु निश्चित है। अत: बिष्ट ने अपने सैनिकों को शत्रु की सेना पर आक्रमण करने का आदेश दे दिया। वे तीसरी प्लाटून को आज्ञा दे ही रहे थे कि एक गोली उनके सिर में जा लगी और वे हमेशा-हमेशा के लिए धरती माता की गोद में सो गए।' इसके अतिरिक्त सैकड़ों गढ़वाली सैनिकों ने भारत-वर्मा सीमा पर इस स्वतंत्रता संग्राम में अपने प्राणों की आहुति देकर देश-प्रेम का अद्वितीय उदाहरण प्रस्तुत किया। इन वीरों की अस्थियां आज भी भारत-वर्मा सीमा के घने जंगलों व घाटियों में बिखरी पड़ी है। इन वीरों का स्वप्न अंतत: भारत के स्वतंत्र होने पर साकार हुआ। स्वतंत्रता के पौधे को अपने रक्त से सींचने वाले, आजादी के दीवाने 'आजाद हिंद फौज' के अधिकांश गढ़वाली वीर यद्यपि आज चिरनिन्द्रा में निमग्न है लेकिन उनकी देश भक्ति, राष्ट्रीयता की भावना एवं उनका बलिदान हमारी युवा पीढ़ी को एक सबल सशक्त नैतिक आधार प्रदान कर सकता है।

डोला-पालकी आंदोलन

आधुनिक सुधारों के इस युग में गढ़वाल क्षेत्र इतना पिछड़ा हुआ है कि उसमें आर्थिक, धार्मिक, राजनैतिक और आर्थिक सुधारों के विचारों को सर्वसाधारण लोगों तक पहुंचाना सहज नहीं और उनको पहुंचाने के लिए साधन भी उपलब्ध नहीं हैं। यहां की भूमि पथरीली ऊबड़-खाबड़ पहाड़ और जंगलों से आच्छादित हैं और इसका क्षेत्रफल लगभग 9 हजार वर्गमील हैं।

1931 की जनगणना के अनुसार 533750 शायद अब छह लाख मनुष्य एक दूसरे से दूर-दूर हुए हैं। इसमें से 88319 (शायद अब एक लाख) मनुष्य एक दूसरे से दूर-दूर हुए हैं। जो अनेक उपजातियों में विभाजित हैं। यहां आने-जाने के मार्गो की कमी, जिले के अंत:स्थल तक पहुंचने के लिए रेल और मोटर मार्गो का भयंकर अभाव, तार-डाक के प्रबंध की सर्वथा कमी है, इसलिए सुधारक संस्थाओं के विद्वान कार्यकर्ता नए विचारों को उतनी जल्दी इस जिले के निवासियों तक नहीं पहुंचा सकते हैं, जिस तरह से भारत के अन्य जिलों में पहुंचाएं जा सकते हैं। पुराने विचार के लोगों की यहां आज भी अधिकता है और यदि उसमें कोई सुधार संबंधी नई बात का जिक्र किया जाए तो वह सर्वसाधारण के लिए आश्चर्य की चीज बन जाती है।

शिल्पकार आमतौर पर भूमिहीन हैं और वे अधिकतर बिठों (सवर्णो) के ऊपर आश्रित रहते हैं। बिठ लोगों का हल लगाना, बोझा ले जाना, उनके मृत पशुओं को फेंकना आदि-आदि बाहरी काम सब शिल्पकार ही किया करते थे और अब भी करते हैं और बिठ लोग उनको इस काम के बदले में कुछ खाना, कपड़ा आदि दे देते हैं। लेकिन अब कुछ समय से शिल्पकारों में से कुछ लोगों ने इनके कामों को छोड़ दिया है, जिसकी वजह से आपस में मनोमालिन्य होना शुरू हो गया है। इससे पहले दोनों जातियों के बीच संदर प्रेम था, एक दूसरे के सुख-दुख में शामिल होते थे। बिठ और शिल्पकार लोगों में आपस में चाचा-ताउ और भाई आदि के रिश्ते भी चले आ रहे हैं, जिससे आपस में एक दूसरे से पिछले परस्पर के सुंदर व्यवहार का पता चलता है। लेकिन अब थोड़े ही समय से इन दोनों दलों में अनेक झगड़ों फसाद और तुच्छ विषयों पर अदालतों में मुकदमें चलने शुरू हो गए हैं।

इन झगड़ों का प्रारंभ तो यहां से शुरू होता है कि शिल्पकार लोग चाहते हैं कि वे भी सवर्ण हिंदू की तरह रहें। जनेऊ पहनें, पूजा-पाठ करें। विवाहोत्सव के समय अपने वर-वधू को बिठों की भांति सम्मान से डोला-पालकी में बैठकर ले जाएं। यही बात यहां के बिठों को अचानक सहनीय नहीं हुई और इन कारणों को लेकर आपस में संघर्ष बढ़ता ही गया। यह विवाद इतना बढ़ा कि अब दोनों जातियों को आर्थिक हानि पहुंचाने का कारण बन गया।

शिल्पकार लोगों का यह नागरिक अधिकारों का आंदोलन सन् 1920 से प्रारंभ हुआ था। सबसे पहले दुगड्डा जो गढ़वाल का प्रमुख द्वार है और जहां तक हर एक विचार शीघ्रता से पहुंच जाते हैं, उसके आसपास के तीन-चार गांवों के शिल्पकार लोग आर्य समाज में प्रविष्ट हुए और उन्होंने अपने सामाजिक और धार्मिक अधिकारों को बिठों की भांति इस्तेमाल करना शुरू किया। आसपास के लोगों में इस नई बात से एकदम कोलाहल सा मच गया। ऐसी दशा में इन शिल्पकारों को रास्तों पर चलने से रोका जाने लगा। उनका धाराओं से पानी लेना बंद किया गया। गांवों से निकाला गया और अनेक प्रकार से यातनाएं दी जाने लगी, लेकिन वे लोग भी कष्ट सहन करते हुए अपने अधिकारों की दृढ़ता से रक्षा करने पर लगे रहे। आज इस जिले के लगभग समस्त शिल्पकार समुदाय में इन नागरिक अधिकारों को प्राप्त करने के लिए जागृति उत्पन्न हो गई है। अब यह आंदोलन सिर्फ आर्य समाज में सम्मिलित शिल्पकारों तक ही सीमित नहीं है, बल्कि प्रत्येक शिल्पकार इस ओर अग्रसर होता जा रहा है।

घटनाओं का संक्षिप्त विवरण

सबसे पहली बारात सन् 1923 में ग्राम बोरगांव दुगड्डा के निकट से मौजा कांडी पट्टी बिजलौट में गई थी। बारात जब दूसरे दिन पालकी सहित सांयकाल को कांडी ग्राम में पहुंच रही थी कि अचानक वहां के बिठों ने पालकी को देखकर बारात पर हमला कर दिया। बारातियों में और बिठों में काफी मारपीट हुई और रात तक समस्त इलाके के बिठ लोगों ने उनको पूरी तरह से घेर दिया, जिस मकान में बारात ठहरी हुई थी। रात को लगभग इलाका पटवारी भी वहां शांति रक्षा के लिए पहुंच गए इसीलिए रात में किसी प्रकार अशांति नहीं रही। दूसरे दिन भी बारात घेरे में ही पड़ी रही। सांयकाल को दोनों दलों में तय हुआ कि बारात यहां से बिना डोला-पालकी के वापिस जा सकेगी और अंत में तीसरे रोज ऐसा ही हुआ। डोला-पालकी वहीं छोड़कर वर-वधू को पैदल लेकर कड़तिया नामक स्थान में रात्रि विश्राम के लिए पहुंचे। चौथे रोज प्रात:काल कांडी ग्राम से दो आदमी डोला-पालकी को लेकर रातों-रात वहां पहुंच गए, जहां पर बारात ठहरी हुई थी, फिर बारात वहां से डोला-पालकी में रवाना हुई और जैसे ही बारात सेंधीखाल पहुंच रही थी, वहां पर बिठों ने चारों तरफ से कई सौ की संख्या में आकर हमला कर दिया। काफी मारपीट और

छीना-झपटी के बाद डोला-पालकी और वधू पक्ष से मिला हुआ दान का सामान पलंग, बर्तन सब एकत्रित भीड़ ने लूट लिया। बारात वहां से वधू को पैदल लेकर अपने घर पहुंची। इस बारात में गढ़वाल के प्रमुख आर्य समाजी कार्यकर्ता डॉ. शेर सिंह नेगी और आर्य समाज के पुरोहित पं. आनंदी प्रसाद गौड़ भी शामिल थे। इस बारात को लूटने का मामला अदालत में बड़े जोरों से चला, जिसमें इस बारात को लूटने में बिठों के कई लीडर गिरफ्तार किए गए और उनके खिलाफ मुकदमें चलाए गए। आर्य समाज में विशेष रूप से स्वामी परमानंद जी महाराज को इस मुदकमें को लड़ाने के लिए यहां भेजा गया था। इस मुकदमें में दोनों पक्षों के हजारों रूपए व्यय हुए। अंत में गढ़वाल के कुछ प्रमुख लीडरों ने बीच में पड़कर राजीनामा करा दिया। उस आपसी समझौते में यह तय किया गया था कि उस इलाके के बिठ भाइयों की ओर से कोई रोकटोक नहीं होगी। तब सरकार ने भी उस मुकदमें को खत्म कर दिया और तब से अब तक उस इलाके में एक आध -साधारण घटना के अतिरिक्त किसी बारात में कोई रोकटोक नहीं हुई और अब बारातें अच्छी तरह निकलती रहती हैं। 1924 के फरवरी मास के अंत में ग्राम कूरीखाल से एक बारात मौजा बिंदलगांव जाने वाली थी, लेकिन उस बारात में अछूत लोग जो शुद्ध होकर आर्य हो गए थे, प्राचीन हठ धर्मियों के रिवाज के मुताबिक डोले (डोले-पालकी, जो कि एक लकड़ी की चौकी होती है) और अछूत जिसे बनाते हैं और अपने कंधों पर ले जाते हैं। उस पर वधू को ले जाना अन्याय था लेकिन मुझे इस बात का बड़ा अचंभा हुआ कि मैं जब बारात के साथ बिंदलगांव जाने लगा तो देखा कि नीचे इस जुड्डे मुकाम में दो हजार ब्राह्मण, क्षत्रियों और मुसलमानों का गिरोह मय ढोल-दमाऊं, बाजे सरियां, लाठियां, तलवार और खुंखरियां लेकर तैयार बैठा है। इस गिरोह को देखकर सारे बारात के लोग घबरा गए। शिल्पकार लोग डर के मारे बार-बार पेशाब के बहाने झाड़ियों में दुबक कर बैठ जाते थे। गिरोह बिल्कुल लूटमार की तैयारी में था। जिधर देखों, पकड़ो मारो की आवाज आती थी। जब मैंने देखा कि यहां लड़ाई से काम न चलेगा तो मैं आगे हुआ। तब मैं बिल्कुल निर्भय था। मुझे पूरा विश्वास था कि मैं शिवाजी और महाराणा प्रताप के वंश का हूं। अत: मुझे निश्चिंत होकर काम लेना चाहिए। जब मैंने देखा कि गिरोह वाले बातों से नहीं मानेंगे, तब एक राजनैतिक चाल चली, उनसे कहा कि कल डोला नहीं लायेंगे गिरोह वालों ने कहा कि चिट्ठी लिख दो। मैंने चिट्ठी लिख दी, वे खुश होकर चले गए। दूसरे दिन वे बारात की राह पर अधिक संख्या में आए, मार्ग में प्रतीक्षा करने लगे। मैंने उसने बचने की चाल चली थी। दूसरे दिन मैं अपनी भावी तैयारियों में लग गया। कुछ साथियों को गुप्त रास्ते से डिप्टी कश्मिनर के पास भेजा। वहां से कोई प्रबंध नहीं हुआ। 8 दिन के बाद डिप्टी कलेक्टर आए और उन्होंने हमारी मुक्तता की। यदि मैं इस बारात में न होता तो इस बारात में कई एक जाने जाती और यदि बच जाते तो मुसलमान हो जाते। मौलवियों ने इस मौके को अपनाने का बड़ा यत्न किया, लेकिन सब असफल रहे। बाद में हमें डोले का सदा के लिए हुक्म मिल गया। इस लड़ाई ने मुझे आत्मिक बल की शिक्षा दी। इस घटना का उल्लेख स्वर्गीय पं. अर्जुन देव भारती महाराष्ट्र निवासी की डायरी से प्राप्त हुआ जो उस समय इस जिले में आर्य समाज की ओर से डीएवी स्कूलों का संचालन करते थे। इस बारात में स्व. चौधरी बिहारी लाल देहरादून निवासी भी सम्मिलित हुए। कोरीखाल जहां से बारात गई थी और बिंदलगांव जहां बारात को जाना था ये दोनों गांव शुद्ध आर्य सामाजियों के थे। पहले रोज जब बारात कोरीखाल से रवाना हुई थी, उस दिन बारात के साथ पालकी नहीं थी। वर पैदल ही यात्रा कर रहा था, लेकिन यह निश्चिय था कि दूसरे दिन लड़की सरकारी सहायता द्वारा डोले में लाई जाये। बिठ लोग पहले से ही इसलिए जमा हो गए थे क्योंकि उनको यह आशंका थी कि ये दलित लोग जरूर पालकी लायेंगे, जब उनको बारातियों के साथ पालकी नहीं दिखाई दी, तो उन्होंने स्व. अर्जुनदेव भारती से लिखित वचन ले लिया कि कल बारात डोले सहित नहीं आयेगी और अनर्थ हो जाने के भय से उसी लिखित अनुसार बारात दूसरे दिन वापस नहीं लौट सकी। इधर इस प्रकार विचार पूर्वक काम न लिया जाता तो संभव था कि कोई भयंकर दुर्घटना हो जाती। 2 फरवरी 1929 को श्री पंचम सिंह ग्राम छोटी निवासी की बारात पालकी सहित मौजा बसोखी जा रही थी कि सती कैमठ के आगे जो डाडामंडी के पास है, लंगूर पट्टी के बिठों ने रोक दी। बारात लगातार दो रोज तक बिना भोजन, वस्त्र के नदी के किनारे ठंड में पड़ी रही, तीसरे रोज बारात पटवारी और कानूनगो की सहायता से गांव पहुंची। बारात लड़की को लेकर डोला-पालकी सहित वापस आना चाहती थी कि इतने ही में बिठों के एक गिरोह ने लड़की के पिता के घरके चौक में बारात पर हमला कर दिया, वर का बिस्तर, बर्तन, पलंग, बाजे और डोला पालकी छीन के ले गए। इस घटना को पुलिस ऑफिसर, कानूनगो वहीं पर खड़े-खड़े देखते रहे। ऐसी दशा में बारात वापिस नहीं हो पाई और निराश होकर वहीं रूकी रही। 12 फरवरी 1929 को 20 ग्रामों के आर्य और शिल्पकारों की एक आमसभा स्थान दुगड्डा में श्री धर्मेंद्रनाथ (नजीबाबाद निवासी) के सभापतित्व में हुई और जिसमें निम्नलिखित प्रस्ताव द्वारा सरकार को बारात निकालने का अल्टीमेटम दिया गया। यह गढ़वाल के 20 ग्रामों की आर्य जनता निश्चिय करती है कि बैसोखी गांव में आर्यो की एक बारात जो तारीख 2 फरवरी से रूकी पड़ी है, जिसका कि कुल सामान तारीख 10 को लूटा गया है, यदि सरकार ने 20 तारीख के अंदर मय डोला-पालकी समेत गोदीगांव न पहुंचाया तो 21 तारीख से सत्याग्रह किया जाएगा। इस प्रस्ताव के अनुसार डिप्टी कलेक्टर ने 21 तारीख को बारात को पैदल बिना डोला-पालकी के वापस गोदी ग्राम पहुंचा गए, लेकिन जिन बिठ लोगों ने बारात का सब सामान लूट लिया था, उनके खिलाफ कोई कानूनी कार्यवाही नहीं की गई। इन अत्याचारों से पीड़ित होकर 24 मार्च 1929 को इन लोगों ने करीब पांच हजार की संख्या में ईसाई होना निश्चय कर लिया था। जब इनकी भीड़ कोटद्वार मिशन बंगले के मैदान में लगी हुई थी, तो आर्य समाज के चौखेलाल, सत्यपाल, पं. कृपाराम मिश्र, पं.अर्जुन देव भारती, पं. श्रमानंद वैद्य, ठा. बीर सिंह, पं. रेवानंद और बुद्धिराम आदि सज्जनों को भेजा। इनके प्रत्यन से सब तो नहीं पर बोरगांव और बिंदलगांव के कुछ लोग ईसाई धर्म में शामिल हो गए। जो आज भी ईसाई हैं। उनके अनेक बच्चे मिशन स्कूलों में शिक्षा पा रहे हैं 1932 की बात है कि एक बारात जुवा गांव से पालकी में ग्राम लंगूरी के लिए प्रस्थान हुई। बारात जैसे ही हनुमंती नामक स्थान पर पहुंची थी कि सवर्ण हिंदुओं ने बारात को एक रात वहीं पर रोक दिया। दूसरे दिन बारात पुलिस की सहायता से डाडामंडी के आगे कुछ ही दूर जा पाई थी कि बारात को फिर वहीं रोक दिया गया। कई रोज तक रोके रखने के बाद बारात को तहसीलदार ने पुलिस की सहायता से कहीं पर सवारी में और

कहीं पर पैदल निकाला। बारात निकलने के लिए कोई खास नियम नहीं थे वह तो सरकारी ऑफिसर और उत्तेजित भीड़ के कहने के मुताबिक ही बारातें निकाली जाती थी। ऐसी उत्तेजित अवस्था में इसके अतिरिक्त और किया भी क्या जा सकता था? 3 फरवरी 1934 को जब मि. ब्राउन, डिप्टी कमिश्नर इस जिले से अन्यत्र तबादले में जा रहे थे, उस समय उनके अच्छे कामों के उपलक्ष्य में उनको अनेक मांगपत्र दिए गए, उनमें एक शिल्पकार भी था। उस समय मि. ब्राउन ने डोला-पालकी के संबंध में इस प्रकार कहा था। 'गढ़वाल में ऐसा कोई डिवीजन नहीं है कि दलित लोग डोला-पालकी में न जा सकें। दलित लोग बिना रोक-टोक डोला-पालकी में सरकारी सड़क, पगडंडी के आम व खास रास्तों पर जा सकते हैं, सिर्फ सम्मान के लिए सब जातियों की भांति चौक में उतरना चाहिए। इसके खिलाफ जो लोग दलितों को डोला-पालकी में जाने से रोकेंगे वह कानूनन सजा पाएंगे और ऐसे लोगों को अवश्य दंड मिलना चाहिए।'

इससे पहले दो बारातें अड़चनों में होते हुए निकली थी, जिनमें से एक 19 जनवरी 1932 को ग्राम ल्वींठा से पालकी में नजदीक ही जड़ियाना ग्राम जा रही थी, मार्ग में किसी बिठ भाई का भी मकान न था, पर फिर भी एक आम रास्ते पर उस नजदीक के बिठों ने बड़ी संख्या में एकत्रित होकर पालकी को आगे जाने से रोक दिया। कई दिन तक रोके रखने के बाद बारात सरकारी सहायता से निकाल दी गई थी, लेकिन बारात वालों को इसे रोके रखने से पर्याप्त क्षति हो गई थी, इसलिए उन्होंने अपने खर्च का दावा अदालत में रखा और अदालत ने 197(3) की डिग्री बारात वालों के पक्ष में दी। अदालत में इस मुकदमें को लड़ाने के लिए श्री श्रद्धानंद दलितोद्धार सभा की और से पं. रामप्रसाद आर्य शिमला निवासी ने वकील से पीड़ितों को आर्थिक सहायता देकर मद्द पहुंचाई। यदि यह कहा जाए कि इस मुकदमें का सारा व्यय सभी ने ही उठाया तो अत्युक्ति न होगी, परंतु जब बिठ भाइयों से हर्जाने की डिग्री वसूल हुई तो इन लोगों ने उस रूपए को वापिस नहीं किया जिससे इस सभा की ओर से आगे इन लोगों को कोई सहायता न मिल सकी। अगर ये लोग थोड़े स्वार्थ में आकर उस रूपए का उपयोग स्वयं न कर सभा को वापिस कर देते तो सभा निश्चिय ही डोला-पालकी के संबंध में होने वाली घटनाओं में बराबर सहायता करती रहती। दूसरी एक बारात 1933 में लंगूरी ग्राम से मैंदोली आई। बारात के साथ सरकारी कर्मचारी हल्का कानूनगों भी थे। जब बारात जहरी गांव के निकट पहुंची तो गांववालों की तरफ से यह आपत्ति उठाई गई कि बारात उनकी सरहद के अंदर पैदल चलाई जाए। बहुत कहासुनी के बाद उपस्थित कानूनगो ने आज्ञा दी कि बारात आपत्ति किए गए स्थान पर पैदल जाएगी। इस पर लड़के को पालकी से उतार दिया गया, लेकिन दूसरे दिन जब बारात डोला-पालकी समेत वापस लौटी तो उस स्थान पर लड़का तो पालकी से उतर गया पर लड़की को डोले से नहीं उतारा गया। इस पर पुलिस ऑफिसर कानूनगो ने वर और वधू पक्ष के कुछ लोगों के खिलाफ किसी की सरहद में जबरदस्ती सवारी ले जाने के अपराध में कानूनी कार्यवाही कर दी। मातहत अदालतों ने तो गढ़वाल में उतरने-चढ़ने के रिवाजों की पुष्टि कर मुकदमे का निर्णय बिठों के पक्ष में दिया, लेकिन जब बारातियों की ओर से इस मामले में अपील हाईकोर्ट में की गई तो 27 फरवरी 1939 को इलाहाबाद हाईकोर्ट ने मुकदमें का निर्णय गढ़वाल के दलितों के पक्ष में दिया और उतरने-चढ़ने के कथित रिवाज को गरीबों को तंग करने वाला बताया। लेकिन इस निर्णय का असर होना चाहिए था, लेकिन नहीं हुआ और फिर बारातें पूर्ववत बिठों द्वारा रोकी जाती रही हैं।

सोलापुर कांग्रेस का प्रस्ताव

27 दिसंबर 1929 को सोलापुर में आर्य कांग्रेस ने हिंदुस्तान के विभिन्न भागों के लाखों नर नारियों की उपस्थिति में गढ़वाल में होने वाले शिल्पकारों दलितों के ऊपर अमानुशिक अत्याचारों के विषय में निम्न प्रस्ताव स्वीकार किया।

'गढ़वाल/कुमाऊं के पहाड़ी जिलों में जिसमें टिहरी राज्य भी शामिल है, वहां उच्च कही जाने वाले जातियों की ओर से निम्न जातियों पर अनेक अत्याचार होते रहते हैं, उनके जनेऊ बलात्कार पूर्वक तोड़े जाते हैं, वर-वधू को डोला-पालकी में सवार होने से रोका जाता है, बारातों को लूट लिया जाता है,

जलाशयों से पानी नहीं लेने दिया जाता है आदि। यह सम्मेलन कथित उच्च जातियों के इस अमानुषिक व्यवहार को घृणा की दृष्टि से देखता है और उनको आदेश देता है कि विशाल हिंदू जाति के हित को लक्ष्य में रखते हुए इस प्रकार दुर्व्यवहार शीघ्रातिशीघ्र बंद कर दें।' कांग्रेस ने एक प्रस्ताव को कार्य रूप में परिणित करने के लिए किसी रचनात्मक कार्यक्रम द्वारा कोई कदम नहीं उठाया, जिससे वहां की हरिजन समस्या में कोई सुझाव दिया जा सकता।

तिमल्याणीं बारात और सरकारी आज्ञा :

जून 1939 में ग्राम तिमल्याणी (उदयपुर) के श्री जमनादास की बारात डोला पालकी सहित जाने वाली थी कि इस इलाके के हजारों बिठों ने बारात को पालकी में आगे जाने से रोक दिया। उस इलाके के राष्ट्रीय कार्यकर्ताओं ने सकुशल बारात निकल जाने के लिए प्रयत्न भी किया। लेकिन वे बिठों के उत्तेजित विरोध में बारातियों की सहायता न कर सके। फिर अदालत की शरण लेनी पड़ी। तहसीलदार व पटवारी भी घटनास्थल पर पहुंचे। उन्होंने भी इस दिशा में कुछ प्रयत्न किया, लेकिन अधिक भीड़ को देखकर वे भी कुछ न कर पाए और जब बारात स्थानीय अधिकारियों की सहायता से भी न निकल सकी तब फिर इस जिले के शिल्पकार जाति के नेता जयानंद भारती ने संयुक्त प्रांतीय सरकार के प्रधानमंत्री गोविंद बल्लभ पंत को इस घटना के संबंध में तार द्वारा विस्तार से सूचना दी और प्रार्थना की कि बारात को यथाशीघ्र निकलवा दिया जाए। फलस्वरूप प्रधानमंत्री महोदय ने इन बारात संबंधी रोकथामों के लिए एक आज्ञा निकाली, जो इस प्रकार थी।

'इत्तला जानो कि अगर भविष्य में शिल्पकारों या दलितों की बारात के डोला-पालकी ले जाने में बिठ जनता की तरफ से रूकावट हो, तो तुमको चाहिए कि गांव के मुखियों का रूख दफा 341 व 341/1433 ताजीरात हिंद के रोकने वाले चालान किए जाए। हर आम व खास बिठ जनता व शिल्पकारों को सूचना दी जाए कि यह आज्ञा प्रधानमंत्री की है और किसी फरीक को भविष्य में ऐसे मामलातों में किसी आला अफिसर के पास फरियाद करने की जरूरत नहीं।'

महात्मा गांधी का अनुरोध :

जब गढ़वाल में होने वाली डोला-पालकी संबंधी दुर्घटनाओं की सूचना गांधी तक पहुंची तो वे बहुत दुखी हुए और उन्होंने यहां के सवर्ण हिंदुओं से हरिजनों के साथ न्यायोचित व्यवहार करने लिए 6 जून 1942

को सेवाग्राम से अपने हरिजन पत्र में इस प्रकार अनुरोध किया। 'अभी कुछ ही दिन हुए, गढ़वाल में, बिना किसी विघ्न बाधा के एक हरिजन दुल्हन को पालकी या डोली में ले जाने का सामाचार देने का सौभाग्य मुझे हासिल हुआ था, लेकिन हरिजन सेवक संघ के श्री श्यामलाल मुझे सूचित करते हैं कि वह मामला एक अपवाद ही सिद्ध हुआ है और हरिजनों को डोली का उपयोग न करने देने की रीति वैसे ही जारी है, जैसे पहले थी।'

प्रांतीय कांग्रेस कमेटी का प्रयत्न

संयुक्त प्रांतीय कांग्रेस कमेटी को जब इस जिले के हरिजनों के साथ सवर्णो द्वारा किए जाने वाले दुर्व्यवहार का पता चला तो उसके मंत्री के.डी. मालवीय ने एक जून 1940 को गढ़वाल के राष्ट्रीय कार्यकर्ताओं के नाम एक पत्र भेजा, जिसको हम अविकल रूप से यहां दे रहे हैं पर पत्र के मुताबिक इस जिले के कार्यकर्ताओं ने क्या किया है, यह एक विवादास्पद प्रश्न है। 'आपके जिले में अछूतों की समस्या सदैव से बड़ी भंयकर और शोचनीय रही, लेकिन इधर कुछ दिनों से वहां के अछूतों पर किए गए भीषण अत्याचारों की जो खबरें अखबारों में निकल रही है, उन्हें पढ़कर हृदय कांप उठता है। यों तो हमारे देश में हरिजन आंदोलन कई सालों से चल रहा है, लेकिन रामगढ़ कांग्रेस के बाद से इसे एक विशेष महत्व दिया गया है। महात्मा गांधी हमें बार-बार सचेत कर रहे हैं कि वे सेनापति की हैसियत से तब तक सत्याग्रह छेड़ने के लिए तैयार नहीं हैं, जब तक हम लोग रचनात्मक कार्यक्रम द्वारा सत्याग्रह की पूरी तैयारी न कर लेंगें। हम जानते हैं कि हरिजन सुधार का काम हमारे रचनात्मक कार्यक्रम का एक मुख्य अंग है और सत्याग्रह छेड़ने से पहले हमें इस क्षेत्र में जी तोड़ परिश्रम करना है।, लेकिन बावजूद इन बातों के जिला गढ़वाल के अछूतों पर पहले से भी अधिक अत्याचार होने लगे हैं। वहां की सवर्ण जातियां न केवल अछूतों के सामाजिक विकास को ही रोक रही है, बल्कि उल्टे उन्हें अपनी पुरानी कुप्रथाओं पर डटे रहने के लिए भी मजबूर कर रही है।'

पं. जवाहर लाल नेहरू का वक्तव्य :

अल्मोड़ा से प्रकाशित होने वाली 'समता' पत्रिका को हमारे राष्ट्र के कर्णधार युवक सम्राट पं. जवाहर लाल नेहरू एक पत्र में लिखते हैं कि वह बहुत अन्याययुक्त है। मैं इस विषय पर कई बार लिख चुका हूं और इस बारे में फिर लिख रहा हूं। प्रांतीय कांग्रेस कमेटी भी इस बारे में प्रयत्न करेगी। गढ़वाल इतनी दूर और अन्य जिलों से अलग है कि लोगों का जिले के अंदर पहुंचना बहुत मुश्किल है, तो हम कांग्रेस कमेटियों के हर एक सदस्य का यह कर्तव्य है कि इन दलित बंधुओं पर होने वाले अन्यायपूर्ण दुर्व्यवहार को रोकने की कोशिश करें। बिंजोली और मैंदोली की बारातें एक दिसंबर 1940 को बिंजोली के श्री फर्सुराम की बारात पालकी की सवारी में बछेली उत्तरी मौंदाड़स्यूं जाने वाली थी कि चौंदकोट इलाके के बिठों ने हजारों की संख्या में एकत्र होकर बारात को वर के घर पर रोक दिया। इस घटना की सूचना जब हाकिम इलाके को मिली तो वे भी पुलिस की सहायता लेकर वहां पहुंचे। वहां हजारों की संख्या में बिठों को देख और उत्तेजनापूर्ण वातावरण से घबराकर वे बारात को आगे ले जाने में सफल नहीं हो सके। उन्होंने अपनी तरफ से कोशिश तो बहुत की, लेकिन ऐसे विकट समय में स्थिति पर काबू न पा सके और शांति भंग होने के भय से धारा 144 के अनुसार बारात को सवारी में ले जाने से अनिश्चित काल तक के लिए रोक दिया। बारात को रोकने का कारण तो यह मालूम हो सका कि इस गांव के बिठ और शिल्पकारों में बहुत पुरानी आपसी अनबन चली आ रही थी और बिठों ने उनको परेशान करने के लिए एक अच्छा मौका देखा दूसरा एक और कारण मालूम हो सका, जो पहले से भी अधिक महत्वपूर्ण था, वह यह कि एकत्र बिठ चाहते थे कि हाकिम इलाका शिल्पकारों के डोला-पालकी उपयोग करने या न करने पर बाकायदा अपना निर्णय दे, लेकिन हाकिम इलाके में ऐसा कोई निर्णय नहीं दिया, जिससे बिठों ने अपना यह अंदाजा लगा लिया कि शिल्पकारों को शायद से अधिकार को उपयोग करने का कोई हक हासिल नहीं है। इस घटना ने ऐसा विकृत रूप धारण किया कि इससे डोला-पालकी आंदोलन को बाद में एक विशेष प्रगति मिली। इन दोनों बारातों के रूक जाने से आर्यो और शिल्पकारों में असंतोष फैल गया। समाचार पत्रों ने इन दोनों घटनाओं को विशेष रूप से प्रकाशित किया। देश की अनेक सुधारक संस्थाएं इस ओर चिंतित हो उठी। दो फरवरी 1941 को दुगड्डा में शिल्पकार और आर्यो की एक बैठक हुई, जिसमें बिंजोली और मैंदोली बारात को निकालने के लिए सत्याग्रह की चर्चा की गई और महात्मा गांधी जी से भी प्रार्थना की गई कि वे अपने द्वारा संचालित व्यक्तिगत सत्याग्रह को गढ़वाल में उस समय तक के लिए स्थगित कर दें जब तक गढ़वाल के सवर्ण हिंदू शिल्पकारों के इस नागरिक अधिकार को स्वीकार न कर लें और सत्याग्रहियों को आदेश दे दिए गए कि वे इस ओर अपना सहयोग दें। इसी बीच 17 जनवरी 1941 को कुल्हाड़ में शिल्पकारों की एक मीटिंग करने के विज्ञापन बांटे गए, जिसमें मुसलमान और ईसाइयों को निमंत्रण दिए गए थे। ये खबरें जब समाचार पत्रों में निकली तो डोला-पालकी समस्या पर अब अनेक पहलुओं से विचार किया जाने लगा। चार जनवरी को भी रमेशचंद्र बहुखंडी ने भी महात्मा गांधी को एक पत्र इस आशय से लिखा कि गढ़वाल का सत्याग्रह इस बिना पर स्थगित कर दें कि जब तक गढ़वाली सत्याग्रही हरिजनों की उन रूकी बारातों को न निकाल दें तब तक ये सत्याग्रह न करें। मेरा विश्वास है कि आपकी इस प्रकार की आज्ञा से गढ़वाल में चेतना आएगी और स्थिति में अवश्य ही परिवर्तन आएगा।' इन घटनाओं के आधार पर देश के पूज्य महात्मा गांधी ने 25 जनवरी 1941 को गढ़वाल का सत्याग्रह स्थगित कर दिया और डोला पालकी संबंधी घटनाओं की जांच के लिए प्रांतीय कमेटी की तरफ से पूर्णचंद्र विद्यालंकार कोटद्वार पहुंचे। वहां उन्होंने जिले की सभी दिशाओं में सार्वजनिक कार्य करने वाले लोगों की बैठक में डोला-पालकी समस्या से उत्पन्न सारी परिस्थितियों पर विचार किया और अंत में वहां उपस्थित कार्यकर्ताओं ने एक सर्वसम्मत निर्णय किया जो इस प्रकार था।

सम्मेलन का निर्णय : 23 फरवरी 1941 को लैंसडौंन पंचायती धर्मशाला के मैदान में सर्वदल सम्मेलन की कार्यवाही डॉ. हरेंद्र सिंह रावत, चेयरमैन डि.बोर्ड गढ़वाल के सभापतित्व में प्रारंभ हुई। ठा. प्रताप सिंह नेगी ने सब प्रस्ताव एक साथ सम्मेलन के सामने पेश किए व अंत में मूल प्रस्ताव आर्यो की अनुपस्थिति में सर्वसम्मति से स्वीकार हुआ

1. लैंसडौंन तहसील के निवासियों के इस सर्वदल सम्मेलन में डोला-पालकी के प्रश्न से उत्पन्न सारी परिस्थिति पर विचार किया और यह निर्णय दिया-

(अ) चूंकि डोला-पालकी पर वर-वधू को ले जाना हर एक मनुष्य का नागरिक अधिकार है इसलिए यह सम्मेलन हरिजनों, आर्यो व शिल्पकारों सहित सब भाईयों इस अधिकार को स्वीकार करता है।

(ब)अपने कट्टरपंथी सवर्ण भाईयों से मार्मिक अपील करता है कि पिछली दुर्घटनाओं को भूलकर अपने ही भाईयों के इस नागरिक अधिकार में तीव्र उत्तेजना के मौके पर भी आनाकानी न करें।

(स) साथ ही अपने कार्य व शिल्पकार भाईयों से भी अनुरोध करता है कि समय और शांति से काम लेकर मंदिरों व निवास गृहों का वे उसी प्रकार सम्मान करें जिस प्रकार सवर्ण बधु करते हैं।

2. यह सम्मेलन उन व्यक्तियों के प्रति अपना रोष व असंतोष प्रकट करता है कि जिन्होंने डोला पालकी के प्रश्न की आड़ में समस्त गढ़वाल को सारे संसार के सामने कलंकित करने का दु:साहस किया व उन्हें भविष्य में ऐसा न करने की चेतावनी देता है।

3. यह सम्मेलन जिले भर के निवासियों से अपील करता है कि वे स्थान-स्थान पर 12 मार्च 1941 की बैठक में इस प्रस्ताव को सार्वजनिक सभाओं द्वारा दोहराने की कृपा करें, ताकि सारे जिले में इसके अनुकूल वातावरण पैदा हो जाए।

4.यह सम्मेलन जिले की प्रतिनिधि संस्था जिला बोर्ड से अनुरोध करता है कि वह अपनी आगामी 1-2-41 की बैठक में इस प्रस्ताव को दोहराएं ताकि यह निर्णय सारे जिले को माना जाए।

5. भविष्य में इस प्रकार की कलंकपूर्ण दुर्घटनाएं न होने पावें और ऐसी आशंका के अवसर पर पहले ही परिस्थिति संभाल ली जाए, इसलिए यह सम्मेलन प्रमुख व्यक्तियों की एक स्थायी कमेटी नियुक्त करता है, जो हर ऐसे मामले को सुलझाने का प्रयत्न करेगी और जिसका फैसला दोनों पक्षों को मान्य होगा। इस कमेटी को आजकल चल रहे सब मामलों का भी तसफिया करने का अधिकार दिया जाता है।

6. यह सम्मेलन निश्चय करता है कि इन प्रस्तावों की एक प्रति डिप्टी कमिश्नर गढ़वाल के मार्फत प्रांतीय सरकार के पास भेज दी जाए, ताकि वे इस पंचायती फैसले को कानून स्वरूप देकर भविष्य में इसे लागू करने का प्रयत्न करें साथ-साथ यह भी आशा करता है कि इस पंचायतनामें के फलस्वरूप वर्तमान में चल रहे सभी मुकदमें वापस ले लिए जाएंगे।

डोला-पालकी दिवस :

सर्वदल सम्मेलन के प्रस्तावनानुसार 2, 3 मार्च को डि. बोर्ड गढ़वाल ने भी गढ़वाल के शिल्पकारों के डोला-पालकी के अधिकार को स्वीकार करते हुए 23 फरवरी के निर्णय को दोहराया। 12 मार्च 1941 को समस्त जिले के विभिन्न स्थानों में यह निर्णय दोहराया गया कि गढ़वाल से बाहर अनेक स्थानों में रहने वाले गढ़वालियों की संस्थाओं ने भी इस निर्णय का समर्थन किया। दिल्ली में हिमालय सेवा संघ की ओर से एक सार्वजनिक सभा रामेश्वरी नेहरू, उपाध्यक्ष हरिजन सेवक संघ की अध्यक्षता में हुई, जिसमें डोला-पालकी समस्या पर श्री वियोगी हरि व्यवस्थापक, हरि उद्योगशाला, श्री सत्यदेव विद्यालंकार, संपादक हिन्दुस्तान और अन्य कई वक्ताओं के मार्मिक भाषण हुए और सम्मेलन द्वारा स्वीकृत निर्णय दोहराए गए।

6 मई को अखिल भारतीय हरिजन सेवक संघ के प्रधानमंत्री श्री अमृत लाल (ठक्कर बापा) गढ़वाल आए और आपके बाद संघ उपाध्यक्ष श्रीमती रामेश्वरी नेहरू भी पहुंची, उन्होंने डोला पालकी की समस्या से उत्पन्न सारी स्थिति का अध्ययन यहां के प्रमुख नागरिकों से मिलकर शुरू किया जैसे पहले जिक्र किया जा चुका है कि स्थानीय आर्यसमाजियों ने सर्वदल सम्मेलन द्वारा स्वीकृत निर्णयों को अस्वीकार कर दिया था, जब श्री ठक्कर बापा जी ने उनके प्रमुख कार्यकर्ताओं से बातचीत शुरू की तो वे इतने उत्तेजित थे कि बात करने को भी तैयार न हुए जिससे बापा को कुछ दु:ख का अनुभव हुआ, फिर पं. ज्ञानचंद्र, सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि को दिल्ली से तार द्वारा बुलाया गया और उनसे सर्वप्रथम सामयिक परिस्थिति के अनुसार विचार-विमर्श हुआ तथा 14 मई 1941 की रात्रि को लैंसडौंन डि. बोर्ड डाकबंगले में बिठ और आर्य समाज के प्रतिनिधियों की आवश्यक बैठक श्रीमती रामेश्वरी नेहरू और श्री ठक्कर बापा की उपस्थिति में हुई और उसमे विभिन्न दृष्टिकोणों को सम्मुख रखकर सर्वदल सम्मेलन के निर्णयों को अधिक महत्वपूर्ण और उपयोगी बनाकर इस प्रकार सर्वसम्मत निर्णय तैयार किया गया। 1.आर्यो की तरफ से पं. ज्ञानचंद्र जी ने विश्वास दिलाया कि जो रेकग्नाइज मंदिर और निवास स्थान जहां कि पहले से बिठ भाई उतरते हैं वहां आर्यो की बारातों को भाई चारे के नाते उतरने में कोई एतराज नहीं होगा। ठा. नैन सिंह नेगी और ठा.कमल सिंह नेगी ने कमेटी की ओर से इनको विश्वास दिलाया कि कमेटी की ओर से भरसक प्रयत्न करके कार्यालय में इसका सफल बनाएंगे। इसके लिए उन्होंने कहा कि रेकग्नाइज मंदिरों की सूची सरकार से ली जाएगी। निवास स्थानों का निश्चय करना चूंकि इतना सुगम नहीं है, इसलिए जहां कहीं भी आर्यो की या शिल्पकारों की बारात निकलने वाली हो वहां इस कमेटी के पास एक माह पहले सूचना भेज दी जाए कि मुकर्रर तिथि पर बारात निकलने वाली है, जहां कि बिठ भाई उतरते रहे हैं और ऐसे ही निवास स्थानों पर पारस्परिक समझौते के साथ आर्यो की शिल्पकारों की और बिठों की बारातें उतरेगी और यही अनरेकर्डड मंदिरों पर भी लागू होगा। यह सारी कार्यवाही नक्शा बनाकर कमेटी के प्रधान जी के हस्ताक्षर सहित लिखी होनी चाहिए और उसका उपयोग आगे के लिए होगा। यह कार्यवाही कमेटी के रिकार्ड में रहेगी।

3. यह भी सर्वसम्मति से निश्चय हुआ कि स्थायी कमेटी में तीन और नए सदस्य आर्यो की अनुमति से सम्मिलित किए जावें जो नए सदस्य आर्यो की तरफ से मनोनीत होंगे उनमें गढ़वाली या बाहर का ऐसा भेद न किया जाए। यह कमेटी परमानेंट है और आगे जब तक इस कमेटी का स्वरूप न बदलेगा, तब तक यही कार्य करेगी और सिर्फ बहुमत से काम न लेंवे, समझौते से काम लिया जाएगा।

4. यह भी तय किया गया कि कमेटी इस बात का प्रयत्न करेगी कि पहले प्रयत्न से 10-12 आर्यो की और शिल्पकारों की बारातें अनुकूल वातावरण पैदा करने के लिए निकालें।

5. इस सभा की राय में वातावरण को शुद्ध और शांत करने के लिए और परस्पर मेलजोल बढ़ाने के लिए डोला-पालकी के संबंध में इस वक्त जितने भी मुकदमें दीवानी और फौजदारी चल रहे हैं, वह सब उठा दिए जाएं और आगे भी जब तक इस कमेटी का संगठन कायम है तब तक डोला-पालकी के सब झगड़े अदालत में न जावें और इसी कमेटी के हाथ फैसले हों। कठिन समय आने पर डेडलॉक होने पर या कमेटी का विधान बदल जाने पर श्रीमती रामेश्वरी नेहरू या ठक्कर बापा के परामर्श लेने के सिवाय कमेटी का संगठन टूट न सकेगा। मुकदमों के बारे में तो प्रस्ताव है और बाकी प्रस्ताव बाइंडिंग है। भूल गई।

समस्या में आशाजनक सुधार:

भोगपुर, बिंजोली और मैंदोली बारात के निकालने के प्रयत्न करने में डोला-पालकी स्थायी समिति के सदस्य उस इलाके के प्रमुख थोकदार डॉ. गोविंद सिंह रावत रईस, ठा. कलम सिंह नेगी और लैंसडौंन के प्रमुख

वकील ठा. नैन सिंह नेगी का बिंजोली जाकर प्रमुख भूमिका रही है। जनपद के प्रतिष्ठित व्यक्ति जिला बोर्डो के चेयरमैन ठा. हरेंद्र सिंह रावत ने भी वहां जाकर पूरा प्रयत्न किया और बारात उनके सहयोग व सरकारी सहायता से सकुशल निकल गई। इससे पहले भोगपुर बारात को निकालने में श्री भक्तदर्शन, संपादक **कर्मभूमि** ठा. विष्णु सिंह रावत थोकदार, ठा. छवाण सिंह नेगी, मेडिबो पं. रमेश चंद्र बहुखंडी, पं. मंगतराम खंतवाल, भू.में. डिबो और ठा. कलम सिंह नेगी और उस इलाके के राष्ट्रीय कार्यकर्ताओं का पूर्ण सहयोग प्राप्त हुआ। अब उन बारातों का संक्षिप्त विवरण लिख देना आवश्यक है जो बारातें स्थनीय बिठों की सहायता से सकुशल निकाली और उनके स्थानों में पहले की तरह कोई रूकावट और विघ्न बाधा उपस्थित नहीं हो पाई। सर्वदल सम्मेलन के बाद लैंसडौंन तहसील के किन्ही इलाकों में अब तक लगभग 18 बारातें सकुशल निकली इनमें से कुछ बारातें ऐसी हैं, जिनमें डोला पालकी कमेटी की ओर से प्रयत्न हुआ और कुछ ऐसी हैं जो स्वयं निकली, इनमें थी मंजियाड़ (ठांगर), ठुंडा माला, रामजीवाला, कंडुवा, पिलखडूडी, तिमल्याणी, भीम सिंह, बैसोखी, खोलकंडी, तिमल्याणी, ठुंडा तिमल्याणी, हरिसिंगपुर, रामजीवाला।

एक कलंकपूर्ण दुर्घटना :

गत वर्ष सर्वदल सम्मेलन के बाद पुराने वर्षो से चले आ रहे आपसी मनोमालिन्य के कारण भोगपुर और बिंजोली में डोला-पालकी के विवाहोत्सव के समय दो दुर्घटनाएं हो गई थी लेकिन उसके बाद से अब तक अनेक बारातों में स्थानीय बिठों के सहयोग से सफलतापूर्वक निकल रही थी कि 7 मई 42 को ओड गांव के श्री मोहनलाल आर्य की बारात के अवसर पर एक कलंकपूर्ण दुर्घटना हो गई। बारात ओड गांव से पालकी में दांया गांव किगड़ीगाड के लिए प्रस्थान हुई। जब बारात स्थानीय बिठों के आदेशानुसार और पंचायती निर्णय के मुताबिक जगसियाखाल तक सकुशल पहुंची तो वहां पर लगभग 300 बिठों ने बारात को दायां गांव की सरहद में जाने से रोक दिया। बारात में सम्मिलित अनेक सुधारक संस्थाओं के कार्यकर्ताओं ने उत्तेजित बिठों को समझाने का प्रयत्न किया, लेकिन कुछ सफलता नहीं मिली।

सन् 1939 में ओड गांव की एक बारात इसी भेंटी गांव के निकट लूट ली गई। डोला लूटकर जला दिया गया था और बारातियों को बुरी तरह मार खाकर भागना पड़ा था। इससे भी पहले श्री लोकमणि, मल्ड ग्राम निवासी अपने भाई का विवाह डोला-पालकी से करना चाहते थे, लेकिन हजारों बिठों ने बारात को घर से नहीं उठने दिया और वर जिसकी शादी थी वह इतना भयभीत हो गया कि उसने पैदल ही लड़की को लाना उचित समझा पिछली घटनाओं को सामने रखते हुए यह घटना मामूली सी समझनी जानी चाहिए। कार्यकर्ताओं का परिश्रम बेकार होकर रहेगा। डोला-पालकी जिनके लिए यह सारा बवंडर उठाया गया था वे ज्यों के त्यों घर पर पहुंच गए। तब रहा 25 रूपए दंड का प्रश्न उस इलाके के प्रमुख और प्रभावशाली बिठों की भावना में परिवर्तन करने के लिए प्रयत्न किया जा रहा है और हमें आशा करनी चाहिए कि हम उन रूपयों को अवश्य वापस करा सकेंगे।

उतरने तथा चढ़ने का प्रश्न :

गत फरवरी मास से मई के अंतिम सप्ताह तक उपरोक्त बारातों के अतिरिक्त 10 बारातें उदयपुर, अजमेर, सीला, भाबर, बदलपुर और कौड़िया आदि पट्टीयों में आर्य और शिल्पकारों की सकुशल निकल चुकी हैं। इन इलाकों में तो अब ऐसी बारातों को निकलने के लिए अधिक प्रयत्न की आवश्यकता नहीं है। यहां की बिठ जनता तो इन शिल्पकारों और आर्यो के अधिकारों को समझ गई है और वह फिजूल के ऐसे निरर्थक झगड़ों में पड़ना पसंद नहीं करती हैं इसलिए उसका यह कार्य अन्य इलाकों के बिठों के लिए अनुकरणीय होना ही चाहिए। सारी ग्राम पट्टी कौड़िया के एक आर्य भाई लिखते हैं कि 27 अप्रैल 42 को जब उसके लड़के की बारात पालकी में शादी करने के लिए जाने लगी तो उसके गांव के बिठों ने बारात को रिवाजों के अनुसार गांव के बीच उतरने को कहा और बारात बिठों की इच्छानुसार कुछ दूर तक पैदल चलाई गई और इसी तरह से दूसरे दिन वर वधू को सवारी से उतार कर घर तक पहुंचाया गया।

इतना ही नहीं उस भाई की यह भी शिकायत है कि 10 मई 42 को मौजा खरक पट्टी कौड़िया के बिठों की एक बारात उसी रास्ते गांव के बीच सवारी में गई। बिठों से जब सर्वदल सम्मेलन के निर्णय का जिक्र किया गया तो उनकी ओर से जबाब मिला कि सम्मेलन द्वारा निर्धारित नियम आर्यो एवं शिल्पकारों के लिए ही हैं। यह जनता के प्रतिनिधियों का निर्णय है। यह तो सभी को मानना चाहिए। अगर जनता के प्रतिनिधि किसी खास जमात के लिए ही ऐसा करते हैं तो वह न्याय की कसौटी पर ही पूरा नहीं उतरता और यदि किसी को पद्दलित समझकर ऐसा भी किया जाए तो वह निर्णय स्थायी नहीं हो सकता।

अब शिल्पकार सजग हो गए हैं उनमें अपने अधिकार प्राप्त करने की भावना जागृत हो गई है। वे अब किसी के दास रखने पर भी दासता से मुक्त नहीं होना चाहते हैं। अगर आज वे बेबसी के कारण जी मसोस कर बैठते हैं। तो कल वे जरूर उठेंगे और अपने अधिकारों को प्राप्त करेंगे।

पारस्परिक सहयोग का नमूना :

अभी 29 मई को उदयपुर इलाके के आर्य सामाजियों का एक जलसा स्थान ठांगर में हुआ था, उसमें डोला पालकी वाली बारातों में जो वहां के बिठों ने आर्यो और शिल्पकारों को सहायता दी है, उसके उपलक्ष्य में उनको एक प्रस्ताव द्वारा धन्यवाद दिया गया है और गढ़वाल के अन्य इलाकों के सवर्ण भाईयों से अपील की गई है कि वे भी उदयपुर की बिठ जनता ने अगर ऐसा उपयोगी कदम आगे बढ़ाया है तो यह प्रस्ताव उसके उपलक्ष्य में पास होना ही चाहिए था।

उदयपुर पट्टी के प्रतिष्ठित व्यक्ति ठा. रघुवीर सिंह नेगी रईस, कांडी ने इस जलसे में यह घोषणा की कि भविष्य में अगर आर्यो और शिल्पकारों की बारातों में उस इलाके में कोई अड़चन होगी तो वे उनकी सहायता करेंगे और अपने बिठ भाईयों को समझाने का प्रयास करेंगे। वहां के प्रमुख समाज सुधारक और राष्ट्रीय कार्यकर्ताओं का तो हमेशा से इस समस्या को सुलझाने में सहयोग रहा है और भविष्य में रहेगा। जिले के प्रत्येक भाग में इसी प्रकार परस्पर सहयोग होना शुरू हो जाए तो सफलता अवश्य संभाव है।

आजादी की तीसरी जंग

पेशावर कांड

डॉ. सुरेश चंदोला

23 अप्रैल, 1930 का दिन न केवल भारतीय इतिहास में अपितु विश्व इतिहास में सैनिक क्रांति के नाम से विख्यात है। यद्यपि इससे पूर्व भारतीय इतिहास में सन् 1857 की सैनिक क्रांति हुई थी, परन्तु 1857 की क्रांति को प्रमुखतया सैनिक क्रांति नहीं कहा जा सकता है। इस क्रांति का उद्देश्य भारतीय राजाओं द्वारा अंग्रेजों से अपनी आन व शान की रक्षा करना रहा, लेकिन पेशावर कांड के नाम से विख्यात सन् 1930 की क्रांति में मात्र 63 गढ़वाली वीरों ने ही अपने देश की आजादी के लिए लड़ रहे भारतीयों पर गोली चलाने के आदेश को न मानकर यह दिखा दिया कि वे सेना में चांदी के चंद टुकड़े बटोरने के लिये नहीं सम्मलित हुये, बल्कि उनके हृदय में भी स्वदेश प्रेम जैसी भावना विद्यमान है। वास्तव में 23 अप्रैल 1930 की तिथि भारतीय इतिहास में पेशावर कांड के गढ़वाली सूरमाओं के अद्भूत शौर्य के रूप में सदैव अंकित रहेगी। इसी पेशावर कांड की एक एक घटना का वर्णन इस कांड के सैनिक के राईफल्समैन दौलत सिंह रावत द्वारा 23 अप्रैल, 1988 को एक साक्षात्कार में लेखक से किया गया था, जिसे यहां प्रस्तुत किया जा रहा है।

सन् 1930 में अप्रैल का महीना था। पेशावर छावनी के हरिसिंह लाइंस में 2/18 रॉयल गढ़वाल राइफल्स का पड़ाव था। वहां रात्रि के प्रतिदिन एक कोठरी में बैठकर सभी गढ़वाली सैनिक समाचार पत्र पढ़ते थे और राजनैतिक बातें किया करते थे।

सैनिक छावनी में समाचार पत्र लाने और उसे पढ़ने पर कड़ा प्रतिबंध था। यही कारण था कि लालटेन की रोशनी को धीमी कर व खिड़कियों पर काले कंबल डालकर समाचार पत्र पढ़ा जाता था। इन्हीं समाचार पत्रों के माध्यम से गढ़वाली सैनिकों को ज्ञात हुआ कि 22 अप्रैल, 1930 के पेशावर शहर में ऑल इंडिया कांग्रेस कमेटी का एक बहुत बड़ा जलसा होने वाला है, जिसे अंग्रेज किसी भी कीमत पर सफल नहीं होने देना चाहते। अंग्रेज अधिकारी गढ़वाली सैनिकों को अपनें कार्य को सिद्ध कराने के लिए उन्हें दिग्भ्रमित कर रहे थे कि पेशावर शहर में सांप्रदायिक दंगे भड़के हुये हैं। इन दंगों में बहुसंख्यक मुसलमान अल्पसंख्यक हिंदुओं पर अत्याचार कर रहे हैं। इसीलिए इन दंगों को शांत करने के लिए गढ़वाली सैनिकों को गोलियां भी चलानी पड़ सकती है।

चूंकि ये सैनिक सारी स्थितियों से अवगत थे और संभवतया फिरंगियों को भी इनकी बगावत की बू लग चुकी थी। अत: 22 अप्रैल को पेशावर शहर में अंग्रेज सेना तैनात कर दी गयी। 22 अप्रैल को ही जनता एवं अंग्रेज सेना में भयंकर युद्ध हुआ। ज्ञात नहीं हो सका कि जनता की ओर से कितने हताहत हुए, परंतु अंग्रेज सैनिक 200 में से मात्र 100 ही वापस लौटे।

22 अप्रैल की शाम सभी गढ़वाली सैनिकों को आदेश दिया गया कि प्रात: 2/18 रॉयल राइफल शहर में व्याप्त अशांति को दूर करने का प्रयास करेगी। चाहे इसके लिए उन्हें गोलिया ही क्यों न चलानी पड़ें। इसी संदर्भ में अंग्रेज अधिकारियों ने सभी सैनिकों को एक एक कार्ड दिये, जिन पर आंग्ल भाषा में फॉयर लिखा था। इन कार्डो पर स्पष्ट लिखा था कि जब तक सिटी मजिस्ट्रेट, डी.एम., तहसीलदार, खान बहादुर या अन्य कोई राजपत्रित अधिकारी इस कार्ड पर हस्ताक्षर नहीं करेगा, गोली नहीं चलाई जायेगी।

22 अप्रैल की रात्रि सभी गढ़वाली सैनिकों के लिये बैचेनी की रात्रि थी, सभी जानते थे कि कोई भी सैनिक या गैर सैनिक अधिकारी इन कार्डो पर अपने हस्ताक्षर नहीं करेगा। यही कारण था कि इन सबने यह मिलकर तय किया कि ये निरपराध जनता पर गोली नहीं चलायेंगे। 23 अप्रैल को इन्हें प्रात: ही शहर की ओर प्रस्थान करने का आदेश दे दिया गया। इसमें इनकी 'ए' कंपनी की प्लाटून 1 एवं 4 के सैनिक तैयार हो गये।

इनका नेतृत्व वीर चंद्र सिंह गढ़वाली कर रहे थे। ये अपनी बन्दूकों एवं तोपों के साथ लॉरी द्वारा शहर में आ गये। राइफलमैन दौलत सिंह रावत की गन, इंडिया इंपीरियल बैंक की ओर निश्चित कर दी गयी। इस गन में पूरी पेटी अंयुनेशन की रखी गयी थी। यह एक मिनट में 47 फॉयर करती थी।

इन्होंने देखा कि काबुली दरवाजे के सामने से एक विशाल जुलूस निकल रहा है, इन लोगों के हाथों में तिरंगे झंडे थे। इस जुलूस में औरतें भी थी। जुलूस में भारत माता की जय व महात्मा गांधी की जय के नारे लग रहे थे। इन नारों से सारा पेशावर शहर गूंज रहा था। भारतीयों का यह उत्साह गौरे सैन्य अधिकारियों द्वारा न सहा गया। फलस्वरूप मेजर ब्रौनस्किल ने गोली चलाने का आदेश दे दिया, परन्तु लोग खामोश खड़े रहे। आदेश पुन: दिया गया। इस बार भी गढ़वाली सैनिक शांत खड़े रहे। इस प्रकरण को देख मेजर ब्रौनस्किल बौखला गया। वह गढ़वालियों पर अपशब्दों की बौछार करता हुआ कमांडर चंद्र सिंह गढ़वाली के पास अपना आदेश दोहराने गया। इस पर गढ़वाली ने मेजर से कार्डो पर हस्ताक्षर करने की मांग की। ब्रौनस्किल एक-एक कर सभी सैनिकों के पास गया, परंतु सभी से एक ही उत्तर मिला, जो गढ़वाली पहले दे चुके थे।

मेजर ब्रौनस्किल, दौलत सिंह रावत के पास आया। उसने क्रोध भरी नजरों से इनकी ओर देखा और फॉयर करने का आदेश दिया। इन्होंने तुरंत अपना कार्ड मेजर के सामने कर दिया और उससे उस पर हस्ताक्षर करने को कहा परंतु मेजर ने ऐसा न किया। फलस्वरूप इन्होंने अपनी गन से गोलियां निकाल लीं। वास्तव मं अंग्रेज अधिकारी बड़े धूर्त थे। वे दुनिया को दिखाना चाहते थे कि गढ़वाली सैनिकों ने बिना उनके आदेश के निरपराध जनता पर गोलियां चलायी हैं।

कंपनी कमांडर को गढ़वाली सैनिकों से यह उम्मीद नहीं थी, परंतु उनके जवाब सुनकर वह स्तब्ध रह गया। उसके क्रोधित चेहरे को देख एक सूबेदार, एक लांसनायक तथा एक सिपाही ने आगे बढ़कर जुलूस पर तीन राउंड गोलियां चलाई। इससे दो-तीन व्यक्ति वहीं पर जमीन पर ढेर हो गये। जुलूस मौन खड़ा था, अन्य पदाधिकारी भी शांत खड़े रहे। इससे उन तीनों को भी शर्म आ गयी और उन्होंने अपनी बंदूकें वहीं जमीन पर टेक दीं। उनके इस कार्य से अपार जन समूह इंकलाब जिंदाबाद के नारे लगाने लगा।

अंग्रेजों के द्वारा गोली चलाये जाने का आदेश दिये जाने के पीछे गढ़वाली सैनिकों का व्यक्तिगत अहित भी था, क्योंकि यदि वे जनता पर गोलियों का प्रयोग करते, तो स्वाभाविक था कि उन्हें जनता के आक्रोश का सामना करना पड़ता और हुआ भी यही। गढ़वाली सैनिकों के गोली चलाने के आदेश की अवहेलना करने के पश्चात उनके स्थान पर गौरे सैनिकों को बुला लिया गया। ज्ञात रहे इस दिन पेशावर शहर में चार सैनिक टुकड़ियों क्रमशः ब्रिटिश, सिक्ख, राजपूत एवं गढ़वाली को तैनात किया गया, परन्तु शहर के अशांत क्षेत्र में गढ़वाली सैनिकों को ही तैनात किया गया था। अंग्रेजों के चार तोपों से युक्त टैंक जैसे ही गली के अंदर गये तो जनता ने ईंट एवं पत्थरों से उनका मार्ग अवरूद्ध कर दिया। इतना ही नहीं उग्र भीड़ ने पेट्रोल डालकर इन टैंकों में आग लगा दी। इससे अंग्रेज सैनिकों के साथ कई टैंक भस्म हो गये।

गढ़वाली सैनिक इस भीषण दृश्य को देख रहे थे। अंग्रेज अधिकारी अपना कोई भी सबूत गढ़वाली सैनिकों के पास नहीं छोड़ना चाहते थे। अतः उन्होंने अपने द्वारा बांटे गये कार्ड गढ़वाली सैनिकों से वापस ले लिये, ताकि गढ़वाली सैनिक अंग्रेज अधिकारियों पर किसी प्रकार की तोहमत न लगा सकें।

अंग्रेजों की इस असफलता का आभास जनता को हो चुका था, परंतु अंग्रेज हारे नहीं थे। 23 अप्रैल की रात अंग्रेज अधिकारियों ने मिलकर निश्चय किया कि 24 अप्रैल को पुनः गढ़वाली सैनिकों को शहर भेजा जाये और स्थिति पर नियंत्रण कर बदनामी से बचा जाये। इधर सभी गढ़वाली सैनिकों ने यह निश्चय किया कि अब अंग्रेजों का कोई आदेश नहीं मानेंगे।

24 अप्रैल, प्रातः 8 बजे ही गढ़वाली सैनिकों को शहर जाने का आदेश दे दिया गया, परंतु 12 बजे तक इस आदेश को मानने वाला कोई नहीं था। फलस्वरूप इनकी सभी कंपनियों को लाइन हाजिर कर दिया गया। सबसे पहले ए कंपनी कमांडर कैप्टेन चैपल ने गढ़वाली सैनिकों को बाहर जाने का आदेश दिया, परंतु इन्होंने उसे नहीं माना। इस पर चैपल क्रोध से आकर बोला-आपको मालूम है कि आपने अपने प्रशिक्षण काल में शपथ ली थी। इन्होंने कहा- यदि बाहरी देश हम पर आक्रमण करे तो हम अपनी जान भी न्यौछावर कर देंगे, परंतु अपने ही भाईयों पर गोली नहीं चलायेंगे। गढ़वाली सैनिकों

के इस वक्तव्य पर चैपल गाली देने लगा। फिर तो दौलत सिंह से रहा नहीं गया।

इन्होंने अपनी बंदूक की बट से उस पर प्रहार कर दिया। जिससे वह गिर पड़ा। तत्पश्चात् लांसनायक भीम सिंह ने अपने बूटों से चैपल की खासी मरम्मत कर दी। किसी तरह अपने जान बचाकर वह अधिकारियों के खेमे की ओर भाग गया। इस कांड के पश्चात् कोई अंग्रेज अधिकारी गढ़वाली सैनिकों के पास नहीं आया। इस घटना (पेशावर कांड) के पश्चात् गढ़वाली सैनिकों के साथ सेना की अन्य टुकड़ियां भी मिलने लगी थी।

24 अप्रैल, 4 बजे शाम, गढ़वाली बटालियन की सभी कंपनियां एक स्थान पर एकत्रित हुई। सर्वसम्मति से तय किया गया कि बटालियन के सभी प्लाटून तुरंत त्यागपत्र दे दें सेना से, साथ अपने त्याग पत्रों में यह भी लिख दिया जाये कि हम लोग जहां भी जायेंगे एक साथ जायेंगे।

गढ़वाली सैनिक फिरंगियों से इतने आक्रोशित थे कि प्लाटून कमांडरों ने प्लाटून नंबर 4 के त्यागपत्र हवलदार नारायण सिंह गुंसाई एवं प्लाटून नं. 2 के त्यागपत्र हवलदार गोरिया सिंह ने अंग्रेज अधिकारियों के समक्ष प्रस्तुत किये, परंतु ए कंपनी के प्लाटून नं. 2 और नं. 3 के त्यागपत्र प्रस्तुत न होने के कारण संपूर्ण गढ़वाली बटालियन के त्यागपत्र रोक दिये गये।

सामूहिक रूप से निर्णय लिया गया कि हथियार जमा कर दिये जायें, ताकि भविष्य में अंग्रेज इन गढ़वाली सैनिकों पर आक्षेप न लगा सकें कि वे उन पर हमला करना चाहते थे। हथियार जमा करने के पश्चात् सभी गढ़वाली सैनिकों को अंग्रेजों ने अपने नियत्रंण में ले लिया। 24 अप्रैल की शाम साढ़े चार बजे अंग्रेज अधिकारियों ने गढ़वाली सैनिकों को आदेश दिया वे चारपाई, बक्सा एवं निजी सामान सब स्टोर में जमा कर दें। शाम 5 बजे अगला आदेश मिला कि अपने बिस्तर की गठरी बांधो और किट में जो वर्दी आदि है उसे थैले में बंद करो।

तत्पश्चात् सभी गढ़वाली सैनिकों के बिस्तरों को खच्चर गाड़ियों में लादा गया और उन्हें अपना बैग सिर पर रख कर पैदल चलने का आदेश दिया गया। ये सैनिक अपने बच्चों के साथ रेलवे स्टेशन की तरफ पैदल ही चल पड़े। यद्यपि रेलवे स्टेशन छावनी से मात्र दो किलोमीटर की दूरी पर था, परंतु गढ़वाली सैनिकों को बारह किलोमीटर के बियावान क्षेत्र से स्टेशन लाया गया। चूंकि अंग्रेजों को संदेह था कि यदि इन सैनिकों को भीड़ भरे क्षेत्रो से होकर ले जाया गया तो निःसन्देह दंगा हो जायेगा। अतः ऐसा किया गया। स्टेशन पर तीन अंग्रेज अधिकारी उपस्थित थे। सारा प्लेटफार्म सुनसान था।

सभी गढ़वाली सैनिकों को एक डिब्बे में बैठा दिया गया। जिनके साथ उनके बच्चे व पत्नियां भी थीं, उन्हें भी डिब्बे में बैठा दिया गया। किसी को भी ज्ञात न था कि जाना कहां है। रेलवे स्टेशन से दूर ट्रेन बाहर ही निकली थी कि हजारों

नर-नारियों ने रेल की पटरियों पर खड़े होकर इसे रोक लिया।

चारों ओर नारे गूंजने लगे गढ़वाली वीरों की जय, बद्रीनाथ की जाय। वास्तव में अंग्रेजों की योजना यह थी कि इन सभी बागियों को ट्रेन सहित समुद्र में डुबो दिया जाय, परंतु जनता को अंग्रेजों के इस योजना का पता चल गया। यही कारण था कि वे ट्रेन में अंग्रेज अधिकारियों ने वास्तुस्थिति से अपने उच्चाधिकारियों को अवगत कराया। साथ ही बतलाया गया कि जनाक्रोश को देखते हुये गाड़ी को समुद्र की तरफ ले जाना कठिन है। तत्पश्चात योजना बनी कि सारी बटालियन को एबटाबाद के समीप काकुल में तोपखाने से उड़ा दिया जाय।

पेशावर से सभी गढ़वाली बंदी सैनिकों को एबटाबाद ले जाया गया। यहां भी 15 मील का लंबा फासला इन्होंने पैदल ही पार किया, किन्तु इस बार जनता ने अपनी निजी गाड़ियों से इन सैनिकों की भरपूर सहायता की। एबटाबाद परेड ग्राउंड पर इन लोगों को ठहराया गया। इस दिन सारे शहर में मूसलाधार बारिश हो रही थी। इस बारिश में ये सैनिक खुले आसमान के नीचे असहायों की स्थिति में थे। ऐसी भीषण विपत्ति में कुछ गोरखा सैनिकों ने इनकी सहायता की और सारे मैदान में तिरपाल लगा दिये। जनता ने कई गाड़ी पुआल लाकर इन तिरपालों के अंदर डाल दी ताकि गढ़वाली सैनिकों व उनके परिवार पानी से अपना बचाव कर सकें।

दूसरे दिन सभी बंदी गढ़वाली सैनिकों के लिये आदेश हुआ कि ए कंपनी की प्लाटून नं. 4 गाड़ी में बैठे। इस प्लाटून के नेतृत्व चंद्र सिंह भंडारी कर रहे थे। इन लोगों को काकुल ले जाने की योजना बनी। प्लाटून नं. 1 के जवानों से नहीं रहा गया। उन्होंने अंग्रेजों से मांग की कि जहां प्लाटून नं. 4 जायेगी, वे भी वहीं जायेंगे। इन पर सभी लोगों को एक ही साथ गाड़ी में बैठा दिया गया। गढ़वाली सैनिकों के परिवारों को एबटाबाद में ही छोड़ दिया गया। सभी गढ़वाली सैनिकों को काकुल लाकर बड़े-बड़ें टैंटों के अंदर भेड़-बकरियों की तरह ठूंस दिया गया। इन टैंटों के बाहर कड़ी सुरक्षा व्यवस्था की गयी थी। इन टैंटों के चारों ओर मशीनगनें लगी हुई थी।

पेशावर कांड के गढ़वाली सैनिकों को तोप से उड़ाये जाने का दिन निश्चित हुआ 28 अप्रैल, 1930 । परंतु 26 अप्रैल, 1930 के अंग्रेजों ने अपनी यह योजना भी स्थगित कर दी। इसका मुख्य कारण था कि सारे हिन्दुस्तान में इन सैनिकों के प्रति अथाह प्रेम उमड़ आया था और यह निश्चित था कि ऐसे आक्रोशित वातावरण में यदि अंग्रेज इन सैनिकों के खून से अपने हाथ रंगेंगे तो संपूर्ण हिंदुस्तान में अंग्रेजों के खून से ही होली खेल दी जाती। इस बीच इन सैनिकों के परिवारों को कोटद्वार रेलवे स्टेशन पर छोड़ दिया गया।

गढ़वाली सैनिकों पर गोली चलाये जाने का आदेश रद्द हो गया, तत्पश्चात् सभी सैनिकों पर न्यायालय में मुकदमा चला। इन सैनिकों को अपने पक्ष में मुकदमें की पैरवी हेतु वकील चुनने की पूरी स्वतंत्रता दे दी गयी। इस समय इस केस की पैरवी करने के लिए हिंदुस्तान के नामी वकीलों ने अपने नाम प्रस्तुत किये, परन्तु गढ़वाली सैनिकों ने सर्वसम्मति से तय किया कि बैरिस्टर मुकन्दीलाल उनके मामले में पैरवी करेंगे, फलस्वरूप बैरिस्टर मुकंदीलाल को लैन्सडौन से बुला लिया गया। बैरिस्टर की फीस के लिये पहले ही तय कर लिया गया कि उसे गढ़वाली सैनिकों के जमा फंड एवं डिपॉजिट में से काट दिया जायेगा।

जब कोर्ट में पेशियां लगने लगीं, तो इनक्वारिंग जनरल काकुल आये, जनरल श्री चंद्र सिंह भंडारी (गढ़वाली) को पहले से ही जानता था क्योंकि हवलदार चंद्रसिंह गढ़वाली अंबाला में उसका पी.टी. मास्टर रह चुका था। यही कारण था कि प्रशिक्षण काल में दोनों के मध्य गुरू-चेला का नाता था। जब जनरल ने गढ़वाली को देखा तो उसने गढ़वाली को उस्ताद साहब सलाम कहकर पुकारा। गढ़वाली पहले ही अंग्रेजों के विरूद्ध हो चुका था। उसने बाएं पैर से अपना बूट निकालकर जनरल से कहा- सलाम करना है, तो मेरे बूट को सलाम करो, अब हम अंग्रेजों के दुश्मन हैं।

गढ़वाली के अभद्र व्यवहार से क्रोधित हो जनरल ने गढ़वाली की रिपोर्ट को बिगाड़ दिया। जिसमें उन प अन्य कई धारायें लगा दीं, ताकि चन्द्र सिंह गढ़वाली को सबक मिल सके।

बैरिस्टर मुकंदीलाल ने एक वकील की हैसियत से पेशावर कांड का निर्णय पर गढ़वाल के भविष्य को अवलंबित बनाया। साथ ही उस फैसले की प्रतिक्रिया की ओर जनता का ध्यान आकृष्ट किया। देशवासियों को गढ़वाली वीरों की सैनिक सेवाओं की उपयोगिता एवं महत्व के साथ-साथ उनकी राजभक्ति के उदाहरण प्रस्तुत किये। इन सबका न्यायाधीशों पर अच्छा प्रभाव पड़ा। इस कोर्ट मार्शल का विवरण 1 जून, 1930 के अंग्रेजी दैनिक समाचार पत्र में इस प्रकार प्रकाशित हुआ था-

सन् 1850 के पश्चात् बगावत के लिये भारतीय सैनिकों का पहला कोर्ट मार्शल 2 जून, 1930 को एबटाबाद के पास काकुल में हो रहा है। कोर्ट मार्शल में सात वरिष्ठ अधिकारी हैं। अध्यक्ष अंबाला ब्रिगेड के एरिया कमांडर ब्रिगेडियर डब्लू. ई. विलसन जॉसटन हैं। कप्तान स्टिफेन, जज एडवोकेट हैं, जिनका काम है शहादत को अंग्रेजी में लिखना और वादी-प्रतिवादी दोनों को सलाह देना, वह अध्यक्ष और सदस्यों की ओर से गवाहों से प्रश्न पूछते हैं और उनसे गवाही लेने की कोशिश करते हैं। कर्नल विंग, सैनिक सरकारी वकील हैं और मि. मुकंदीलाल बार एट लॉ यू.पी. कौंसिल के डिप्टी प्रेजीडेन्ट को अपने कमांडिग अफसर के द्वारा अभियुक्तों के मित्र के तौर पर काम करते हैं। जिन्हें सैनिक अधिकारियों ने इस कार्य के लिये नियुक्त किया है। अदालत तोपखाना स्कूल के उस कमरे में बैठती है जहां वक्तव्य दिये जाते हैं। इस कमरे में यू अक्षर के आकार की अनेक मेजें रखी हुयी है।.....

.....अध्यक्ष एक सिरे पर बैठता है, उसके दायें और बायें अदालत के सदस्य और जज एडवोकेट बैठते हैं। पहले छोर पर दाहिनी और सरकारी वकील, दुभाषिये एक अंग्रेज और एक गढ़वाली तथा संवाददाता हैं। अध्यक्ष के बायीं ओर अन्त में बचाव पक्ष के कौंसिल अपराधियों के वकील, मित्र बैंचों में पंक्तियों में बैठते हैं। मेज के दोनों छोरों के बीच में और अध्यक्ष के सामने सैनिक वर्दी पहने आठ अंग्रेज सिपाही संगीन चढ़ाये, बंदूक लिये अभियुक्तों से दूर दोनों छोर पर बैठते हैं। जब गवाह शपथ लेता है, तो सारी अदालत उठ खड़ी होती है।

यह (सैनिक न्यायालय) फौजी अदालत (कोर्ट मार्शल) सेना के तब तक के इतिहास मे सबसे बड़ी मानी जाती थी, जबकि एक पूरी की पूरी बटालियन पर सैनिक कानून के अंदर भीषणतम आरोप लगाया गया था।

कोर्ट मार्शल की अदालत में 2 जून 1930 को मुकाबला प्रारंभ था और बहस समाप्त हुई 8 जून, 1930 को। 11 जून, 1930 को अदालत ने अपना फैसला सुनाया। अंग्रेजों का विचार था कि रॉयल गढ़वाल राइफल्स तोड़ दी जाय, परंतु बैरिस्टर मुकंदीलाल ने यहां पर यह तर्क दिया कि

अपराध मात्र 2/18 रॉयल गढ़वाल राइफल्स की प्लाटून नं. 4 एवं प्लाटून 1 के सैनिकों का है इसलिये पूरी गढ़वाल राइफल्स को तोड़ने का सीधा अर्थ है कि मुठ्ठी भर लोगों के अपराध की सजा संपूर्ण फौज को देना। 2/18 रॉयल गढ़वाल राइफल्स के सैनिकों ने पेशावर में गोली चलाने के आदेश को न मानकर उचित ही किया, क्योंकि फौज का काम फौज से लड़ना है, जनता पर गोली चलाना नहीं। इस कार्य के लिये पुलिस का निर्माण हुआ है।

परिणामस्वरूप पेशावर कांड के 63 वीर सैनिकों पर मुकदमा चला, जिनमें तीन गढ़वाली सैनिक अंग्रेजों द्वारा दिये गये प्रलोभनों से सरकारी गवाह बन गये, शेष रहे 60 सैनिक। 11 जून, 1930 के फैसले के अनुसार कोर्ट मार्शल के सैनिक न्यायाधीशों ने 43 सिपाहियों को कोई दंड न देकर मात्र सेना से उन्हें हटाने का आदेश दिया। 17 ओहदेदारों को उत्तरदायी प्रभावपूर्ण पदासीन होने के कारण 7 से लेकर डेढ़ वर्ष तक के कारावास का दंड दिया गया। इस बगावत के लिये मुख्य रूप से जिम्मेवार चंद्र सिंह गढ़वाली को आजन्म कारावास की सजा दी, परंतु सबको अवधि पूर्ण होने से बहुत पहले ही रिहा कर दिया गया। जबकि चंद्र सिंह गढ़वाली को 11 वर्ष 3 माह व 18 दिन की सजा के बाद 26 दिसम्बर, 1941 कारावास से मुक्त किया गया।

फैसला सुनाने से पूर्व सभी गढ़वाली सैनिकों को यह भय था कि निश्चित ही उन्हें मृत्यु-दंड दिया जायेगा, परन्तु उनकी पैरवी कर रहे सुयोग्य बैरिस्टर मुकंदीलाल ने ऐसा होने नहीं दिया। चंद्र सिंह गढ़वाली को जब अपराधी नंबर एक बनाया गया तो उसने कोर्ट मार्शल के प्रेसीडेंट जनरल से पूछा था-मुझे मुल्जिम नं. एक क्यों बनाया गया? इस पर ब्रिगेडियर विलसन ने जवाब दिया कि तुम्हारे विरूद्ध खुफिया पुलिस रिपोर्ट है, बटालियन के कमांडिंग अफसर द्वारा स्वयं तुम्हें कांग्रेसी सभा में देखा गया था। साथ ही संदेह है कि बटालियन में बगावत की चिंगारी तुमने सुलगायी है, इसलिये तुम्हें अपराधी नं. 1 बनाया गया है।

12 जून, 1930 को 17 ओहदेदारों एवं 43 राईफलमैनों को अलग कर दिया गया। काकुल में इन लोगों का सारा निजी सामान छीन लिया गया।

वहां से ये सभी अत्यन्त दीन-हीन अवस्था में लाहौर पहुंचे। लाहौर में कांग्रेसी कार्यकर्ताओं ने बड़ी गर्मजोशी से इन सैनिकों का स्वागत किया और चांदी के 12 हजार रूपयों की थैली इन सैनिकों को भेंट की, परन्तु इन सैनिकों ने प्यार से दी गयी भेंट को ससम्मान लौटा दिया। काकुल से इन गढ़वाली सैनिकों को सुरक्षित लैंसडौन पहुंचाने का भार कैप्टन ठक्कर को सौंपा गया था, जिसे उन्होंने कर्तव्यनिष्ठा से पूरा किया।

पेशावर कांड के सभी गढ़वाली सैनिकों को उनके सेना से निकाले जाने का प्रमाण पत्र दिया गया था, परंतु गढ़वाली सैनिकों ने आक्रोशित होकर प्रमाण पत्र फाड़ डाले। 14 जून, 1930 को लैंसडौन लाकर इन सभी 43 राइफलमैनों की सेवायें समाप्त कर दी गयी। लंबे संघर्ष के बाद कहीं जाकर सन् 1972 मे भारत सरकार ने इनको स्वतंत्रता संग्राम सैनानी का दर्जा देकर इनके योगदान को अन्तत: मान्यता दी परंतु तब तक अनेक ऐसे सैनिक इस सम्मान को लेने के लिये जीवित नहीं बचे थे।

जनपद पौड़ी गढ़वाल विरासत से वर्तमान तक के प्रकाशन की हार्दिक बधाई एवं शुभकामनाये

mRrjk[k.M dk fo'okl] mRrjk[k.M dh lsok esa lefiZr

सिद्धबली बाबा स्वीट शॉप

नजीबाबाद रोड़ कोटद्वार (गढ़वाल) उत्तराखण्ड

स्वतंत्रता संग्रामियों का गढ़ रहा है दुगड्डा

स्वतंत्रता आंदोलन में दुगड्डा नगर तत्कालीन संयुक्त गढ़वाल की एकमात्र विकसित व्यापारिक मंडी के साथ-साथ सामाजिक, सांस्कृतिक और राजनैतिक गतिविधियों का भी प्रमुख केन्द्र बिंदु था। गोरख्याणी के बाद चराचरी युग में तो दुगड्डा नगर का महत्व काफी बढ़ गया था। गदर के पश्चात गढ़वाल में भी सामाजिक सुधार के रूप में जनता संगठित होते हुए स्वतंत्रता के लिये लामबंद हुई।

गढ़वाल के स्वतंत्रता संग्राम के इतिहास पर दृष्टिपात करने से विदित होता है कि गढ़वाल में स्वतंत्रता संग्राम की आग की चिंगारी यहीं से ही फूटी थी। दुगड्डा की सरजमीं पर अनेक सेनानियों, राष्ट्रीय नेताओं के आदर्शो पर चलकर यहां की जनता को नेतृत्व प्रदान किया और उनमें आजादी की चेतना का संचार किया।

गांधीवादी सत्याग्रहियों में जिन लोगों का नाम प्रमुखता से लिया जाता है, उनमें कैप्टन रामप्रसाद नौटियाल, जगमोहन सिंह नेगी, कृपाराम मिश्र 'मनहर', बैरिस्टर मुकंदीलाल, भक्त दर्शन, बाबू किशन दयाल गुप्ता, भगीरथ लाल, बलदेव सिंह आर्य, आदित्यराम दुदपुड़ी, जयानंद भारती आदि को भी बड़े आदर के साथ याद किया जाता है।

दुगड्डा नगर आदि समय में गढ़वाल-तिब्बत व्यापार का व्यापारिक केन्द्र था। यहां से ही गढ़वाल के लिये पैदल यात्रा शुरू होती थी। गढ़वाल के सुदूर आंचलों में सामान लाने, ले जाने वाले ढाकर, पत्र-वाहकों के काम करते थे। आजादी के गूंज का शंखनाद इन्हीं लोगों के द्वारा पूरे गढ़वाल में गुंज्जायित होता था, जिस किसी को भी किसी भी प्रकार का संदेश प्रसारित करवाना होता था वह दुगड्डा के 'महावीर दल' कार्यालय से प्रचारित-प्रसारित कराता था। कहने को तो यह दल सामाजिक, सांस्कृतिक गतिविधियों के लिये गठित किया गया था, परंतु हाथी के दांत खाने के और दिखाने की कहावत के आधार पर उसकी अनुनिहित समस्त गतिविधियां ब्रिटिश हुकूमत की जड़ों पर मठ्ठा डालने का काम करती थी।

यहां पर सुदूर आंचलिक क्षेत्रों से आये स्वतंत्रता संग्राम सैनानी प्रशिक्षण प्राप्त करते थे। आर्य समाज के जलसों, नाटकों व अन्य सांस्कृतिक कार्यक्रमों से स्वतंत्रता संग्राम को हवा देने का काम होता था। संभवत: संपूर्ण गढ़वाल में रामलीला नाटक मंचन का सर्वप्रथम सूत्रपात दुगड्डा में ही हुआ था, जिसे देखने के लिये सुदूर ग्रामीण अंचलों के स्त्री-पुरूष और बच्चे बूढ़े बीस से बाईस किमी. दूर से पैदल चलकर आते थे। रामलीला आदि सांस्कृतिक क्रिया-कलापों में सर्वाधिक योगदान नीराम शर्मा, श्रीराम नैथाणी, मुसद्दीलाल, भैरवदत्त देवरानी, हरिप्रसाद गर्ग, भीष्मचंद आदि का रहता था।

विदेशी कपड़ों के बहिष्कार के समय सन् 1930 में दुगड्डा नगर के सुभाष बाजार के मुख्य चौराहे पर बाबू किशनदयाल, भगीरथ लाल और प्यारेलाल आदि नवयुवकों ने जो उस समय के पढ़े-लिखे समाज के लोग थे, विदेशी वस्त्रों की होली जलायी। कहा जाता है कि इस हेतु इन तीनों लोगों को ब्रिटिश प्रशासकों ने डेढ़ से दो वर्ष की सजा सुनाई थी।

कांग्रेस में शामिल होने के साथ ही गढ़केसरी अनुसूया प्रसाद बहुगुणा एवं बैरिस्टर मुकंदीलाल के प्रयासों से ही गढ़वाल में प्रथम कांग्रेस कमेटी की 1920 में स्थापना हुयी। तथा वहीं से इस संगठन का विस्तार गढ़वाल के अन्य भागों में हुआ। गढ़वाल के इतिहास में प्रथम विराट कांग्रेस सम्मेलन 31 मई, 1930 को दुगड्डा में आयोजित किया गया। जिसके पश्चात् सन् 1934 में कांग्रेस को वैधानिक घोषित किया गया। इस सम्मेलन की अध्यक्षता पं. गोविंद बल्लभ पंत ने की थी। प्रथम सत्याग्रह आंदोलन की रूप रेखा कांग्रेस कमेटी के संचालक प्रताप नेगी ने बनाई थी।

नेहरू जी सन् 1936 में कांग्रेस कमेटी के निमंत्रण पर दुगड्डा नगर पहुंचे तथा उन्होंने गढ़वाल में कांग्रेस संगठन की प्रगति की समीक्षा की। कमेटी की संस्तुति पर पहले विधानसभा चुनाव हेतु गढ़वाल से अनुसूया प्रसाद बहुगुणा और जगमोहन सिंह नेगी को इस चुनाव के लिए नामांकित किया गया। संयुक्त प्रांत के मंत्रिमंडल बनने पर इस क्षेत्र की काफी पुरानी मांग दुगड्डा-कांडी, श्रीनगर-कर्णप्रयाग मोटर मार्ग की मांग स्वीकृत हुई। 19 फरवरी, 1936 को तत्कालीन प्रदेश के मुख्यमंत्री पं. गोविंद बल्लभ पंत द्वारा दुगड्डा में पधारकर इस मोटर मार्ग का उद्घाटन किया गया।

कहा जाता है कि यहां के नवयुवकों के उत्साह के बारे में सुनकर ही अखिल भारतीय कांग्रेस कमेटी के अध्यक्ष पं. जवाहर लाल नेहरू सन् 1936 में दुगड्डा आये। उनका स्वागत खोह नदी के उस विशाल सपाट रोखड़ में जहां आज राजकीय इंटर कालेज है, में हुआ था। पं. नेहरू को देखने के लिए गढ़वाल के सुदूर क्षेत्रों से विशाल भीड़ उमड़ पड़ी थी। दुगड्डे के प्रमुख सांस्कृतिक कर्मी मुंशीलाल ने ''झंडा ऊंचा रहे हमारा'' गीत उनके स्वागत के समय गाया था, जिसके लिये नेहरू जी ने उनके मधुर कंठ की भूरि-भूरि सराहना की थी।

सामंतशाही के बर्बरतापूर्ण अत्याचारों के खिलाफ कांग्रेस द्वारा बुलंद की गयी आवाज व आंदोलनों ने गढ़वाल में स्वतंत्रता आंदोलन में नई उमंग व समझ पैदा कर दी। दुगड्डा राजनैतिक सम्मेलनों का प्रमुख केन्द्र बन गया था। गढ़वाल में सत्याग्रह आंदोलन को सुव्यवस्थित ढंग से चलाने का श्रेय भी इसी नगर को है। गढ़वाल में जागृति लाने के लिए प्रथम इसी नगर में छापाखाना खुला। यहीं से सर्वप्रथम समाचार पत्र 'गढ़-सामाचार' गिरिजा प्रसाद नैथाणी ने निकाला। धीरे-धीरे अन्य स्थानों से भी पत्र-पत्रिकाओं व साहित्य का प्रकाशन होने लगा। तत्कालीन ब्रिटिश गढ़वाल के डिप्टी कमिश्नर ईबटसन ने सत्याग्रहियों के समर्थन में भाषण देने के आरोप में जब अनुसूया प्रसाद, कोतवाल सिंह नेगी, जीवानंद डोभाल आदि को गिरफ्तार करवाया तो इसके विरोध में ईबटसन के पौड़ी से वापस नैनीताल लौटते समय दुगड्डा में बड़ी पुलिस व्यवस्था के बावजूद सत्याग्रहियों ने उन्हें काले झंडे दिखाये।

दुगड्डा व कोटद्वार क्षेत्र में कृपाराम मिश्र 'मनहर' व प्रताप सिंह नेगी को

चंद्रशेखर आजाद का नाथोपुर (दुगड्डा) प्रवास

उत्तराखण्ड में जहां गांधीवादी नेताओं का आना जाना लगा रहता था, वहीं बड़े क्रांतिकारियों की गतिविधियों से यह क्षेत्र एकदम अछूता रहा। सिवाय एक मात्र क्रांतिकारी चंद्रशेखर आजाद की दुगड्डा यात्रा के और कोई भी विवरण इतिहास में नहीं मिलता है। आजाद के उत्तराखण्ड के नाथोपुर (दुगड्डा) आने की भी दिलचस्प घटना है। आजाद के एक अत्यंत विश्वस्त साथी था भवानी सिंह रावत। जिनका जन्म 8 अक्टूबर, 1910 को ग्राम पंचूर, पट्टी मवालस्यूं परगना चौंदकोट, जिला पौड़ी-गढ़वाल में हुआ था। इनके पिता नाथोसिंह ब्रिटिश सेना में एक अफसर थे। उन्हें विश्वयुद्ध में गढ़वाल राइफल्स में सराहनीय कार्य करने के लिए सेवानिवृत्ति के पश्चात ब्रिटिश हुकूमत ने दुगड्डा से तीन किमी. दूर नौड़ी जंगल की बीस एकड़ भूमि जागीर के रूप में आनरेरी कैप्टन की पद्वी के साथ प्रदान थी। कैप्टेन नाथोसिंह ने इसे गांव के रूप में आबाद कर लिया, जो नाथोसिंह के नाम पर ही नाथोपुर के रूप में प्रसिद्ध हो गया। उस समय गढ़वाल में शिक्षा का प्रचार नगण्य सा था। इसीलिये अधिकांश शिक्षित व्यक्ति अपने बच्चों को शिक्षार्जन के लिए मैदान में भेजते थे।

नाथोसिंह ने भी अपने पुत्र भवानी सिंह को अध्ययन हेतु चंदौसी भेजा। चंदौसी में अध्ययन के दौरान भवानी सिंह पर आर्य समाज का काफी प्रभाव पड़ा। हाईस्कूल उत्तीर्ण करने के पश्चात् इन्हें रामजस कालेज में दाखिला दिलाया गया, लेकिन ये वहां से हिंदू कालेज में भर्ती हो गये, जो हिंदू कालेज के छात्रावास अधीक्षक नंदकिशोर निगम के कारण क्रांतिकारियों भगतसिंह, चंद्रशेखर आजाद, सुखदेव, राजगुरू, बटुकेश्वरदत्त, जयदेव कपूर, शिव वर्मा आदि की शरण स्थली बनी हुई थी। भवानी सिंह रावत का बचपन सैनिक छावनियों में व्यतीत हुआ था। जहां हिन्दुस्तानियों के प्रति अंग्रेजों के व्यवहार से उनके मन में इसके प्रति आक्रोश पनपने लगा था। हिंदू कालेज मे वे क्रांतिकारी विचारधारा व उन लोगों के संपर्क में आने से अंग्रेज हुकूमत के प्रति आक्रोश अपनी पराकाष्ठा प पहुंच गया। यहां भवानी सिंह रावत 'हिंदुस्तानी समाजवादी प्रजातांत्रिक संघ के सक्रिय सदस्य बन गए। इसी दौरान भवानी सिंह रावत कानपुर में 1927 में संघ के प्रधान सेनापति चंद्रशेखर आजाद से एक संदेश लेकर मिले थे। काकोरी कांड में रोशन सिंह, राजेन्द्र लाहिड़ी, रामप्रसाद बिस्मिल तथा अशफाक उल्ला खां के साथ चंद्रशेखर आजाद भी थे, परन्तु आजाद को छोड़कर उनके सभी साथी पकड़े गये। जिन्हें फांसी की सजा हुई परंतु आजाद फरार होकर भी अंग्रेजी हुकूमत के लिये चुनौती पैदा करते रहे

सत्याग्रह आंदोलन का संचालक चुना गया। असहयोग आंदोलन के तहत् सत्याग्रहियों ने लगान न चुकाना, सरकारी भवनों पर राष्ट्रीय झंडा फहराना, शराब की दुकानों व भट्टियों पर धरने देकर रोक लगाना आदि निर्णय ले लिया।

दुगड्डा में शराब की भट्टियों के पिकेटिंग में सफल होने के कारण गढ़वाल के अन्य क्षेत्रों में भी यह कार्य सफलतापूर्वक संचालित किया गया। 8 सितम्बर, 1932 को वीर जयानंद भारती को तत्कालीन गवर्नर मैल्कम हेली को पौड़ी में काला झंडा दिखाने पर जेल में डाल दिया गया। पुलिस के द्वारा सत्याग्रहियों पर लाठीचार्ज एवं दुर्व्यवहार के विरोध में यहां जनसभायें आयोजित हुई। कई सत्याग्रहियों को बंदी बनाकर बड़ी सजायें सुनाई गई। गांध ी जी के दलितोद्धार कार्यक्रम का उद्घोष में दुगड्डा से हुआ था।

गढ़वाल में स्वतंत्रता के प्रति निरंतर जागरूकता बढ़ती गयी। फरवरी, 1941 को लैंसडौन में डोला-पालकी सम्मेलन में हरिजनों को सवर्णो के समान अधिकार दे दिये गये। धीरे-धीरे कंपनी सरकार के प्रति तीव्र विरोध भड़कने लगा। सन् 1942 में भारत छोड़ो आंदोलन शुरू हुआ। अगस्त क्रांति ने जनता में नवीन चेतना को उद्वेलित कर दिया था। गांधी जी के 'करो या मरो के नारे ने युवकों मे नया उत्साह जागृत किया। यहां भी जगह-जगह जुलूस निकाले गये सभायें आयोजित की गयी व कई लोग गिरफ्तार कर जेल भेज दिये गये। सिविल नाफरमानी के तहत् मालगुजारी बंद कर दी गयी। दुगड्डे में आंदोलनों का यह दौर आजादी तक चलता रहा। आजादी के बाद गढ़वाल में सड़कों का जाल बिछने के साथ-साथ अनेक नगरों के व्यापारिक केन्द्रों के रूप में विकसित होने से दुगड्डा नगर में लोगों की आवाजाही कम होती चली गयी और धीरे-धीरे इसका व्यापारिक महत्व भी कम होता चला गया।

दुर्भाग्य-पूर्ण सच यह है कि आज हम चंद्रशेखर आजाद के देश में बची दो ऐतिहासिक विरासतों इलाहाबाद का अल्फ्रेड पार्क एवं उत्तराखण्ड के दुगड्डा-मैदावन मार्ग पर नाथोपुर स्थित आजाद स्मारक का ऐतिहासिक वृक्ष को संजोकर नहीं रख पा रहे हैं। कुछ निर्लज्ज शरारती तत्वों द्वारा तो नाथोपुर में ऐतिहासिक वृक्ष के चबूतरे को क्षतिग्रस्त कर उसमें लगे शिलापट पर तारकोल पोतकर उसे खोंडित तक करके अपनी मानसिकता का परिचय दिया, परंतु नेहरू युवा केन्द्र दुगड्डा के क्षेत्र संयोजक के प्रयासो व लो.नि.वि. के एक इंजीनियर द्वारा व्यक्तिगत रूप से रूचि दिखाकर इस चबूतरे का न केवल पुर्न:निर्माण किया बल्कि वहां एक शिलापट भी लगाया है।

इन क्रांतिकारियों ने स्वाधीनता के लिए सशस्त्र क्रांति की तीव्र आवश्यकता को महसूस करते हुए बम बनाने की एक फैक्ट्री खोलने का निश्चय किया। इस उद्देश्य हेतु धन एकत्र करने के लिए पहली जुलाई को उत्तर पश्चिम रेलवे के इंपीरियल बैंक में जमा होने वाले एक लाख रूपये की धनराशि लूटने की योजना बनाई गई, मगर इसी दिन पंडित मोतीलाल नेहरू की गिरफ्तारी के विरोध में समूचे देश में आम हड़ताल होने से कार्य सम्पंन नहीं कराया जा सका। तब इसी दिन रात्रि में चांदनी चौक स्थित गडोदिया स्टोर पर डकैती डाली गई। इस डकैती में चन्द्रशेखर आजाद, धवन्तरी, लेखराज, काशीराम, विद्याभूषण, विशम्भर, यशपाल और भवानी सिंह रावत शामिल थे।

इस कांड के पश्चात् पुलिस सक्रियता के चलते आजाद कुछ समय के लिए गुप्त प्रवास एवं अपने युवा साथियों को शस्त्र प्रशिक्षण देने के उद्देश्य से एक निरापद स्थान की तलाश में थे। इसी बीच भवानी सिंह रावत ने अपने गांव नाथोपुर चलने का प्रस्ताव रखा। नाथोपुर को सब तरह से सुरक्षित पाकर आजाद जुलाई, 1930 के दूसरे सप्ताह में पांच साथियों विशम्भर दयाल हजारीलाल, विद्याभूषण, हरिकेण सिंह एवं यशपाल, भवानी सिंह रावत के साथ दिल्ली से दुगड्डा पहुंचे। पिताजी के पूछने पर भवानी सिंह ने सबका परिचय सहपाठी एवं आजाद का परिचय शिकार के शौकीन वनाधिकारी के रूप में कराया। चंद्रशेखर आजाद और उनके साथियों ने आसपास के सघन वन में जमकर शस्त्र प्रशिक्षण व निशानेबाजी का अभ्यास किया। इस दौरान एक बार अचानक शांत वनों में गोलियों की ताबड़-तोड़ आवाज सुनकर उस वन क्षेत्र का वनाधिकारी वहां आ धमका, जो भवानी सिंह रावत से पूर्व परिचित था, परंतु वह उनके बुद्धि कौशल से सन्तुष्ट हो वापस लौट गया और अचानक आयी यह मुसीबत सहज ही टल गई, परंतु आजाद को काम समाप्त अर्थात् प्रशिक्षण पूरा करके जाना जो था। साथियों को निशानेबाजी व शस्त्र प्रशिक्षण में परांगत पाकर आजाद ने लौटते वक्त भवानी सिंह के आग्रह पर एक 'कुकाट' के वृक्ष पर लगातार छह गोलियां दागी थी, जो आज भी उसी वृक्ष पर सुरक्षित बताई जाती है। दिल्ली पहुंचने पर ब्रिटिश हुकूमत ने इन क्रांतिकारियों के एक साथी कैलाशपति को मुखबिर बना लिया, जिससे भूमिगत लोगों की गिरफ्तारियां होने लगी, इससे सब क्रांतिकारियों के लिए अत्यधिक खतरा बढ़ गया। दिल्ली बम कांड में भवानी सिंह रावत का नाम उजागर होने पर उनके नाम का वारंट निकला। जिस पर पुलिस ने इनके घर पर भी छापा मारा, लेकिन भवानी सिंह आशंका को देखते पहले ही फरार हो गये थे। पुलिस को इनका एक फोटो हाथ लगा। उन्होंने इस फोटो को प्रकाशित किया और पकड़वाने वाले को नगद पांच सौ रूपये ईनाम देने की घोषणा कर दी। इस बीच इस कांड के सभी साथी पुलिस व सी.आई.डी. से बचते रहे।

27 फरवरी को आजाद सुबह ही इन सब साथियों को बिना बताये चले गए, जहां वे एक साथी के विश्वासघात के कारण वापस नहीं लौट पाये, परंतु 'मैं आजाद हूं और आजाद ही रहूंगा' के अनुरूप आजाद को ब्रिटिश हुकूमत की लाख कोशिशों के बावजूद भी जीवित नहीं पकड़ा जा सका। आजाद ने इलाहाबाद के अल्फ्रेड पार्क में अंग्रेज हुकूमत के हाथों पकड़े जाने के बजाय स्वयं गोली मार कर शहीद होना पसंद किया। आजाद के शहीद होने पर उनके क्रांतिकारी साथियों में निराशा व्याप्त हो गयी। उन्होंने इसके लिए जिम्मेवार विश्वासघाती साथी को मारने की कोशिशें की, लेकिन वे असफल रहे। 24 सितंबर,1932 को बंम्बई से विदेश जाने की योजना पर विचार-विमर्श करते समय ये सब गिरफ्तार कर लिये गये, परंतु निहत्थे होने से ये कोई मुकाबला भी नहीं कर सके। दिल्ली षड़यंत्र कांड के अभियुक्तों में भवानी सिंह रावत सबसे बाद में गिरफ्तार हुये। इनको जेल में अनेक यातनायें दी गई तथा ट्रिब्यूनल के समक्ष मुकदमा चला, लेकिन ये तनिक भी विचलित नहीं हुये। पक्के साक्ष्यों के अभाव में ट्रिब्यूनल को भंग कर दिया गया और भवानी सिंह रावत भी रिहा कर दिये गये। देश की स्वतंत्रता के पश्चात् भवानी सिंह रावत ने 14 वर्षो तक ग्राम पंचायत निरीक्षक पद का दायित्व संभाला, परन्तु उन्हें सरकारी नौकरी रास नहीं आयी और वे सेवा से त्यागपत्र देकर समाज-सुधार के कार्य में संलग्न हो गये। इस दौरान उन्होंने चंद्रशेखर आजाद के अनमोल विरासत को भी अक्षुण्य रखने के लिए काफी सक्रिय प्रयास किये। वे शिक्षण संस्थाओं में छात्रों को जाकर चंद्रशेखर आजाद की दुगड्डा यात्रा के बारे में जानकारी दिया करते थे, उन्होंने उस ऐतिहासिक वृक्ष के चारों ओर एक पक्का चबूतरा बनवाया। वन विभाग एवं जिला प्रशासन के सहयोग से आस-पास की डेढ़ एकड़ भूमि पर वृक्षारोपण कराकर उसे आजाद स्मारक घोषित किया। बाद में वहां एक अल्प विश्राम-गृह का निर्माण भी किया गया है। लोक निर्माण विभाग दुगड्डा द्वारा उस चबूतरे का पुर्ननिर्माण कर वहां पर चंद्रशेखर आजाद व उनके साथियों के नाम तथा यात्रा तिथि एक शिलापट पर अंकित कराई। सन् 1975 में नगरपालिका परिषद दुगड्डा द्वारा कोटद्वार-दुगड्डा-पौड़ी राजमार्ग पर चंद्रशेखर आजाद की प्रतिमा पालिका भवन के पास आजाद पार्क का निर्माण कराकर स्थापित की गई। भवानीसिंह रावत ने चंद्रशेखर आजाद की एकमात्र दुगड्डा यात्रा की स्मृति को चिरस्थायी रखने के विचार से अपने व्यक्तिगत प्रयासों से आजाद के बलिदान दिवस 27 फरवरी, 1971 से प्रतिवर्ष एक समारोह के आयोजन की परंपरा डाली। प्रारंभ में जिसमें नगर की शैक्षणिक, सांस्कृतिक और साहित्यिक संस्थायें भागीदारी करती थी, तत्पश्चात् नगरपालिका परिषद दुगड्डा ने इस समारोह को व्यवस्थित मेले के रूप दिया। उत्तर प्रदेश पर्यटन विभाग ने सन् 1986 से पर्यटन गतिविधियों को बढ़ावा देने के उद्देश्य से इस शहीद मेले को प्रदेश के मेलों में सम्मिलित कर दिया, परंतु 6 जून, 1986 को भवानी सिंह के देहांत हो जाने से मेले की भव्यता को अपने जीवंत-काल में नहीं देखे पाये। इन तमाम प्रयासों के बावजूद दुर्भाग्य-पूर्ण सच यह है कि आज हम चंद्रशेखर आजाद के देश में बची दो ऐतिहासिक विरासतों इलाहाबाद का अल्फ्रेड पार्क एवं उत्तराखण्ड के दुगड्डा-मैदावन मार्ग पर नाथोपुर स्थित आजाद स्मारक का ऐतिहासिक वृक्ष को संजोकर नहीं रख पा रहे हैं। कुछ निर्लज्ज शरारती तत्वों द्वारा तो नाथोपुर में ऐतिहासिक वृक्ष के चबूतरे को क्षतिग्रस्त कर उसमें लगे शिलापट पर तारकोल पोतकर उसे खंडित तक करके अपनी मानसिकता का परिचय दिया, परंतु नेहरू युवा केन्द्र दुगड्डा के क्षेत्र संयोजक के प्रयासो व लो.नि.वि. के एक इंजीनियर द्वारा व्यक्तिगत रूप से रूचि दिखाकर इस चबूतरे का न केवल पुर्न:निर्माण किया बल्कि वहां एक शिलापट भी लगाया है। लेकिन अभी ऐसे कई प्रयासों की और आवश्यकता है ताकि लोग आजाद की इस यात्रा की मधुर स्मृतियों को बार-बार याद कर सकें।

पराधीन भारत में नेहरू की गढ़वाल यात्रा

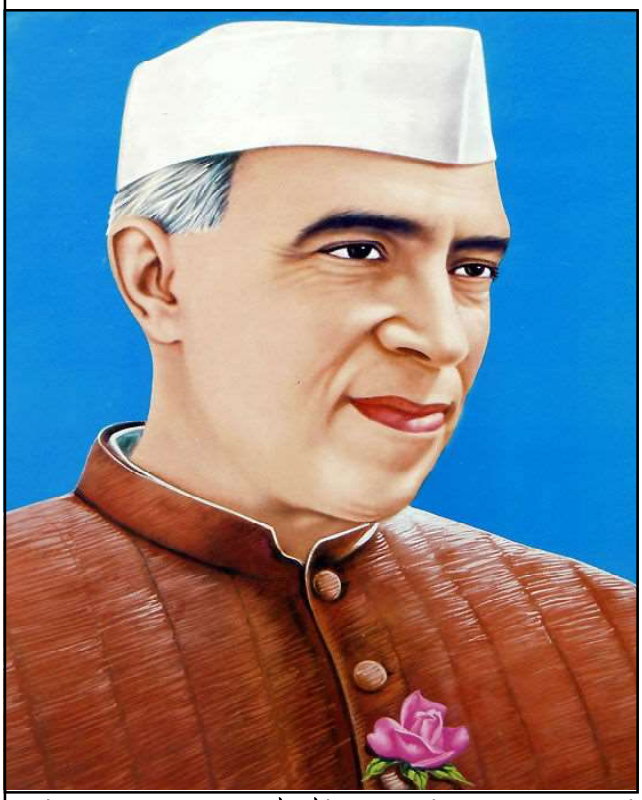

मेरी बहिन विजयलक्ष्मी और मैंने हाल ही में पांच दिन गढ़वाल में व्यतीत किये हैं। इन कई वर्षो में मैंने हिन्दुस्तान का काफी भ्रमण किया है और संयुक्त प्रांत के तो हर एक जिले में, मैं अनेक बार हो आया हूँ, किन्तु गढ़वाल ही एक ऐसा जिला रह गया था, जहां मैं नहीं गया था। हां, करीब डेढ़ साल का अर्सा हुआ होगा, जब कि मैं कुछ घंटों के लिए दुगड्डा अवश्य हो आया था।

पर्वतमालाएं वैसे ही सदा मेरे आकर्षण की वस्तु रही हैं इसलिए मैं कमी को पूरा करने के लिए उत्सुक था। आने-जाने के लिए उपयुक्त मार्ग न होने के कारण अधिक लम्बे अर्से की जरूरत थी, इसी के कारण मुझे संकोच था, किन्तु गढ़वाली मित्रों के आग्रह, विजय लक्ष्मी और राजा नत्थीसिंह तथा गढ़वाल के साथी मिल जाने से मुझे और भी प्रसन्नता हुई। यह यात्रा यद्यपि बड़ी कठिन थी, तथापि मनोरम थी। हम थके-मांदे लौटे, किन्तु फिर भी हमारे मस्तिष्क मधुर स्मृतियों से परिपूर्ण थे। हमने गौचर, देवप्रयाग, श्रीनगर, पौड़ी तथा मार्ग में पड़ने वाले एक से एक रमणीक स्थानों को देखा। हमने अपना मार्ग हवाई जहाज से, मोटर से, घोड़े की पीठ और पैदल तय किया। गाड़ी की सड़क न होने के कारण यहां आने वालों का मुख्य साधन घोड़ा ही है। हवाई जहाज से हम बदरीनाथ तथा केदारनाथ तक गये और इन प्राचीन तीर्थ स्थलों को घेरने वाले उच्च हिमाच्छादित शिखरों के भव्य दृश्य देखे। हम वहां उतर न सके, हमें गौचर तक आना पड़ा। यहां हमारा वायुयान उतर गया। पर्वतीय जनता यहां हमारा स्वागत करने के लिए प्रतीक्षा कर रही थी। फिर हम को पांच सप्ताह लग जाते। आकाश-मार्ग से गढ़देश के नंगे पर्वतों, असंख्या घाटियों और उसके मध्य विशालकाय नदी और गंभीर दिखाई देती है, यहां उसी की चाल में किशोरावस्था की कमनीय झांकी के दर्शन थे। हमने कल-कल शब्द, हर्षतिरेक से खिलखिलाते बालक जैसी गंगा की धवल धारा को देखा। आकाश मार्ग तय करके हमने सड़क पकड़ी और ऋषिकेश से देवप्रयाग तक गंगा के किनारे किनारे गये, जहां कि भागीरथी, अलकनन्दा से मिलती है और मिलने के बाद अन्य नामों को छोड़कर गंगा नाम धारण कर लेते है। यही वह नदी है, जिसने हजारों वर्षो से हिन्दुस्तान के हृदय को जीत रखा है। दोनों नदियों के संगम के उस पार तट पर देवप्रयाग के नीचे नदी की धारा बहती है। देखने से ऐसा मालूम होता है मानों कि देवप्रयाग प्रेम-पूर्ण नेत्रों से नदी के प्रवाह की ओर देख रहा है और इसका आलिंगन करना ही चाहता है। अलकनन्दा के किनारे-किनारे हम घोड़े पर रवाना हुए। हमारे साथ ही साथ बदरीनाथ जाने वाले सन्यासी और यात्री धीरें-धीरे पैदल चल रहे थे। कहीं-कहीं यह मार्ग बहुत टेढ़ा हो जाता था और कहीं इतना सीधा कि जरा पैर फिसलने से आदमी सैकड़ों फुट नीचे बहने वाली नदी में गिर सकता था। अन्य व्यक्तियों की करतल ध्वनि और फूलों की वर्षा इस अवसर पर इतनी सुहावनी मालूम नहीं पड़ती थी, जितनी कि साधारणतय हुआ करती है, क्योंकि इससे हमारे घोड़े चौंक जाते थे। सूर्य गर्म था और छाया कम थी, इसलिए मार्ग कष्टप्रद होता जाता था, रास्ते में एक प्रकार से जंगली बेल के फूल खिले थे, जिनकी सुगन्ध हमारे मस्तिष्कों में एक आनन्द का स्रोत उत्पन्न कर देती थी। जगंली नागफनी के पेड़ भी रास्ते में काफी थे। जंगलों का पता नहीं था और पहाड़ एक दम नंगे थे। सीढ़ियों के आकार के खेत भी बंजर ही से नजर आते थे। अन्ततोगत्वा हम एक मनोरम तथा विस्तृत घाटी में स्थित श्रीनगर पहुंचे। अलकनंदा इसके पास ही बड़ी मंदगति से बहती है। नदी में लकड़ी के टुकड़े ऊपर से बहाकर लाये जाते हैं। श्रीनगर गढ़वाल राज्य की राजधानी है उससे चर्चित यह एक छोटा सा नगर है। यहां हम दो दिन ठहरे। राजनैतिक सम्मेलन में भाग लिया और अपने बहुत पुराने सहयोगियों से मिले। इसके बाद पर्वत के शिखर पर स्थित पौड़ी की ओर रवाना हुए। जहां से बदरीनाथ, केदारनाथ, चौखम्बा, त्रिशूल और नंदादेवी के उच्च हिम्माच्छादित शिखर दिखाई देते हैं। सारे रास्ते हम ग्रामीण स्त्री, पुरूषों और बच्चों से मिले, जो प्रेमपूर्वक हमारा स्वागत करने आये थे।

पौड़ी का कार्यक्रम भी काफी था। जहां एक रात रहकर थके-मांदे घोड़े पर सवार हो रास्ते पर ठहरते और सभाओं में भाषण देते हुए हम देवप्रयाग लौट आये। देवप्रयाग से हरिद्वार और फिर रेलगाड़ी पकड़ी।

गढ़वाल एक विपन्न प्रांत है और वह एक प्रकार देश से कटा हुआ सा ही है। यह बड़ी अजीब बात है कि जहां हम शेष संसार के इतने निकट हैं, वहीं उससे हम कितने कटे हुये भी हैं। जैसे हजारों वर्ष पूर्व बीस मील की यात्रा में एक दिन लगता था, वैसे ही स्थिति आज भी यहां बनी हुई है। गत वर्षो में आने-जाने के साधनों में काफी तब्दीलियां हुई हैं, किन्तु गढ़वाल की यात्रा घोड़े पर या पैदल ही की जा सकती है। आधुनिक संसार के आविष्कारों और वैज्ञानिक खोजों का पता वहां केवल तार के खंभों को देखकर ही चलता है। इस विशाल जिले में सड़कों का न होना एक बड़ी आश्चर्य की बात है। गत महायुद्ध के समय गढ़वाल को आश्वासन दिया गया था कि वहां रेल बना दी जायेगी। इतना ही नहीं, कई लाख रूपया व्यय करके इसके लिए नाप-तोल भी की गई, किन्तु न तो रेल ही गई न सड़क

ही तैयार हुई। यदि गढ़वाल के इस क्षेत्र में कोई रेजीमेंट रखी गई होती, तो ब्रिटिश अधिकारियों की काफी बस्ती होती और सड़क कभी की बन गई होती। अधिकारी गढ़वाल में रहना पसंद नहीं करते हैं और यहां के प्रवास को एक प्रकार से निर्वासन ही सा समझते हैं। उच्च अधिकारी भी निरीक्षण के लिये यहां बहुत कम आते हैं। इतना होने पर भी यदि ब्रिटिश सरकार को कोई खास ऐतराज न होता तो यह सड़क अवश्य बन गई होती। मेरा विचार है कि सरकार को जो ऐतराज है वह इसी आधार पर है कि वह गढ़वाल पर राजनैतिक हलचलों का तनिक भी प्रभाव नहीं पड़ने देना चाहती, क्योंकि वह यहां सेना काफी प्रसिद्ध है, किन्तु मुझे यह जानकर अत्यन्त आश्चर्य हुआ कि इस जिले के हजारों व्यक्ति बंगाल की सशस्त्र पुलिस में नौकर हैं। वे अत्यन्त गरीब हैं और मौजूदा हालत में यह जिला उनका भरण-पोषण नहीं कर सकता। औद्योगिक धंधे तो नहीं के बराबर हैं, इसलिए उनको दूसरी जगहों में नौकरी तलाश करना जरूरी है।

हम बहुत से स्कूलों में पढ़ने वाले बच्चों से मिले और मैंने उनके कई सवाल किये। मुझे पता चला कि उनमें से 90 फीसदी बच्चे ऐसे थे, जिन्होंने मोटर और रेलगाड़ी तो क्या, गाड़ी भी कभी नहीं देखी। हमारे जाने से कुछ दिन पहले उन्होंने एक हवाई जहाज देखा था।

अवश्य गढ़वाल में शीघ्र सड़क बन जानी चाहिये क्योंकि बिना सड़क के वह उन्नति नहीं कर सकता। केवल सड़क ही काफी नहीं, वरन जनता की उत्पादन शक्ति में भी सुधार करने की अत्यधिक आवश्यकता है। सड़क की मांग के अलावा यहां की मुख्य शिकायत पानी की कमी है, भारी टैक्स, डॉक्टरी सहायता पर स्कूलों की कमी है। यदि एक आदमी सख्त बीमार पड़ जाता है, तो यह भी संभव नहीं कि उसे समीप के अस्पताल तक ले जाया जा सके। वह मर जाता है या यदि भाग्यवान हुआ तो बच जाता है। शिक्षा की जोरदार मांग है, किन्तु स्कूल कम हैं और जो हैं वह काफी फासले पर हैं। खेतों के लिए पानी की कमी होना बड़े ताज्जुब की बात मालूम पड़ी, क्योंकि यहां नदियां और झरने काफी तादाद में हैं। दरियाओं की घाटियों के खेत सूखे दिखाई दिये। हमने सीढ़ी के आकर वाले अनेक खेत देखे, जो कि कठिन परिश्रम के पश्चात् पर्वत की शिलाओं को काटकर बनाये गये हैं। ये खेत बेकार ही बिना जुताई के पड़े थे, क्योंकि उनका जोतना उपयोगी नहीं समझा गया। जंगलों की कमी और जमीन के आमतौर पर बंजर होने के कारण पानी का अभाव और भी अधिक खलता है। मेरी समझ में नहीं आया कि कुमाऊं में इतने अधिक जंगल हैं, तो गढ़वाल में इतने कम क्यों हैं? जमीन व अन्य वातावरण भी इतना अच्छा नहीं कि जितना कुमाऊं का। क्या मनुष्य की गलती है या किसानों की मूढ़ता है या अयोग्यता या सरकार की लापरवाही! इस गरीबी और बंजरपन के बीच भी हमें यह प्रतीत हुआ कि गढ़वाल में अनेक शक्तिशाली साधन छिपे पड़े हैं।

जल-शक्ति, जहां-तहां बर्बाद हो रही है। इससे बिजली पैदा करके लाभ उठाया जा सकता है और इससे खेत तथा उद्योग-धंधों को भी जीवन मिल सकता है। शायद यहां बहुत से खनिज पदार्थ भी हैं, जिन्हें खोजने की आवश्यकता है। गढ़वाल में सड़कें बननी चाहिए, किन्तु साथ ही यह भी आवश्यक है कि यहां के खनिज पदार्थो और शक्तिशाली साधनों की जांच हो। इससे केवल गढ़वाल को ही बिजली नहीं मिलेगी, बल्कि प्रांत के अन्य भागों को भी पहुंचाई जा सकती है। इसके लिए विशेषज्ञों की दो कमेटियों की शीघ्र ही नियुक्ति होनी चाहिये। एक कमेटी पदार्थो की खोज करे और दूसरे पानी के उपयोग के तरकीब निकाले एवं हाइड्रो-इलैक्ट्रिक योजना तैयार करे।

जब तक ये योजनाएं पूरी हों तब तक यह संभव है कि दरियाओं का पानी खेतों तक पहुंचाने के लिए पंप बना दिये जांय। उद्योग धंधों के विकास के लिए गढ़वाल में काफी मौका है। इन धंधों में ऊन को विकसित करने से बुनाई मुख्य धंधे हो सकते हैं। इनका विकास भी सुगमता से किया जा सकता है। इन धंधों को विकसित करने से काफी सफलता मिल सकती है। मुझे तो कोई वजह ऐसी मालूम नहीं पड़ती कि यहां इतनी सफलता नहीं मिलेगी।

गढ़वाल में मधुमक्खी पालन भी साधारण बात है, किन्तु जो तरीके इसके लिए काम में आते हैं, वे पुराने हैं और उनमें सुधार की आवश्यकता है। साथ ही मैं यह भी कहूंगा कि मुझे गढ़वालवासियों में उत्साह की कमी दिखाई पड़ी।

ऐसा मालूम होता है कि निराश होकर उन्होंने अपने को भाग्य भरोसे छोड़ दिया और इसकी यह प्रतिक्रिया हुई कि वे दूसरों से कहते हैं कि वही उनके लिए कुछ करें। वे शायद कभी ही स्वयं कुछ करने की सोचते हैं। गढ़वाली बहादुर और हट्टे-कट्टे होते हैं और यदि उन्हें अवसर दिया जाये, तो वे कुछ करके दिखा सकेंगे। आठ वर्ष हुये जब देश भर में सविनय अवज्ञा आंदोलन का दौर दौड़ा था और आजादी की लड़ाई में भाग लेकर जब हमारी नसों में खून दौड़ रहा था, तब फ्रन्टियर में उन्होंने जो वीरता का काम किया इससे वे सारे देश के प्रिय पात्र हो गये।

जनपद गढ़वाल के स्वतंत्रता सैनानी

चन्द्रसिंह गढ़वाली

ग्राम रौणसेरा, जनपद-पौड़ी गढ़वाल

आजन्म कालापानी का दंड मिला। 26 दिसंबर, 1941 को 11 साल, 3 माह व 18 दिन के कारावास के पश्चात मुक्त किये गये।

भैरवदत्त धूलिया

ग्राम मदनपुर, जनपद पौड़ी गढ़वाल

सन् 1942 में भारत रक्षा कानून की धारा 129 एवं 126 के अन्तर्गत 7 वर्ष कठोर कारावास का दंड पाया व सन् 1945 में ही रिहा हुये।

जयानंद भारती

ग्राम-अरकंडई, पट्टी साबली, पौड़ी गढ़वाल

संयुक्त प्रांत के गर्वनर लार्ड मैलकम हेली को 13 जून, 1932 को पौड़ी में काला झंडा दिखाये जाने के विरूद्ध 1 वर्ष का कठोर कारावास का दंड।

भगवती चरण निर्मोही

ग्राम सिराला, पट्टी-कण्डवालस्यूं, जनपद पौड़ी गढ़वाल

सन् 1940 में 9 माह का कारावास एवं 500 रूपया आर्थिक दंड, सन् 1942 में भारत छोड़ो आंदोलन में 1 वर्ष कारावास का दंड पाया।

भवानी सिंह रावत

ग्राम पंचूर, पट्टी-मवालस्यूं, जनपद पौड़ी गढ़वाल

सन् 1929 में वायसराय बम केस के सिलसिले में फरार हो जाने के पश्चात् 24 दिसम्बर, 1931 को गिरफ्तार किये गये।

सबूतों के अभाव में फरवरी 1933 को मुक्त कर दिये गये। क्रांतिकारी चंद्रशेखर आजाद के साथी रहे व उन्हें अपने साथ गढ़वाल लाये।

ललिता प्रसाद नैथानी

ग्राम नैथाणा, पट्टी-मवालस्यूं, पौड़ी गढ़वाल।
सन् 1942 में छः माह के लिये लैंसडौन में स्थानबद्ध रहे।

भक्त दर्शन

ग्राम भौराड़, पट्टी-सावली, पौड़ी गढ़वाल।
अक्टूबर, 1930 में 3 माह, सन् 1940 में 6 माह, 1 अगस्त, 1942 में 9 माह का कारावास व 10 अगस्त, 1942 को 19 माह तक नजरबंद रहे।

बलदेव सिंह आर्य

ग्राम उमथ, पट्टी-सीला, जनपद पौड़ी गढ़वाल
सन् 1930 में राजद्रोहात्मक भाषण देने के कारण 6 माह कठोर कारावास एवं 200 रूपया आर्थिक दंड पाया। सन् 1941 में नजरबंद रहे।

हेमवती नंदन बहुगुणा

ग्राम बुधाणी, जनपद-पौड़ी गढ़वाल,
सन् 1942 के भारत छोड़ो आंदोलन का इलाहाबाद में रहकर नेतृत्व किया। ब्रिटिश सरकार ने इन्हें जिंदा व मुर्दा पकड़वाने के लिये 10 हजार रूपये का ईनाम घोषित किया। स्वास्थ्य खराब होने के कारण सन् 1945 में मुक्त कर दिये गये।

रूद्रीदत्त पांथरी

ग्राम नौगांवखाल, जनपद-पौड़ी गढ़वाल।
सन् 1940 एवं 1942 में कारावास का दंड पाया।

उमराव सिंह अधिकारी

ग्राम बैंग्वाड़ी, पट्टी-नादलस्यूं, पौड़ी-गढ़वाल
सन् 1930 में 1 वर्ष का कठोर कारावास एवं सन् 1942 में 1 वर्ष का कारावास व 25 रूपया आर्थिक दंड मिला।

कृपाल सिंह रावत

ग्राम कुंडी, पट्टी-कंडवालस्यूं, पौड़ी गढ़वाल
सन् 1930 में 2 माह तथा सन् 1931 में दो वर्ष छः माह का कठोर कारावास एवं ढ़ाई हजार का आर्थिक दंड मिला।

बच्चूलाल भट्ट

ग्राम लैंसडौन, जनपद-पौड़ी गढ़वाल।
अंबाला गोलीकांड के आरोप में 1931 में गिरफ्तार, सन् 28 अप्रैल, 1933 को बैंक डकैती के सिलसिले में कालापानी की सजा, सन् 1938 में अंडमान से भारत वापसी।

दयाशंकर भट्ट

ग्राम फलस्वाड़ी, पौड़ी गढ़वाल
सन् 1941 में 50 रू. आर्थिक दंड सहित 6 माह का कठोर कारावास का दंड। 12 अगस्त 1942 से 8 मार्च, 1944 तक नजरबंद रहे।

जगमोहन सिंह नेगी

ग्राम कांडी, पौड़ी गढ़वाल
सन् 1930 में 1वर्ष का कठोर कारावास दंड सहित 500 रू. का आर्थिक दंड, सन् 1941 में एक वर्ष का कारावास का दंड मिला। सन् 1942 में भारत रक्षा कानून के अन्तर्गत 2 वर्ष तक नजरबंद रहे।

कीर्तिराम भारद्वाज

ग्राम मज्याड़ी, पौड़ी गढ़वाल।
सन् 1940 में 9 माह का कारावास व 50 रू. आर्थिक दंड पाया।

सकलानंद डोभाल

ग्राम डोभा, पट्टी-इडवालस्यूं, पौड़ी गढ़वाल।
सन् 1921के असहयोग आंदोलन में 2 माह का कारावास, सन् 1928 साइमन वापस जाओ कलकत्ता प्रदर्शन में भाग लिया। सन् 1930 में ईबटसन कांड के पश्चात् धारा 144 की अवहेलना करने पर 2 माह का कारावास, सन् 1932 में 1 वर्ष का कारावास, सन् 1940 में 3 वर्ष तक नजरबंद रहे।

गोकुल प्रसाद भट्ट

ग्राम खांकरा, पट्टी-बछणस्यूं, पौड़ी गढ़वाल।
सन् 1946 में बंम्बई में हुये नौसेना विद्रोह में सक्रिय भाग लिया। कारावास का दंड पाया।

कृपाराम मिश्र 'मनहर'

ग्राम सरूड़ा (दुगड्डा) पौड़ी गढ़वाल।
सन् 1930 में 6 माह, सन् 1936 में 3 माह का कारावास एवं 50 रू. आर्थिक दंड पाया। सन् 1942 में 1 वर्ष तक नजरबंद रहे।

मायाराम बड़थ्वाल

सत्याग्रह के आरोप में लैंसडौन में गिरफ्तार।
लैंसडौन में सत्याग्रह के आरोप में गिरफ्तार हुये। जिस कारण 4 माह कारावास का दंड मिला, बरेली में 8 अक्टूबर, 1942 से 15 जून, 1944 तक नजरबंद रहे।

गोकुल सिंह नेगी

ग्राम ढौंरी, पट्टी-डबरालस्यूं, पौड़ी गढवाल।
नमक सत्याग्रह आंदोलन में दुगड्डा (कोटद्वार) में सन् 1930 को प्रदर्शन के दौरान गिरफ्तार हुये। जिसमें दंड स्वरूप 6 माह का कारावास हुआ। सन् 1941 में 1 माह के कारावास की सजा एवं 50 रू. का आर्थिक दंड, सन् 1942 में नजरबंद किये गये एवं अप्रैल 1944 मे रिहा हुये।

नारदानंद

ग्राम पदमपुर, कोटद्वार, पौड़ी गढ़वाल।
सन् 1930 में शराब की दुकान को नुकसान पहुंचाने के आरोप में 1 माह का कारावास, 1941 में व्यक्तिगत सत्याग्रह आंदोलन में 6 माह का तथा सन् 1942 में 2 वर्ष तक नजरबंद रहे।

मित्रानंद बौंठियाल

ग्राम रोहणी मल्ली, वाया-दुगड्डा, पौड़ी गढ़वाल।
सन् 1941 में व्यक्तिगत सत्याग्रह आंदोलन में 6 माह का कारावास का दंड मिला।

ललित मोहन जोशी

ग्राम पोखड़ा, पट्टी-तलाई, पौड़ी गढ़वाल।
अगस्त सन् 1942 में एक वर्ष का कारावास का दंड मिला।

कृपाल सिंह रावत

ग्राम द्वारीखाल, ब्लॉक-ढांगू, पौड़ी गढ़वाल।
सन् 1942 में विद्यार्थी जीवन में ही आंदोलन में भाग लेने के कारण गिरफ्तार हुये। एवं 15 दिन तक कारागार में रहे। 22 अप्रैल, सन् 1944 में पुनः गिरफ्तार हुये जिस कारण 1 वर्ष की कठोर कारावास का दंड एवं पचास रूपये का आर्थिक जुर्माना हुआ।

कर्नल बुद्धि सिंह रावत

ग्राम बमोली, पट्टी-डबरालस्यूं, पौड़ी गढ़वाल।
सन् 1940 में 2/18 रॉयल गढ़वाल राइफल्स में भर्ती हुये, 15 फरवरी, 1942 तक आजाद हिंद फौज में कर्नल के पद पर अपना कार्य किया।

कर्नल चंद्र सिंह नेगी

ग्राम हैडाखोली, पट्टी- असवालस्यूं, पौड़ी गढ़वाल।सन् 1919 में गढ़वाल रायफल्स में भर्ती हुये, मेसोपोटामिया में युद्ध में भाग लिया और घायल हुये। सन् 1942 से सन् 1946 तक आजाद हिंद फौज में कर्नल के पद पर आसीन रहे।

गौमान सिंह भंडारी

ग्राम सुराड़ी, पट्टी-डबरालस्यूं, पौड़ी गढ़वाल।
8 अगस्त 1932 को गढ़वाल रायफल्स में भर्ती हुये। सन् 1942 से सन् 1946 तक आई.एन.ए. में कैप्टेन के पद पर रहे।

चंडी प्रसाद नौडियाल

ग्राम आली, पट्टी-पैडुलस्यूं, पौड़ी गढ़वाल।
सन् 1942 से सन् 1946 तक आजाद हिंद फौज के सैनिक रहे।

मातबर सिंह भंडारी

वर्तमान निवास-श्रीनगर सन् 1942 से 1946 तक आजाद हिंद फौज में सैनिक रहे।

भूपाल सिंह गुंसाई

ग्राम बहेली, खातस्यूं, पौड़ी गढ़वाल।
2 जुलाई 1937 को गढ़वाल राईफल्स में भर्ती हुये सन् 1942 से सन् 1946 तक आजाद हिंद फौज में कप्तान के पद पर रहे।

दलवीर सिंह रावत

ग्राम नंदकोट, पो. उज्याड़ी, पौड़ी गढ़वाल। सन् 1940 में गढ़वाल राईफल्स में भर्ती हुये, सन् 1942 से 1946 तक आजाद हिंद फौज में सैनिक रहे।

बालम सिंह रावत

ग्राम चिनवाड़ी, पट्टी-तलाई, पो. कुणजखाल, पौड़ी गढ़वाल।15 फरवरी सन् 1942 से 1946 तक आजाद हिंद फौज में सैनिक के पद पर रहे। 18 अप्रैल, 1944 को इम्फाल में जिन भारतीय आजाद हिंद फौज के सैनिकों ने तिरंगा फहराया। उनमें ये भी शामिल थे।

ध्यान सिंह चौहान

ग्राम मैणा, पो. धरासू, पट्टी-मवालस्यूं, पौड़ी गढ़वाल।
सन् 1939 में गढ़वाल राईफल्स में भर्ती हुये। जर्मन में सुभाष चंद्र बोस द्वारा संगठित आजाद हिंद फौज में सैनिक रहे।

धन्तू सिंह रावत

ग्राम धुलेत, पट्टी-बाली कण्डारस्यूं, पौड़ी गढ़वाल। सन् 1940 में 2 / 18 रॉयल गढ़वाल राईफल्स में भर्ती हुये। 15 जनवरी सन् 1942 से 12 अप्रैल, 1946 तक आजाद हिंद फौज में सैनिक रहे।

पंचम सिंह रौतेला

ग्राम मैन्दोली, जयहरीखाल, पौड़ी गढ़वाल।
18 अप्रैल, 1940 को रायल में गढ़वाल रायफल्स में भर्ती हुये। 15 फरवरी, 1942 से 18 मार्च, 1946 तक आजाद हिंद फौज में सैनिक रहे।

खुशाल सिंह

ग्राम किमवाड़ी, पट्टी-चौथान, पो. बूंगीधार, पौड़ी गढ़वाल। 11 मार्च 1941 को 5 / 18 रॉयल गढ़वाल रायफल्स में सम्मिलित हुये। 15 फरवरी, 1942 से 27 अप्रैल 1946 तक आजाद हिंद फौज में सैनिक रहे। इन्होंने अराकान चटगांव इम्फाल के युद्धों में भाग लिया।

केशर सिंह रावत

ग्राम पठरवोली, पो. काण्डाखाल (कौडिया) पौड़ी गढ़वाल। 5 / 18 रॉयल गढ़वाल रायफल्स में सम्मिलित हुये। 15 फरवरी, 1942 से सन् 1946 तक आजाद हिंद फौज में सैनिक रहे। आजाद हिंद फौज की ओर से असम के जंगलों में ब्रिटिश सेना से लड़े एवं पकड़े गये।

झगड़ सिंह भंडारी

ग्राम-मासों, पट्टी- चौथान, पौड़ी गढ़वाल।
3 नंवबर 1941 को रॉयल गढ़वाल रायफल्स में भर्ती हुये, 15 फरवरी, 1942 से 27 मार्च 1946 तक आजाद हिंद फौज के सैनिक रहे तथा आजाद हिंद फौज के सैनिक के रूप में इम्फाल के युद्ध में भाग लिया।

गजे सिंह नेगी

ग्राम पसीणा, पट्टी-विडोलस्यूं, पौड़ी गढ़वाल।
9 जनवरी 1941 को 5 / 18 रॉयल गढ़वाल रायफल्स में भर्ती हुये, 15 जनवरी 1942 से 13 मार्च 1946 तक आजाद हिंद फौज में सैनिक रहे। असम एवं वर्मा की सीमा पर पोपाहिल में सक्रिय सैनिक की भूमिका रही।

मूलचंद जोशी

ग्राम कदोला, पट्टी-साबली, लैंसडौन, पौड़ी गढ़वाल।9 मार्च 1935 को भारतीय सैन्य चिकित्सा कोर में एक सिपाही के रूप में भर्ती हुये। 15 जनवरी 1942 से 1946 तक आजाद हिंद फौज में सैनिक रहे। नेताजी के आदेश पर अपने साथियों सहित सिंगापुर से 1800 मील दूर रंगून लगभग 1 माह में पहुंचे थे।

बच्चीराम ढौंडियाल

ग्राम घीड़ी, पट्टी- कपोलस्यूं, पो. तोली, पौड़ी गढ़वाल।
15 फरवरी, 1942 से 25 मार्च 1946 तक आजाद हिंद फौज में सैनिक रहे। कोहिमा, इम्फाल, अराकान की पहाड़ियों पर आजाद हिंद फौज के सैनिक के रूप में ब्रिटिश सेना से युद्ध किया।

मखराम बलोदी

ग्राम देवलाड, तहसील-लैंसडौन, पौड़ी गढवाल। जर्मन में संगठित आजाद हिंद फौज के सैनिक रहे।

बच्चन सिंह असवाल

ग्राम सिपुरी पट्टी-बछणस्यूं पौड़ी गढ़वाल।
सन् 1942 से 1946 तक आजाद हिंद फौज में सैनिक रहे।

झगड़ सिंह राणा

ग्राम-भंयासू, पो. देवीखाल, पट्टी- लंगूरवल्ला, पौड़ी गढ़वाल।1 सन् 1942 से 1946 तक आजाद हिंद फौज में सैनिक रहे।

अमर सिंह नेगी

ग्राम कलोड़ी, पो. द्वारीखाल, पौड़ी गढवाल।
सन् 1940 से 2 / 18 रॉयल गढ़वाल रायफल्स में भर्ती हुये। सन् 1942 से 1946 तक आजाद हिंद फौज में सैनिक रहे तथा अराकान युद्ध में भाग लिया।

जगत सिंह रावत

ग्राम-सौली (कौडिया) कुणजोली, पौड़ी गढ़वाल। सन् 1939 में 2 / 18 रॉयल गढ़वाल रायफल्स में सिपाही क्लर्क के रूप में भर्ती हुये। उसके बाद आजाद हिंद फौज के सिपाही के रूप में सिंगापुर युद्ध में भाग लिया।

चंदन सिंह रावत

22 फरवरी, 1939 में 3 / 18 बटालियन रॉयल गढ़वाल रॉयफल्स में भर्ती हुये। 9 सितंबर 1940 में बंम्बई से यूनिट के साथ मित्र राष्ट्रों की ओर से लड़ने सिंगापुर गये। 15 फरवरी 1942 से 1946 तक आजाद हिंद फौज में सैनिक रहे।

शंकर सिंह नेगी

ग्राम रामड़ी, पो. स्मालिंगा (कांडाखाल), पट्टी-अजमेर वल्ला, प्रथम, कोटद्वार पौड़ी गढ़वाल।
28 अक्टूबर 1940 को 3 /18 रॉयल गढ़वाल रायफल्स में भर्ती हुये, 15 फरवरी 1942 से 21 फरवरी 1946 तक आजाद हिंद फौज के सिपाही रहे।

आदित्यराम दुदपुड़ी

ग्राम सैंज मल्ला, पो. डाडामंडी पौड़ी गढ़वाल।
सन् 1942 में 1 वर्ष का कठोर कारावास का दंड मिला।

प्रताप सिंह

ग्राम ढौरी, पट्टी डबरालस्यूं, पौड़ी गढ़वाल।
सन् 1930 में 3 माह, सन् 1932 में 1 वर्ष कारावास एवं सम्पत्ति कुर्क, सन् 1941 में कुछ समय के लिये नजरबंद रहे।

जनपद गढ़वाल के आजाद हिंद फौज के सैनिक

1. धर्मानंद काला, ग्राम-झीरमुली, पट्टी-धनपुर
2. सोड़िया सिंह चौहान, ग्राम बड़ेथ, पट्टी-ढाईज्यूली
3. दीवान सिंह नेगी, ग्राम ग्वाड़, पट्टी थापली
4. दयाल सिंह नेगी, ग्राम बिडोली, पट्टी बिडोलस्यूं
5. खुशाल सिंह ग्राम जसपुर पट्टी कपोलस्यूं
6. बलवन्त सिंह बिष्ट, ग्राम सीकू, पट्टी खातस्यूं
7. कुंवर सिंह नेगी, ग्राम सूला, पट्टी असवालस्यूं
8. कुंदन सिंह नेगी, ग्राम डांग, पट्टी कपोलस्यूं
9. कुंदन सिंह गुंसाई, ग्राम पिनानी, पट्टी घुड़दौड़स्यूं
10. नंदादत्ता काला, पौड़ी, पौड़ी गढ़वाल
11. बलवन्त सिंह, ग्राम मथाना, पट्टी रिगवाड़स्यूं
12. जगत सिंह राणा, ग्राम जलेथा, पट्टी चलणस्यूं
13. त्रिलोक सिंह पुत्र बिगरैल सिंह, पौड़ी गढ़वाल
14. अमर सिंह भंडारी, ग्राम सौड़, पट्टी डबरालस्यूं
15. जीवानंद इस्टवाल, ग्राम इसोटी, पट्टी ढाईज्यूली
16. चंद्र सिंह मेहर, ग्राम बड़ेथ, पट्टी ढाईज्यूली
17. पद्म सिंह पंवार, ग्राम कोटी कमेड़ा, जमलाखाल
18. महीपाल सिंह भंडारी, ग्राम पाली, पट्टी घुड़दौड़स्यूं
19. कुंवर सिंह बुटोला, ग्राम ल्वाली, पट्टी गगवाड़स्यूं
20. गजे सिंह रावत, ग्राम पसीणा, पट्टी बिडोलस्यूं
21. बाग सिंह कैंतुरा, ग्राम कुठार, पट्टी इडवालस्यूं
22. गजे सिंह रावत, ग्राम डूंख, पट्टी खातस्यूं
23. जमन सिंह गुंसाई, ग्राम डिवाई, पट्टी पटवालस्यूं
24. मैताब सिंह नेगी, ग्राम रछूली, पट्टी पैडूलस्यूं
25. जगन्नाथ रावत, ग्राम सलड़ा, पट्टी बनगढ़स्यूं
26. सुल्तान सिंह रावत, ग्राम कदूला
27. चंद्र सिंह रावत, ग्राम मलून, पो. चौंरीखाल
28. उम्मेद सिंह नेगी, ग्राम गौड, पट्टी गगवाड़स्यूं
29. शेर सिंह गुंसाई, ग्राम पिनाकोट, पट्टी कण्डारस्यूं
30. त्रिलोक सिंह रावत, ग्राम पौड़ी, पौड़ी गढ़वाल
31 खीम सिंह नेगी, ग्राम गहड़, पट्टी पैडुलस्यूं
32. बचन सिंह गुंसाई, ग्राम खिरसाल, पट्टी ढाईज्यूली
33. खुशाल सिंह नेगी, ग्राम मरखोला, पट्टी कण्डारस्यूं
34. गोविंद सिंह भंडारी, ग्राम बिसल्ड, पट्टी घुड़दौड़स्यूं
35. जीत सिंह रौंतेला, ग्राम गिंठाली, पट्टी खातस्यूं
36. दलबीर सिंह रावत, ग्राम सीकू, पो. सीकूखाल
37. कुशाल सिंह नेगी, ग्राम उकाल, पट्टी घुड़दौड़स्यूं
38. विजय सिंह गुंसाई, ग्राम बूंगा, पट्टी बाली कण्डारस्यूं, चिपलघाट
39. कीर्ति सिंह शाहू, ग्राम उकाल, पो. गड़ीगांव, पट्टी घुड़दौड़स्यूं
40. त्रिलोक सिंह गुंसाई, ग्राम अमोली, पो. कुलासू, पट्टी जैतोलस्यूं
42. हीरा सिंह रावत, ग्राम जसपुर, पो. मोल्ठी, पट्टी कपोलस्यूं पौड़ी गढ़वाल
43. कुंवर सिंह गुंसाई, ग्राम बिडोली, पट्टी बिडोलस्यूं
44. रतन सिंह गुंसाई, ग्राम फलदा, पट्टी पटवालस्यूं
45. गुलाब सिंह रावत, ग्राम मझखोली, पो. मासौं
46. त्रिलोक सिंह बिष्ट, ग्राम डाबर, पट्टी लंगूर लैंसडौन
47. गजे सिंह नेगी, ग्राम पिपलसारी, पट्टी बिचला बदलपुर (लैंसडौन) पौड़ी गढ़वाल
48. भवान सिंह असवाल, ग्राम मल्ली, पो. गडवागाड
49. मनोहर सिंह रावत, ग्राम ग्वीनबड़ा, द्वारीखाल
50. गोपाल सिंह बिष्ट, ग्राम मैन्दणी, पट्टी बिचला बदलपुर रिखणीखाल
51. मेजर बाला सिंह रौंतेला, ग्राम नाथू, पो.आ. पुंडेर गांव, तहसील लैंसडौन
52. पंचम सिंह रौंतेला, ग्राम मैंदोली
53. कल्याण सिंह, ग्राम जरथ, लैंसडौन
54. कुंदन सिंह, बीरोखाल
55. शेर सिंह नेगी, ग्राम कलोन, पो. चिपलघाट
56. गोपल सिंह नेगी, ग्राम थापला, पो. पिपली, लैंसडौन
57. छवाण सिंह, ग्राम बन्नी, सिलोगी
58. कालिया सिंह बुटोला, ग्राम बाराई, पो. बाडर, लैंसडौन
59. त्रिलोक सिंह रौंतेला, ग्राम नाथू, पंडेर गांव, लैंसडौन

जनपद पौड़ी गढ़वाल के अन्य स्वतंत्रता संग्राम सैनानी

1.	अयोध्या प्रसाद	दुगड्डा	सन् 1945 में छः माह की कैद
2.	आत्माराम	बड़ागांव	सन् 1941 में 1 वर्ष कैद एवं 25 रूपया जुर्माना
3.	अंबिका दत्त ध्यानी	ग्राम भौन, इडियाकोट तल्ला	सन् 1942 में कारावास
4.	अंबिका प्रसाद	भुनारिया, कोटद्वार	सन् 1941 में 1 वर्ष कैद एवं 25 रूपया जुर्माना
5.	अमर दत्त जुयाल	ग्राम कौला, पो. कौलाखाल	सन् 1942 में ढाई वर्ष कैद एवं 20 रूपया जुर्माना
6.	अमर सिंह	ग्राम हड़कोट, पो. संगलाकोटी	सन् 1942 में 15 दिन जेल एवं 15 रूपया जुर्माना
7.	अर्जुन सिंह गुंसाई	ग्राम सौलाद, पट्टी खाटली	सन् 1932 में 6 माह की कैद
8.	आत्माराम	पौड़ी गढ़वाल	सन् 1932 में 3 माह की कैद
9.	आत्माराम	पट्टी पौड़ी गढ़वाल	सन् 1932 में 4 माह की कैद
10.	आदित्यराम ध्यानी	वोरागांव, पो. संगलाकोटी	सन् 1941 में 18 माह की कैद एवं 25 रू. जुर्माना
11.	आनंद सिंह बिष्ट	ग्राम कोलसी, बल्ला उदयपुर	सन् 1930 में 6 माह की कैद
12.	आनंद सिंह बिष्ट	पौड़ी गढ़वाल	सन् 1930 में 6 माह का कारावास
13.	इंद्र सिंह	पौड़ी गढ़वाल	सन् 1932 में 6 माह का करावास एवं 25 रू. जुर्माना
14.	ईश्वर दत्त	पौड़ी गढ़वाल	सन् 1941 में 1 माह का कारावास
15.	ईश्वरी दत्त ध्यानी	मौजा खंदावारी, इडियाकोट	सन् 1921 में मालगुजारी छीनी गयी एवं 50 रू. जुर्माना
16.	ईश्वरी दत्त शर्मा	सिताबपुर, कोटद्वार	सन् 1940 में 1 वर्ष की कैद व 25 रू. जुर्माना
17.	उदय सिंह	पौड़ी गढ़वाल	सन् 1931 में 8 माह की कैद और 30 रू. जुर्माना
18.	उदय सिंह नेगी	ग्राम जखोली, तलाई, पोखड़ा	आंदोलन मे अनेक बार जेल गये।
19.	उदयीराम	देवकीपथ, अजमेर	सन् 1945 में 2 वर्ष 9 माह का कारावास
20.	उमराव सिंह	लैंसडौन	सन् 1944 में 4 वर्ष का कारावास
21.	कन्हैया लाल भट्ट	किमसार, तल्ला उदयपुर	सन् 1932 में 1 वर्ष का करावास
22.	कल्याण सिंह	पौड़ी गढ़वाल	सन् 1942 में 2 माह नजर बंद
23.	क्रांति प्रसाद	पौड़ी	सन् 1932 में 6 माह का कारावास
24.	क्रांति चंद	ग्राम त्राई, डमराड़ा	सन् 1932 में 1 वर्ष का कारावास
25.	किशन दयाल	दुगड्डा	सन् 1942 में 6 माह का नजरबंद
26.	कुंवर सिंह मस्ताना	ग्राम भैरागा, पो. धरासू	सन् 1941 में 1 वर्ष कैद एवं 25 रू. जुर्माना व 1942 में 1 वर्ष तक नजरबंद
27.	केशर सिंह गढ़केशरी	ग्राम गजेरा, पट्टी रिंगवाड़स्यूं	सन् 1921 में 2 वर्ष का कारावास
28.	केशवदत्त जोशी	ग्रा.व पो.सैंधार, बींरोखाल	सन् 1930 में 3 माह का कारावास
29.	कौलेश्वर चंद्र	श्रीनगर गढ़वाल	सन् 1941 में 9 माह कैद एवं 25 रू. जुर्माना
30.	कृपाल सिंह रावत	ग्राम बमोली, चेलसा, डबरालस्यूं	सन् 1942-43 में कुल 11 माह कैद व 50 रू. जुर्माना
31.	खुशालमणि	पल्ला, उदयपुर	सन् 1941 में 9 वर्ष का कारावास
32.	खुशाल मणि कंडवाल	किमसार, तल्ला उदयपुर	सन् 1931 में 1 वर्ष का कारावास
33.	खेमदत्त	पौड़ी गढ़वाल	सन् 1921 में 6 माह कैद की सजा पायी
34.	गंगादत्त	ग्राम सीला, तल्ला उदयपुर	सन् 1930 में 1 वर्ष का कारावास
35.	गंगा सिंह	राजाकोट, कंडवालस्यूं	सन् 1941 में 1 वर्ष कैद एवं 100 रू. जुर्माना
36.	गंगा सिंह त्यागी	ग्राम बाडियूं, पो. डेरियाखाल	सन् 1930 में 1 वर्ष का कारावास
37.	गिरिजा दत्त धूलिया	ग्राम मदनपुर, पट्टी लंगूर	सन् 1941 में 9 माह कैद एवं 50 रू. जुर्माना
38.	गजा धर	पौड़ी गढ़वाल	सन् 1930 में 6 माह की कड़ी कैद की सजा
39.	गर सिंह	पौड़ी गढ़वाल	सन् 1931 में 1 वर्ष की कड़ी कैद एवं 60 रू. जुर्माना
40.	गुणानंद घिल्डियाल	ग्राम बमेला, बिचला बदलपुर	सन् 1941 में 9 माह कैद एवं 25 रू. जुर्माना
41.	गुणानंद जुयाल	ग्राम बंगारस्यूं, पो. जिवई	सन् 1930 में 6 माह कैद एवं 60 रू. जुर्माना
42.	गुणानंद	रोहिना, पट्टी सीला	सन् 1941 में 9 माह कैद एवं 50 रू. जुर्माना
43.	गुलाब सिंह रावत	मौजा स्यूंसी, पट्टी साबली	सन् 1941 में 10 माह कैद एवं 15 रू. जुर्माना
44.	गेंदा लाल आर्य	घोसीखंता, सुखरौ, कोटद्वार	सन् 1930 में 6 माह की कैद

45.	गेंदा लाल	डाडामंडी	सन् 1930 में 6 माह की कैद
46.	गोकुल चंद्र	लैंसडौन	सन् 1943 में 11 माह की कैद
47.	गोपाल नारायण गौड़	महरगांव, पट्टी सीला, दुगड्डा	सन् 1930 में 6 माह एवं 41 में 11 माह की कैद
48.	गोपाल सिंह बिष्ट	जलठा, डबरालस्यूं	सन् 1930 में 6 माह की कैद
49.	गोपाल सिंह	पौड़ी गढ़वाल	सन् 1930 में 1 वर्ष की कैद एवं 50 रू. जुर्माना
50.	गोपाल सिंह सजवाण	ग्राम थान, कस्याली	सन् 1941 में 13 माह की कैद
51.	गोवर्धन बडोला	ग्राम बडोला, पट्टी कोलाकढ़	सन् 1921 में 3 माह की कैद एवं 50 रू. जुर्माना
52.	ग्यासी लाल	दुगड्डा	सन् 1930 में कैद की सजा
53.	धनश्याम खंतवाल	तल्ला, बदलपुर	सन् 1941 में 50 रू. जुर्माना एवं 42 में 2 वर्ष की सजा
54.	चक्रधर धूलिया	ग्राम मदनपुर, डाडामंडी	सन् 1942 में 6 माह की कैद
55.	चंडी प्रसाद	बछणस्यूं	सन् 1930 में 6 माह कैद
56.	चंदन सिंह बिष्ट	ग्राम कुमाथा, उदयपुर	सन् 1940 में 6 माह कैद एवं 42 में 2 वर्ष कैद
57.	चंदन सिंह	लैंसडौन	सन् 1944 में 4 वर्ष की कैद
58.	चंदन सिंह	कल्सी, लैंसडौन	सन् 1944 में 4 वर्ष की कैद
59.	चंद्र सिंह रावत	कोटद्वार	सन् 1941 में 6 माह कैद एवं 42 में ढाई वर्ष नजरबंद
60.	चंद्र सिंह रावत	ग्राम गगरसे, मवालस्यूं	सन् 1931 में 6 माह कैद व 42 में नजरबंद
61.	चमन सिंह	मनियारस्यूं	सन् 1930 में 1 वर्ष कैद एवं 50 रू. जुर्माना
62.	चरन सिंह	बिचला बदलपुर	सन् 1930 में 6 माह कैद
63.	छितर सिंह	लैंसडौन	सन् 1941 में 1 वर्ष की कड़ी कैद
64.	चिन्तामणि	उदयपुर तल्ला	सन् 1930 में 6 माह कैद
65.	चित्र सिंह	बिचला बदलपुर	सन् 1941 में 1 वर्ष की कैद एवं 50 रू. जुर्माना
66.	छवि सिंह	ग्राम बिडोली बल्ला उदयपुर	सन् 1932 में 6 माह की कैद एवं 100 रू. जुर्माना
67.	छवाण सिंह नेगी	ग्राम कोल्सी पो. ठांगर	सन् 1930 में 6 माह एवं 1942 में 4 वर्ष की कैद
68.	जगत सिंह	लैंसडौन	सन् 1930 में 6 माह एवं 1942 में 18 माह की कैद
69.	जगत सिंह रावत	मौजा सिलेधा, पट्टी तलाई	सन् 1930 में एवं 1932 में कारावास का दंड
70.	जगत सिंह नयाल	डबरालस्यूं	सन् 1941 में एक वर्ष एवं 1942 में दो वर्ष की कैद
71.	जसवंत सिंह रावत	ग्राम मैठाणा, पट्टी सावली	सन् 1929 में 9 माह की कैद
72.	जीतराम देवरानी	ग्राम सीम, लंगूरपल्ला, डाडामंडी	सन् 1930 में जेल यात्रा
73.	जीवानंद बडोला	ग्राम बडोल गांव	सन् 1921 में 9 माह व 1941 में एक वर्ष की कैद
74.	झबरसिंह	मौजा हलाड़, सैंधार, बींरोखाल	सन् 1930 एवं 1942 में कारावास
75.	थान सिंह	ग्राम एवं पो. डुंगरी	सन् 1941 में 1 वर्ष की कैद एवं 25 रू. जुर्माना
76.	दयाल सिंह नेगी	ग्राम ढौंरी, पट्टी डबरालस्यूं	सन् 1941 में 6 माह की कैद एवं 1942 में 2 वर्ष की कैद
77.	दरबान सिंह	कोट, सितोनस्यूं	सन् 1941 में 9 माह एवं 1942 में 2 वर्ष की कैद
78.	दर्शन सिंह चौहान	पट्टी भवालस्यूं. पो. इडाखाल	सन् 1941 में 9 माह की कैद व 50 रू. जुर्माना
79.	दाताप्रसाद	कांडा, सितोनस्यूं	सन् 1941 में 9 माह की कैद व 50 रू. जुर्माना
80.	देवी प्रसाद	कांडा, सितोनस्यूं	सन् 1941 में 9 माह की कैद व 50 रू. जुर्माना
81.	धनीराम जोशी	ग्राम मोटाढ़ाक, कोटद्वार	सन् 1930 में 6 माह की कैद
82.	नथीराम मंमगाई	ग्राम रिठाई, पैडुलस्यूं	सन् 1942 में 1 वर्ष तक नजरबंद रहे।
83.	नंदराम सिंह आर्य	हल्का सुखरौ, कोटद्वार	सन् 1930 में 6 माह की कैद
84.	नारायण सिंह रावत	ग्राम व पो. पडसोली गुजडू	सन् 1941 में 6 माह व सन् 1942 में 6 माह की कैद
85.	बचन सिंह	ग्राम कोटसाड़ा, सितोनस्यूं	सन् 1941 में 9 माह व सन् 1942 में 18 माह की कैद
86.	बाली सिंह नेगी	ग्राम कोल्सी, उदयपुर बल्ला	सन् 1943 में 2 माह की कैद व 45 रू. जुर्माना
87.	विश्राम	ग्राम गुजडू	सन् 1941 में 6 माह की कैद व 75 रू. जुर्माना
88.	बेलम सिंह आर्य	ढ़ौरी, डबरालस्यूं	सन् 1930 में 6 माह की कैद
89.	भोलादत्त चंदोला	शांति कुंज, पैडुलस्यूं	सन् 1930 में 2 वर्ष की सजा
90.	मंगतराम खंतवाल	मौजा बंदखंडी, बदलपुर	सन् 1930 में 2 वर्ष की सजा

91.	मदन सिंह थपलियाल	ग्राम कठूड़, कठुलस्यूं	सन् 1942 में 1 वर्ष का कारावास
92.	मस्तराम ध्यानी	ग्राम एवं पो. भौन	सन् 1942 में 18 माह की कैद व 15 रू. जुर्माना
93.	महानंद डबराल	उदयरामपुर, कोटद्वार	सन् 1941 में 1 वर्ष की कैद व 25 रू. जुर्माना
94.	योगेश्वर प्रसाद बहुखंडी	ग्राम कसाणी, साबली, लैंसडौन	सन् 1921 में 3 माह की कैद 50 रू. जुर्माना, ढाई वर्ष की सजा, 500 रू. जुर्माना, सन् 1940 में 8 माह कैद एवं सन् 1942 में 1 वर्ष तक नजरबंद रहे।
95.	रामप्रसाद नौटियाल	मोजा, कांडा, पट्टी खाटली, बीरोंखाल	सन् 1930 में 2 वर्ष 6 माह की कैद, 500 रू. जुर्माना, सन् 1932 व 1941 में एक-एक वर्ष कैद व सन् 1942 में दो वर्ष तक नजरबंद रहे।
96.	रामानन्द जुयाल	ग्राम जिवई, बंगारस्यूं	सन् 1930 में 6 माह कैद व 50 रू0 जुर्माना
97.	रेवाधर जोशी	झण्डाचौक कोटद्वार	सन् 1930 में 3 माह 41 में 1 वर्ष कैद व 1942 में 1 वर्ष नजरबन्द
98.	लीलानन्द डबराल	कुन्तली डबरालस्यूं	सन् 1940 में 6 माह एवं 42 में 22 माह कैद
99.	वासवानन्द जोशी	ग्राम असौ कोट	सन् 1941 में 1 वर्ष कैद एवं 50 रू0 जुर्माना
100.	विद्यादत्त बहुखण्डी	ग्राम बसुली पट्टी अजमेर	सन् 1942 में 2 वर्ष का कारावास
101.	विष्णु सिंह	ग्राम असौं (कोटा)	सन् 1941 में 1 माह एवं 42 में 3 वर्ष तक नजरबन्द
102.	शम्भू प्रसाद जोशी	ग्राम व पो0 सैंधार	सन् 1942 में 3 वर्ष तक नजरबन्द
103.	शत्रुघन प्रसाद बड़ोला	ग्राम राजसेरी उदयपुर बल्ला	सन् 1932 में 6 माह एवं 42 में 3 वर्ष तक नजरबन्द
104.	शंति प्रसाद प्रेम	पट्टी सावली पो. फलसाड़ी	सन् 1942 में 1 वर्ष तक नजरबन्द
105.	श्रीराम ध्यानी	ग्राम डोभा, कौड़िया लैंसडौन	सन् 1930 में 6 माह का कारावास
106.	सदानन्द भारद्वाज	विदुर गांव	सन् 1941 में 1 वर्ष तथा 25 रू0 जुर्माना
107.	सदानन्द सुन्द्रियाल	ग्राम वसोली गुजडू लैंसडौन	सन् 1930 में 6 माह का कारावास
108.	सरदार सिंह नेगी	ग्राम रिग्वाड़ी डाडामण्डी	सन् 1941 में 1 वर्ष का कारावास
109.	सुदामाराम सुयाल	सिरांई, लंगूरवाला डाडामंडी	सन् 1941 एवं 42 में 2 वर्ष तक नजरबन्द
110.	सुन्दरलाल जैन	श्रीनगर कठूलस्यूं	सन् 1930 में 6 माह का कारावास
111.	सुरेशानन्द बलूणी	ग्राम काण्डाखनी, डबरालस्यूं	सन् 1942 में 1 वर्ष का कारावास
112.	सोहन सिंह रावत	भलगांव, डाडामंडी	सन् 1941 में 6 माह एवं 42 में 2 वर्ष तक नजरबन्द
113.	स्वतन्त्र कुमार	श्रीनगर कठूलस्यूं	सन् 1932 में 1 वर्ष का कारावास
114.	हरिशंकर धस्माना	पट्टी मौदाड़स्यूं अमोठा	सन् 1930 में 6 माह का कारावास
115.	हरिदत्त बौड़ाई	ग्राम बैंगार पट्टी सावली	सन् 1921 में 3 माह की सजा एवं 50 रू0 जुर्माना
116.	हरिप्रसाद मिश्र	ग्राम बालासौड़, सुखरौ	सन् 1930 में 6 माह का कारावास
117.	हरि शर्मा	मौजा केदारगली, खाटली	सन् 1930 में ढाई वर्ष का कारावास एवं 500 रू0 जुर्माना
118.	वासुदेव त्यागी	दुगड्डा	सन् 1930 से 42 तक 3 बार जेल गये
119.	रामशरण बड़ोला	पदमपुर सुखरौं कोटद्वार	सन् 1942 में 1 वर्ष का कारावास
120.	खुशाल सिंह	पौड़ी गढ़वाल	सन् 1930 में छह माह की सजा
121.	रूक्मेश्वर दत्त मैठाणी	श्रीनगर गढ़वाल	सन् 1941 मे 1 वर्ष व 42 में सवा वर्ष कैद

जनपद गढ़वाल में समाचार पत्रों का गौरवमयी इतिहास

जनपद पौडी गढवाल जन चेतना का प्रमुख केंद्र रहा है। स्वाधीनता, जन और उत्तराखण्ड आंदोलनों का केंद्र रहने की बिना पर कहा जा सकता है कि जनपद पौडी गढवाल विचारकों, चिंतकों और आंदोलनकारियों की भूमि रही है। माना जाता है कि किसी भी आंदोलन की जमीन को जागरण से ही तैयार किया जा सकता है और जनजागरण का सबसे सशक्त माधयम तब और अब समाचार पत्र माना जाता है। जनपद पौडी गढवाल में राज्य गठन तक अखबारों का प्रकाशन जिस तादाद में हुआ, उतना उत्तराखण्ड के अन्य जिलों से नही हुआ। यहां तक कि गढवाल मण्डल में पहला हिंदी और भारतीय का अखबार भी पौडी जिले से ही प्रकासित हुआ था।

जनपद पौड़ी गढ़वाल के समाचार पत्रों ने आजादी की जंग या जन आंदोलन हों या फिर उत्तराखण्ड राज्य प्राप्ति आंदोलन में अहम भूमिका निभाई है। जनपद पौड़ी गढवाल के समाचार पत्रों के ऐतिहासिक इतिहास को हम यहां प्रस्तुत करते हुए अपने आप को गौरन्वान्वित महसूस कर रहे हैं। इस दस्तावेज को हमने बिना किसी द्वेज़भाव के साथ उत्तराखण्ड की पत्रकारिता पर शोध करने वाले व्यक्ति श्री शक्ति प्रसाद सकलानी की पुस्तक उत्तराखण्ड में पत्रकारिता का इतिहास व डॉ. उमाशंकर थपलियाल के शोध ग्रंथ 'गढवाल में पत्रकारिता और हिन्दी साहित्य' के तथ्यों को वर्तमान संसोधनों के साथ प्रस्तुत कर रहे हैं- स्मारिका सम्पादक

गढ़वाल समाचार (1902): गढ़वाल में पत्रकारिता के जनक श्री गिरिजा दत्त नैथानी का नाम उत्तराखण्ड में पत्रकारिता के इतिहास में सदैव स्वर्णाक्षरों में अंकित रहेगा। पत्रकारिता की जब गढ़वाल में हवा तक नहीं थी, तब नैथानी जी ने सन् 1902 लैन्सडौन से मासिक 'गढ़वाल समाचार' का प्रकाशन प्रारम्भ किया। यह फुलस्केप साइज में 16 पृष्ठों का होता था और मुरादाबाद से मुद्रित होता था। सुविधा की दृष्टि से बाद में आप कोटद्वार आ गए और अक्टूबर 1902 में 'गढ़वाल समाचार' का छठा अंक वहीं से प्रकाशित हुआ। आर्थिक अभाव और कुछ दूसरे कारणों से 'गढ़वाल समाचार' दो वर्ष से पहले ही बंद हो गया।

पत्रकारिता से नैथानी जी का बड़ा लगाव था। अत: सन् 1912 में उन्होने दुगड्डा में एक प्रेस लगाई। फरवरी 1913 में उसी प्रेस से गढ़वाल समाचार का पुन: प्रकाशन किया। दिसंबर 1914 तक पत्र का प्रकाशन नियमित होता रहा। 'गढ़वाल समाचार' अल्पावधि तक दो पाली में छपा। कुछ कर गुजरने की तमन्ना के बावजूद यह पत्र समाज का आईना नहीं बन सका। फिर भी अपने निर्भीक, निष्पक्ष लेखन से नैथानी जी ने उस जमाने में हाकिमों की ज्यादतियों और अत्याचारों का 'गढ़वाल समाचार' के माध्यम से विरोध किया। पराधीनता के उस दौर में ऐसा साहस दिखाना हंसी खेल नहीं था। उस समय के सार्वजनिक महत्व के सब प्रश्नों पर गढ़वाल समाचार ने प्रकाश डाला और निर्भयतापूर्वक जनता की मांगों का जोरदार समर्थन किया। नैथानी जी के निधन पर 'गढ़वाली' साप्ताहिक ने लिखा था- 'पण्डित गिरिजा दत्त ने देशप्रेम की पवित्र ज्वाला को जो अब तक हाकिमों और राजनीतिक अज्ञानता की राख से बुरी तरह दबी हुई थी, अपनी निर्भीक और तीव्र ध्वनि से प्रज्जवलित किया।

विशाल कीर्ति (1913): पौड़ी से प्रकाशित होने वाले पत्रों में विशाल कीर्ति का नाम आता है। विशाल कीर्ति अपर बाजार स्थित ब्रह्मानन्द थपलियाल के छापे खाने बदरी-केदार प्रेस से फरवरी 1913 में प्रकाशित होना शुरू हुआ। इसके सम्पादक थे सदानन्द कुकरेती। यह पत्र मासिक छपता था और इसका आकार पुस्तक के जैसा था। इसमें गढ़वाली साहित्य व राजनीतिक व्यंग्य प्रमुखता से छपते थे। बाद में वित्तीय संकट के कारण पत्र बंद हो गया था। फरवरी 1913 से दिसम्बर 1915 तक इसके अंक निकले।

पुरूषार्थ (1917-21): पण्डित गिरिजा दत्त नैथानी में अखबार निकालने की अन्तिम सांस तक उत्कृष्ट इच्छा थी। गढ़वाल समाचार के बन्द हो जाने, दो बार गढ़वाली का सम्पादन करने और छोड़ देने पर भी इसकी प्यास नहीं बुझी। दुगड्डा में प्रिन्टिग प्रेस खोलने और बन्द कर देने पर भी इन्हें संतोष नहीं मिला। आर्थिक तंगी में जीये, फिर भी अखबार निकालने के प्रति इनकी ललक कम नहीं हुई। कहते हैं- लागी लगन छूटे नहीं, जीभ-चोंच जरी जाये। इसी ललक की परिणति थी- पुरूषार्थ का प्रकाशन। अक्टूबर 1917 में इन्होनें मासिक पुरूषार्थ का प्रकाशन आरम्भ किया। यह अखबार छपता था बिजनौर से और प्रकाशित होता था कभी दुगड्डा से और कभी इनके पैतृक गांव नैथाणा

से। इसके कुछ अंक बाराबंकी से भी छपे। अंततः अखबार बंद हो गया। दुबारा सन् 1921 में इहोंने अपने गांव नैथाणा से पुरूषार्थ का प्रकाशन शुरू किया, लेकिन इस बार भी वह नियमित और स्थाई नहीं हो सका और कुछ ही समय बाद बंद हो गया। तीसरी बार अपनी मृत्यु से कुछ ही समय पूर्व पुरूषार्थ का एक अंक निकाला, लेकिन बीच में ही 21 नवम्बर 1927 को पुरूषार्थ के जन्मदाता चल बसे।

क्षत्रिय वीर (1922): पौड़ी नगर से निकलने वाला दूसरा पत्र था- क्षत्रिय वीर। 15 जनवरी 1922 से निकलना प्रारम्भ हुआ यह अखबार। इसका उद्देश्य पूर्व में निकलने वाले सरोला सभा (1904) पत्र की तरह अपनी जाति का सामाजिक व शैक्षिणक विवरण प्रस्तुत करना था। प्रारम्भ में इसके सम्पादक थे। प्रताप सिंह नेगी। बाद में यह पत्र एडवोकेट कोतवाल सिंह नेगी एवं शंकर सिंह नेगी के संपादन में सन् 1938 तक प्रकाशित हुआ। आगरा से छपता रहा यह अखबार। इस पत्र के संस्थापक सूला ग्राम, असवालस्यूं पट्टी, गढ़वाल के रायबहादुर जोध सिंह नेगी थे। इनके बारे में कहा जाता है कि ये कट्टर राजपूती विचारधारा के थे। इसी भावना के वशीभूत होकर इन्होनें 'क्षत्रिय वीर' पत्र की आधारशिला रखी। 'क्षत्रिय महासभा' और गढ़वाल क्षत्रिय छात्रवृति ट्रस्ट की स्थापना की। राजपूती युवाओं को अपने प्रयत्नों और सम्पर्कों से रोजगार उपलब्ध कराया। 'क्षत्रिय वीर' समाचार पत्र क्षत्रियों के हितों की बात अधिक करता था। कई लोंगों ने रायबहादुर जोध सिंह नेगी पर क्षत्रिय समर्थक और ब्राह्मण विरोधी होने का आरोप लगाया।

तरूण कुमाऊँ (1922-23): बैरिस्टर मुकुन्दी लाल क्या नहीं थे, यह भी अपने आप में एक विचारणीय प्रश्न है। उनके बहुआयामी व्यक्तित्व में पत्रकारिता का भी अपना योगदान है। राष्ट्रीय विचारधाराओं से सराबोर बैरिस्टर लाल ने सन् 1922 में लैन्सडौन से तरूण कुमाऊँ नाम के एक हिन्दी साप्ताहिक का प्रकाशन आरम्भ किया। इस मासिक का नाम मैंजनी के यंग इटली की तर्ज पर था। पत्र एक साल से कुछ ज्यादा चला। 1923 में जब वे काउंसिल के लिए चुने गए तो इसका प्रकाशन बन्द हो गया। तरूण कुमाऊँ के उपलब्ध अंकों को देखकर लगता है कि बैरिस्टर राष्ट्रवादी और प्रगतिशील विचारों के व्यक्ति थे।

गढ़ देश (1929-34): श्री कृपाराम मिश्र मनहर अपने समय के निस्वार्थ समाजसेवी, दानवीर, पत्रकार, काव्य रचयिता और स्वाधीनता संग्राम सेनानी हुए है। उनकी प्रबल इच्छा रही कि गढ़वाल क्षेत्र से एक साप्ताहिक समाचार पत्र प्रकाशित हो। गढ़वाली के सम्पादक से इस विषय पर सहमति न बनने पर उन्होंनें स्वयं ही एक साप्ताहिक अखबार निकालने का निश्चय किया और अप्रैल, 1929 में गढ़ देश का पहला अंक प्रकाशित कर पत्रकारिता जीवन में पदार्पण किया। गढ़ देश कभी मुरादाबाद से तो कभी बिजनौर से और कभी मेरठ से छपता था, किन्तु प्रकाशित कोटद्वार (गढ़वाल) से होता था। मनहर जी पत्र के सम्पादक थे। वर्षान्त में महेशानन्द थपलियाल जी ने इन्हें सम्पादकीय सहयोग दिया। 1930 के प्रारम्भ में नई व्यवस्था की गई। देवबन्द जिला सहारनपुर से श्री कन्हैया लाल मिश्र 'प्रभाकर' ने इस पत्र का सम्पादन आरम्भ किया। यह पत्र शान्ति प्रिन्टिग प्रेस सहारनपुर से ही छपता भी था। प्रभाकर जी ने पत्र का स्तर काफी ऊंचा कर दिया था। इसी बीच सत्याग्रह आन्दोलन शुरू हो गया। सम्पादक और प्रकाशक दोनों को जेल यात्रा करनी पड़ी। 13 जून 1930 के अंक के साथ ही गढ़ देश का प्रकाशन बन्द हो गया। 1934 में इसे पुर्नजीवित किया मनहर जी ने। देहरादून में मुद्रण की व्यवस्था की गई यह प्रयास भी अधिक दिन नहीं चला। कुछ लेखों के कारण 'गढ़ देश' के सम्पादक और मुद्रक से दो-दो हजार रूपयों की जमानतें मांगी गई। जमानत की व्यवस्था नहीं हो सकने के कारण गढ़देश का प्रकाशन पुनः बन्द करना पड़ा।

स्वर्ग भूमि (1934): श्री देव की नन्दन ध्यानी जी, जखल गांव, सल्ट पट्टी अल्मोड़ा (गुजडू पट्टी, गढ़वाल से मात्र 3 किमी.दूरी पर) के निवासी थे। उत्कृष्ट राष्ट्र प्रेमी और पत्रकार थे ध्यानी जी। सन् 1930 में इन्होंनें मुरादाबाद से साप्ताहिक 'विजय' का प्रकाशन प्रारम्भ किया। सत्याग्रह में जेल चले जाने पर 8-10 अंकों के प्रकाशन के बाद विजय का प्रकाशन बन्द हो गया। जेल से छूटने के बाद आप हल्द्वानी (जिला नैनीताल) पहुंचे और वहां से 15 जनवरी, 1934 को पाक्षिक 'स्वर्ग भूमि' अखबार का प्रकाशन प्रारम्भ किया। हल्द्वानी से स्वर्ग भूमि के 3-4 ही अंक निकले थे कि इन्हें अनुसूया प्रसाद बहुगुणा के आमंत्रण पर पौड़ी जाना पड़ा। इस कारण अखबार आगे नहीं चल सका। 1936 इनका देहान्त हो गया।

हितैषी (पाक्षिक) 1936: श्री पीताम्बर दत्त पसबोला, गांव नैणी, पट्टी लंगूर वल्ला, पौड़ी गढ़वाल वालों ने पिछली सदी के तीसरे दशक में लैन्सडौन से 'हितैषी' नामक एक पाक्षिक समाचार पत्र का सम्पादन और प्रकाशन किया था, लेकिन यह पत्र भी अल्पजीवी रहा। औपनिवेशिक सत्ता समर्थक रहा था यह पत्र, तभी तो पसबोला जी को रायबहादुरी मिली थी।

उत्तर भारत (1936-1937): सन् 1936 में पण्डित महेशानन्द थपलियाल ग्राम ढ़ोल, पट्टी मनियारस्यूं, गढ़वाल वालों ने पौड़ी से छापा यह अखबार। उन दिनों थपलियाल जी घंडियाल स्कूल का संचालन कर रहे थे। गढ़ केसरी अनुसूया प्रसाद बहुगुणा के निमंत्रण पर वे पौड़ी आये और वहां बहुगुणा जी की स्वर्ग भूमि प्रेस का संचालन करने लगे। यह प्रेस उन दिनों कांडई गांव में थी। यहीं से आपने उत्तर भारत का प्रकाशन और सम्पादन आरम्भ किया। प्रारम्भ में अखबार पुस्तक साइज में निकला, किंतु बाद में बदल गया। सन 1937 में अखबार बन्द हो गया। उत्थान (साप्ता)-1937: अपने समय के जाने-माने समाज सेवी और वकील कोटद्वार निवासी श्री ज्योति प्रसाद माहेश्वरी ने इस साप्ताहिक का प्रकाशन किया था। श्री बलदेव सिंह आर्य और श्री प्रताप सिंह नेगी का पत्र में सम्पादकीय सहयोग रहा।

उत्थान ने क्षेत्रीय आंदोलनों को दिशा दी और निष्पक्ष, सतही और बेबाक रिपोर्टिंग की। समाचारों का तर्कपूर्ण ढ़ंग से विश्लेषण कर जन आंकाक्षाओं, हितों, हकों, उत्तरदायित्वों आदि को प्रभावशाली ढ़ंग से प्रस्तुत किया। पत्र कांग्रेस के उद्देश्यों का पुष्ट पोषक रहा और गढ़वाल में कांग्रेसी पत्र के अभाव की पूर्ति करता रहा।

कर्म भूमि (साप्ता)-1939: कर्मभूमि साप्ताहिक का उदय गढ़वाल में उस समय हुआ जब सारा देश गुलामी के विरूद्व एकजुट होकर आजादी के लिए उबाल खा रहा था। बस, जरूरत थी तो इस बात की कि स्वाधीनता की अलख को कोई ऊर्जा प्रदान करें और उस ऊर्जा की ध धक को सुदूरवर्ती क्षेत्रों तक पहुंचाएं। यह काम कर्मभूमि ने कर दिखाया। लैन्सडौन (गढ़वाल)में फौजी छावनी के बीच जहां खद्दर की सफेद टोपी पहनना एक प्रकार का जुर्म था, कर्म भूमि का प्रकाशन एक अभूतपूर्व घटना थी। सन् 1939 में सर्वश्री ललिता प्रसाद नैथानी, भक्त दर्शन सिंह रावत और भैरव दत्त धूलिया जी ने इसके प्रकाशन की योजना बनाई और बसन्त पंचमी के दिन श्री गोविन्द बल्लभ पन्त जी ने कर्मभूमि के प्रवेशांक का लोकार्पण किया। हिमालयन ट्रेडिंग एण्ड पब्लिशिंग कम्पनी ने इसका खर्चा वहन किया। कर्म भूमि साप्ताहिक गढ़वाल की पत्रकारिता के इतिहास में एक नया अध्याय उदित हुआ। इस अखबार की तरूण शक्ति और बुद्विजीवी वर्ग को राष्ट्रीय आंदोलन में भागीदारी करने की प्रेरणा दी।

उस समय गढ़वाल क्षेत्र से कोई साप्ताहिक पत्र प्रकाशित नहीं होता था। रेडियों सम्भ्रांत लोगों के पास होते थे। इनके अभाव में स्वतंत्रता संग्राम की गतिविधियों से दूर दराज के ग्रामीण अंचल अनभिज्ञ रहते थे। 'कर्म भूमि' ने इस कमी को पूरा किया। अखबार के सम्पादकीय जनता के दिलो दिमागों को झकझोर कर रख देते थे। कर्म भूमि की प्रतियों का जनता जनार्दन उत्सुकता से इंतजार करती थी। ग्रामीण क्षेत्रों में एक शिक्षित सभी ग्रामीणों को पढ़कर सुनाता था 'कर्म भूमि' की खबरों को। कर्मभूमि ने स्वाधीनता संग्रामी तैयार किए, नौजवानों को इस आंदोलन में कूदने की प्रेरणा दी।

wयही नहीं सामाजिक जागरण में भी कर्म भूमि की उल्लेखनीय भूमिका रही। डोला-पालकी आन्दोलन, अस्पृश्यता निवारण, शराब बन्दी और भ्रष्टाचार के विरूद्ध जेहाद छेड़ा। टिहरी रियासत में सामन्तशाही शासन के विरूद्ध वहां की जनता में नव जागरण लाया। जनता को उसके हक हकूकों के प्रति जागरूक किया। टिहरी रियासत और ब्रिटिश गढ़वाल में लागू बरा, बेगार, बर्दायश जैसे अमानवीय कानूनों के विरूद्ध जनता को आन्दोलन करने में कर्म भूमि की अहम भूमिका रही। 'कर्म भूमि' प्रखर राष्ट्रवादी और निर्भीक पत्र था। इसका प्रकाशन अब बन्द है।

सन्देश (1940-41): साप्ताहिक 'गढ़' देश के बन्द हो जाने के बाद भी कृपा राम मिश्र मनहर जी के मन में समाचार-पत्र प्रकाशित करने की उत्कण्ठा बनी रही। अपने छोटे भाई हरिराम मिश्र चंचल के सहयोग से सन् 1940 में मनहर जी ने कोटद्वार से सन्देश साप्ताहिक का प्रकाशन प्रारम्भ किया। चंचल जी पत्र के सहकार्यकारी सम्पादक और प्रकाशक थे। सन् 1941 में मनहर जी के व्यक्तिगत सत्याग्रह में जेल चले जाने के कारण सन्देश का प्रकाशन बन्द कर देना पड़ा।

नव प्रभाव (1948-1950) : पण्डित महेशानन्द थपलियाल जी पर अखबार निकालने की धुन किस कदर सवार थी- नव प्रभाव अखबार इसी का एक उदाहरण है। सन् 1948-56 के मध्य आप लैन्सडौन (गढ़वाल) में जिला राशनिंग कार्यालय में नियुक्त रहे। सरकारी नौकर होने के कारण आप अखबार का प्रकाशन, सम्पादन नहीं कर सकते थे और न ही अपना नाम छाप सकते थे। अपनी पत्रकारिता की ललक को पूरा करने के लिए इन्होनें इस दौरान लैन्सडौन से नव प्रभाव नाम से एक हिन्दी साप्ताहिक पत्र निकालना आरम्भ किया। सम्पादक की जगह ललिता प्रसाद ललाम का और प्रकाशक की जगह नेत्र सिंह बिष्ट का नाम प्रकाशित होता था। वित्तीय कठिनाईयों के चलते लगभग एक वर्ष चलने के बाद अखबार बन्द हो गया।

सत्यपथ (साप्ता)-1956: सत्यपथ साप्ताहिक की अपनी अलग शान, मान और पहचान थी। स्वाधीनता प्राप्ति के पहले दशक तक देहरादून को छोड़ सारे गढ़वाल मण्डल में अखबारों का टोटा था। स्व.श्री ललिता प्रसाद नैथाणी ने 15 अगस्त सन् 1956 को कोटद्वार से सत्यपथ का प्रकाशन प्रारम्भ कर इस कमी को पूरा किया। सत्यपथ ने गढ़वाल के विकास की सतही जानकारी प्रस्तुत की। राजनीतिक विचारों में चौतरफा गिरावट के प्रति समाज को सचेत किया। नवोदित लेखकों को उदारतापूर्वक स्थान दिया। गढ़वाल की सांस्कृतिक और ऐतिहासिक सम्बधी गवेषणात्मक जानकारी दी। विकास के आंकडों और राजनीतिक समीकरणों की खरी और तथ्यपरक विवेचना की। कर्म भूमि के बाद यह दूसरा अखबार था, जिसे गढ़वाल की जनता आदर,स्नेह और सम्मान देती थी। नैथानी जी के अवसान के बाद उनके सुयोग्य पुत्र सुधीर नैथानी प्रबन्धन का दायित्व निभा रहे थे। प्रधान सम्पादन का गुरूत्तर दायित्व पुराने कामरेड श्री पीताम्बर देवराणी के जिम्मे था। अब इस समाचार पत्र का प्रकाशन पिछले एक दशक से बन्द है।

आवाज (साप्ता.)-1957: कम्युनिस्ट कार्यकर्ताओं- शम्भु प्रसाद ढौंडियाल, बी.डी. भट्ट, सोहन कृष्ण डबराल और पीताम्बर देवराणी ने मिलकर कोटद्वार से 'आवाज' नाम से एक साप्ताहिक निकाला था। यह पूर्णत: जनवादी पत्र था और कई विपरीत परिस्थितियों के बावजूद लगभग 2 वर्ष तक ही प्रकाशित हुआ।

मैती (60 का दशक): यह मासिक पत्रिका थी जो गढ़वाली और कुमाऊॅनी में प्रकाशित होती थी। पत्रिका के सम्पादक थे श्री सत्येश्वर प्रसाद आजाद। पत्रिका का कार्यालय रूद्रप्रयाग में था और इसका मुद्रण आराधना प्रिन्टिग प्रेस, पौड़ी से होता था। यह मूलत: साहित्यिक पत्रिका थी, किन्तु स्थानीय जन जीवन से जुड़े अहम सवालों पर भी खूब लिखा मैती ने। अप्रवासियों में भी पत्रिका पर्याप्त लोकप्रिय रही थी। पत्रिका ने अनेक लेखकों और पत्रकारों को उनकी लेखनी के लिए मंच प्रदान किया।

पत्रिका के लिए बराबर लिखने वाले शिखर गढ़वाली लेखकों में हैं- सर्व श्री भगवती चरण 'निर्मोही' भजन सिंह 'सिंह' डॉ. गोविन्द चातक डॉ. शिवानन्द नौटियाल, डॉ. हरिदत्त भट्ट, 'शैलेश' और मोहन लाल बाबुलकर। आर्थिक कठिनाइयों के चलते मैती ज्यादा दिनों तक नही चल सकी। 'मैती' का अवसान विशेषकर गढ़वाल की पत्रकारिता और लेखकों के लिए दुखद अनुभूति रही। पर्वतीय जन (60 का दशक): पौड़ी बुद्धिजीवियों की नगरी मानी जाती है। पत्रकारिता में यहां अपेक्षाकृत कीर्तिमान बने हैं। समय- समय पर एक से बढ़कर अखबार यहां से निकले हैं। उसी की कड़ी 'पर्वतीय जन' पत्र के सम्पादक मण्डल में थे- श्री हरिराम मिश्र चंचल, कुंवर सिंह रावत और एडवोकेट चन्द्र मोहन भट्ट। अखबार की स्वीकार्यता न्यूनाधिक रही थी।

अन्तर्ज्वाला (साप्ता.)- 1964: स्वाधीनता प्राप्ति के बाद गढ़वाल से प्रकाशित साप्ताहिक पत्रों में लम्बा सफर तय करने वाला रहा है यह पत्र। सम्पादक शरद कुमार जैन दुगड्डा गढ़वाल निश्चय ही बधाई के पात्र हैं। अखबार का सम्पादकीय कभी- कभी अवलोकनीय होता है, समाचारों में नजीबाबाद, जिला बिजनौर का प्रतिनिधित्व प्राथमिकता से होता है। जबकि गढ़वाल के अखबारों में ऐसा कम देखने को मिलता है।

मस्ताना मजदूर (साप्ता.)- 1968: मजदूर नेता रामचन्द्र उनियाल ने कोटद्वार और थराली जिला चमोली से इस साप्ताहिक का प्रकाशन किया था। इस साप्ताहिक में मुख्य रूप से गढ़वाल क्षेत्र के श्रमिक आन्दोलनों के समाचार प्रकाशित होते थे। कालान्तर में अखबार बन्द हो गया। 7 नवम्बर में 1972 को उनियाल जी ने अखबार का स्वामित्व सुरेश कुकरेती को दे दिया। उसके साथ 'मस्ताना मजदूर' का सम्पादन वाराणासी निवासी, कम्युनिस्ट कार्यकर्ता श्रीनिवास त्रिपाठी (अब स्वर्गीय) करते रहे। इस अखबार ने समकालीन आन्दोलनों को प्रकाश में लाने का भरपूर दायित्व निभाया।

ठहरो (साप्ता.)- 1969: स्व. श्री भूपेन्द्र सिंह नेगी ने कोटद्वार में इस साप्ताहिक अखबार की स्थापना की थी। श्री नेगी गढ़वाल के जाने माने स्व. सं. से.श्री गोकुल सिंह नेगी के सुपुत्र थे। नेगी जी के स्वर्गवासी होने के बाद ठहरो ठहर जाता कि इनके सुपुत्र सुधीन्द्र नेगी ने इस अखबार का प्रकाशन शुरू किया, किन्तु कुछ समय बाद श्री सुधीन्द्र नेगी ने ठहरो बन्द कर दुन्दुभि साप्ताहिक का प्रकाशन शुरू कर दिया जो आज भी प्रकाशित हो रहा है।

ऐतिहासिक प्रसंग, सम सामयिक विषयों पर विवेचनात्मक लेख, कथा, साहित्य, राजनीति सम्बन्धी परिचर्चा आदि कुछ विषय हैं। जिन पर पत्रिका मंथन के बाद वैचारिक आलेख रिपोर्ताज, साक्षात्कार प्रस्तुत करती है। सम्पादकीय अक्सर देश के मौजूदा राजनीतिक परिदृश्य से परिचित कराते हैं। पत्रिका के यदा-कदा विशेषांक उत्कृष्ट पठनीय सामग्रीयुक्त होते हैं।

धधकता पहाड़ (1973) जनपद पौड़ी गढ़वाल के कोटद्वार से प्रकाशित यह समाचार पत्र अपने भ्रष्टाचार के प्रति आक्रामक होने के साथ-साथ निष्पक्ष, निर्भीक और राष्ट्रवादी पत्रकारिता के लिये अपने अल्प समय में ही लोकप्रिय हो गया था। ग्राम सकनोली पट्टी असवालस्यूं निवासी 21 वर्षीय युवा नरेन्द्र उनियाल को अखबार में राष्ट्रवादी पत्रकारिता के लिये आपातकाल मे 26 जून 1975 को मीसा और डीआईआर के तहत जेल में डाल दिया गया। जिसके कारण 1975 से 1977 तक इस अखबार का प्रकाशन बन्द रहा। आपातकाल के बाद यह समाचार पत्र 1979 तक प्रकाशित होता रहा और उसके बाद प्रकाशक नरेन्द्र उनियाल ने जयन्त साप्ताहिक का प्रकाशन शुरू किया।

उतिष्ठ (साप्ता.)-1973: 'उतिष्ठ' पौड़ी और दिल्ली से प्रकाशित होता था। पत्र के सम्पादक श्री कुंवर सिंह रावत थे। अल्पजीवी 'उतिष्ठ' बिजनौर के सम्राट प्रेस से छपता था। अखबार अपनी कोई पहचान नहीं बना सका और गुमनाम हो चला।

पौड़ी टाइम्स (70 का दशक): गढ़वाल के जुझारू पत्रकार स्व. उमेश डोभाल की शहादत का गवाह है पौड़ी टाइम्स। डोभाल ने अपनी पत्रकारिता का श्रीगणेश इसी अखबार के माध्यम से किया था। इस पत्र को चर्चित करने और चलाने वाली टीम में थे- उमेश डोभाल, राजेन्द्र सिंह रावत और पृथ्वी पाल सिंह चौहान। पत्र के सम्पादक थे- सखा सत्यम्। सम्पादक के निधन के बाद पौड़ी टाइम्स बन्द होने की स्थिति में आ गया। इस बीच श्रीमती सुमनलता रावत ने अखबार का स्वामित्व/टाइटिल ले लिया और प्रकाशन का जोखिम भरा काम आरम्भ किया। श्रीमती सुमनलता रावत के निधन के बाद उनके पति डॉ.आर. सी.एस. रावत ने यह अखबार चलाया। अखबार ने आरम्भ में शराब माफियाओं द्वारा टिंचरी की अवैध बिक्री और प्रशासनिक भ्रष्टाचार पर खूब कलम चलाई। कटाक्षों के लिए यह काफी चर्चित रहा है।

अलकनन्दा (मासिक) - 1973: पुरानी जमात के पत्रकार, लेखक, कथाकार लैन्सडौन निवासी श्री योगेश पांथरी और इन्ही के साढू कथाकार स्व. स्वरूप ढौंडियाल ने मिलकर लैन्सडौन से अलकनन्दा (मासिक) का प्रकाशन शुरू किया था। कुछ ही दिनों के बाद पत्रिका दिल्ली से प्रकाशित होने लगी। सन् 1987-88 में दोनों साढुओं में विचार भिन्नता आ गई और पत्रिका का प्रकाशन प्रभावित हो गया। पांथरी जी ने जैसे-तैसे सन् 1996 तक पत्रिका जारी रखी। उधर स्वरूप जी ने विन्सर प्रकाशन के नाम पर दिल्ली से अलकनन्दा का प्रकाशन जारी रखा। पिछले आठ वर्षों से पत्रिका का प्रकाशन बन्द है। अलकनन्दा अपने यौवन काल में खूब चर्चित और गढ़वाली समाज की चहेती रही। पत्रिका ने गढ़वाल का पर्याप्त जीवन दर्शन करवाया। लेखकों को मंच प्रदान किया और खूब लोकप्रियता अर्जित की, किन्तु अवसान दु:खदायी रहा।

राष्ट्रीय ज्वाला- (त्रै.मा.)- 1972: उत्तराखण्ड से प्रकाशित पत्रिकाओं में राष्ट्रीय ज्वाला (त्रैमासिक पत्रिका की अपनी एक विशिष्ट पहचान है। किसी जमाने का गेट वे आफ गढ़वाल' और व्यावसायिक नगरी दुगड्डा (गढ़वाल) से श्री कैलाश चन्द्र बंसल इसका प्रकाशन किया और अब उनके पुत्र सुभाष बंसल इसका प्रकाशन कर रहे हैं। पत्रिका की सामग्री विविध विषयक है। गढ़वाल की भूली बिसरी प्रतिभाओं का परिचय,

मातृमद (साप्ता)-1974: श्रीनगर के पुराने चर्चित पत्रकार और अब न.भा.टा के संवाददाता बाल ब्रहमचारी कैलाश जुगरान ने शुरू किया था वह अखबार। लगभग एक दशक की पारी खेलने के बाद अखबार बन्द हो गया। अपने जीवन काल में अखबार ने स्थानीय प्रश्नों को खूब उठाया और उनकी विवेचना भी की।

गढ़वाल मण्डल (साप्ता.)- 1975: साहित्य की कई विधाओं के स्थापित लेखक वाचस्पति गैरोला जी ने सन् 1975 में पौड़ी से 'गढ़वाल मण्डल' साप्ताहिक पत्र का प्रकाशन और सम्पादन प्रारम्भ किया। इस पत्र का 30 वर्षों तक लगातार प्रकाशन जारी रहा। औसत श्रेणी का अखबार होते हुए भी इसकी सर्वप्रियता यथावत रही। पर्यटन, वर्ष 1991 में गैरोला जी ने 'गढ़वाल यात्रा - पर्यटन विशेषांक प्रकाशित किया था। यह विशेषांक संग्रहणीय और पठनीय सामग्रीयुक्त है।

गढ़ गौरव (मासिक) - 1976: पत्रिकाओं की सूची में गढ़वाल क्षेत्र से प्रकाशित होने वाली यह सबसे पुरानी पत्रिका है। इसके सम्पादक स्व. श्री कुंवर सिंह नेगी कर्मठ थे। पत्रिका की गति शैली और श्रेणी मध्यम

है। पत्रिका में उच्चकोटि के आलेखों का अभाव रहता हैं। मुद्रण, आवरण, रचनाओं का सम्प्रेषण बिना मेहन्दी लगे बहू के हाथ जैसे हैं। पत्रिका न सावन सूखे न भादों हरे है। सम्पादकीय अलबत्ता तो होता नहीं, और होता है तो औसत। इसमें अधिकतर 'साभार' सामग्री देखी जाती है। पत्रिका में स्तरीय सामग्री अपेक्षित है। एक बात पत्रिका के पक्ष में अवश्य स्वागत योग्य है कि गढ़वाल के कुछ विस्मृत ऐतिहासिक स्थलों पर पत्रिका ने शोधपरक सामग्री प्रस्तुत कर इतिहास के विद्यार्थियों और अध्येताओं पर उपकार किया है।

8 अक्टूबर 2014 को श्री कुंबर सिंह नेगी कर्मठ के निधन के बाद उनके द्वितीय पुत्र श्री नरेंद्र सिंह नेगी ने इस पत्रिका का प्रकाशन व संपादन का दायित्व संभाल लिया है। जिनके सामने पत्रिका को आधुनिक और समसामयिक बनाने की चुनौती है।

हिमवन्त- साप्ता- 1976: चारू चन्द्र चन्दोला जी ने पौड़ी से इस साप्ताहिक पत्र का प्रकाशन और सम्पादन किया था।

आप एक लेखक और मंजे हुए पत्रकार हैं। इससे पहले कि अखबार अपनी पहचान बना पाता और पाठक चन्दोला की लेखनी का कमाल देखते- 'हिमवन्त' कुछ ही अंकों के बाद बन्द हो गया। स्थानीय खबरों के अतिरिक्त पत्र में हल्का-फुल्का साहित्यिक पुट भी रहता था। लम्बे अन्तराल के बाद पिछले एक साल से पत्रिका के रूप में छप रहा है 'हिमवन्त'।

गढ़वाल रिपोर्टर. (साप्ता.)- 1978: किसी समय श्रीनगर, नगरपालिका के अध्यक्ष रहे श्री मोहन लाल जैन के स्वामित्व और हीरा बल्लभ थपलियाल के सम्पादन में देहरादून को छोड़ गढ़वाल के पर्वतीय जिलों से छपने वाला अंग्रेजी भाषा का यह पहला अखबार था। अपनी पहचान के साथ ही साल-डेढ़ साल के अन्तराल में अखबार बन्द हो गया। इसकी असफलता को पचाने के लिए सन् 1980 में जैन साहब ने श्रीनगर से हिन्दी का एक साप्ताहिक 'श्रीनगर टाइम्स' का प्रकाशन शुरू किया। यह अखबार भी आया राम, गया राम साबित हुआ।

जयन्त (दैनिक) - 1979: ग्राम सकनोली, पट्टी असवालस्यूं गढ़वाल निवासी विज्ञान स्नातक स्व. श्री नरेन्द्र उनियाल ने 7 मई 1979 को साप्ताहिक के रूप में जयन्त का कोटद्वार से प्रकाशन शुरू किया। 18 अप्रैल सन् 1986 से इसका दैनिक के रूप में निरन्तर प्रकाशन हो रहा है। तब देहरादून को छोड़ सम्पूर्ण गढ़वाल क्षेत्र से दैनिक के रूप में प्रकाशित होने वाला जयन्त एक मात्र अखबार था। सन् 1981 में श्री उनियाल जी का युवावस्था में निधन हो जाने के बाद उनके अनुज नागेन्द्र उनियाल ने अखबार का सम्पादकीय एवं प्रकाशीय दायित्व संभाला। अकेले के प्रयासों से अखबार को दैनिक किया और पिछले 42 वर्षों से प्रकाशित कर रहे हैं। बड़े बैनर बजट के बहुरंगीय व्यवसायिक अखबारों की दौड़ में जयन्त बराबरी की भागीदारी निभा रहा है। इस धैर्य और साहस के लिए सम्पादक बधाई के पात्र हैं। एक सम्पूर्ण अखबार बनने के लिए जयन्त को अभी और कई मंजिलें पार करनी होंगी।

योग भूमि (साप्ता)- 1979: शीर्ष आन्दोलनकारी, भाजपा सरकार में उत्तरांचल में मंत्री रहे लेखक और पत्रकार मोहन सिंह रावत 'गांववासी' ने यह पत्र निकाला। अपने जीवनकाल में अखबार खूब चर्चित रहा। प्रौढ़ सामग्री से भरा 'योगभूमि' ने कई क्षेत्रीय समस्याओं को उकेरा और सुझाव प्रस्तुत किए। नए रचनाकारों को भी अखबार ने भरपूर प्रोत्साहन दिया लेकिन समाचार पत्र का प्रकाशन अल्पकालिक रहा।

हिसाब-किताब (साप्ता)- 1982: कोटद्वार के चर्चित पत्रकार मस्तराम बलूनी ने इस साप्ताहिक का प्रकाशन किया था। आरम्भिक वर्षों में अखबार खबरों की खोज में एक्सप्रेस बना रहा। खोजी प्रवृत्ति की राह से हटकर भ्रष्टाचार की जड़ों को खोदने लगें तीसरे चरण में रचनात्मक बन गए। सब कुछ के बावजूद हिसाब किताब गड़बड़ा गया और प्रकाशन बन्द हो गया। लम्बे अन्तराल के बाद देहरादून और कोटद्वार से एक साथ प्रकाशन की योजना बनी। कुछ अंकों के प्रकाशन उपरान्त प्रकाशन पर फिर विराम लग गया। सम्प्रति सन् 2003 से मस्तराम बलूनी 'पर्वतीय बुलेटिन' नाम से एक और साप्ताहिक का प्रकाशन कर रहे थे। वह भी कुछ समय बाद विवादों में फंस कर उनके हाथ से निकल गया। अब श्री मस्तराम बलूनी हमारे बीच में नहीं हैं।

सीमान्त वार्ता (दैनिक)- 1988: पूर्व में यह पत्र कोटद्वार से प्रकाशित होता था। पत्र के सम्पादक मण्डल में थे- रमेश पोखरियाल निशंक (भाजपा लीडर, उ0प्र0 और केन्द्र व उत्तरांचल में मंत्री, उत्तराखण्ड के मुख्यमंत्री और अब सांसद हैं)। बाद में पत्र का प्रकाशन लक्ष्मी नारायण मन्दिर मार्ग, निशंक प्रकाशन, पौड़ी से होने लगा। बीच में यह पत्र लड़खडाते हुए चला किन्तु सन् 2002 में यह दैनिक देहरादून से मुद्रित होने लगा। निशंक प्रकाशन द्वारा सन् 1988 में एक त्रैमासिक शोध पत्रिका नवराह नव चेतना का प्रकाशन भी आरम्भ किया गया था। वित्तीय संकट के कारण कुछ ही अंकों के प्रकाशन उपरान्त पत्रिका बन्द हो गई।

शायद सम्भावना (साप्ता)- 1993: उत्तराखण्ड आन्दोलन की उपज है यह साप्ताहिक पत्र। कोटद्वार गढ़वाल से प्रकाशित इस अखबार ने आन्दोलन को पर्याप्त ऊर्जा दी। उत्तराखण्ड राज्य क्यों, कब, कैसे प्रश्नों को अखबार ने सिद्दत के साथ परोसा। आज यह अखबार नेपथ्य में है।

वर्तमान उत्तराखण्ड- 1994: यह पत्रिका उत्तराखण्ड आन्दोलन की पैदाइश है। एक सम्पादकीय के अनुसार- आन्दोलन के उबाल और गुस्से को समझने और सफलता और उपलब्धियों का आकलन करने के लिए पत्रिका एक मंच है। पत्रिका का सम्पादन श्रीनगर (गढ़वाल) से डा0 अतुल सकलानी (इतिहास विभाग, गढ़वाल वि0वि0) मनोज भट्ट डा0 एमएस सेमवाल, सुरेन्द्र बिष्ट और यतीश बशिष्ठ की टीम ने किया और प्रकाशन भुवनेश्वरी महिला आश्रम, अंजनी सैण, टिहरी गढ़वाल ने। राज्य प्राप्ति के बाद पत्रिका का प्रकाशन बन्द हो गया। अपने अल्प काल में पत्रिका ने जितना भी लिखा, वह सब पत्रिकाओं के प्रकाशन के लिए सम्पादकीय टीम को बधाई।

जनपद गढ़वाल में विकास के आन्दोलन

आजादी के आन्दोलन की सफलता के बाद देश अपने पैरों पर खड़ा होना था, सरकार के पास सड़के, स्कूल, हॉस्पीटल, बिजली जैसे विकास कार्यों के लिए ध न नहीं था, धन कब सरकार इकठ्ठा करेगी और तब विकास कार्य होगें, इस उम्मीद को त्यागकर गढ़वाल की जनता स्वयं ही आगे आ गई। सरकार कोई विकास कार्य करे तो उसके लिए अपनी भूमि निःशुल्क दे दी, सड़क निर्माण को सरकार का मुंह ताकने से बेहतर समझा कि खुद ही श्रमशक्ति से सड़के बना डाले।

उच्च शिक्षा के लिए अनेक स्थानों पर प्राईमरी, जूनियर व हाईस्कूल स्वयं के चन्दे से जनता ने खोलने शुरू कर दिए। उच्च शिक्षा के लिए विश्व विद्यालय आन्दोलन चला तो टिंचरी (शराब) को विकास में बाधक मानकर टिंचरी आन्दोलन चला, चकबन्दी आन्दोलन और उसके बाद राज्य आन्दोलन, राज्य मिल जाने के बाद राजधानी आन्दोलन चले, इन आन्दोलनों से गढ़वाल का भूगोल बदला तो क्रांति आई, फिर ऐसे में किस प्रकार इन आन्दोलनों को भुलाया जा सकता है?

प्रस्तुत हैं हमारी नई पीढ़ी के स्वालम्बी और समृद्ध होने के लिए मार्गदर्शक ये आन्दोलन-

विश्वविद्यालय के लिये आंदोलन

इसे पहाड़ का सौभाग्य कहें या दुर्भाग्य पर्वतीय क्षेत्रों में विकास एवं ढ़ांचागत सुविधाओं का विस्तार स्वाभाविक रूप से कभी नहीं हुआ। स्वतन्त्रता प्राप्ति के पश्चात् आदिम सामाजिक व्यवस्था को आधुनिक युग तक पहुंचते-पहुंचते कई दशक लग गये। अगर उत्तराखण्ड राज्य चीन, तिब्बत, नेपाल की सीमावर्ती प्रदेश नहीं होता तो मुख्य राज्य मार्गों के लिए आज भी लोग आन्दोलित रहते। वो तो भला हो अंग्रेजों का जिनका प्रकृति प्रेम बार-बार अंग्रेज प्रशासकों को पहाड़ों की दुर्गम घाटियों एवं चोटियों तक खींचता रहा।

अंग्रेजों ने भले ही देश पर शासन किया, अत्याचार भी किया होगा लेकिन पर्वतीय क्षेत्रों में शिक्षा एवं विकास का बुनियादी ढ़ांचा अंग्रेजों ने ही स्थापित किया था।

स्वतन्त्रता से पूर्व कुछ प्रतिष्ठित व आर्थिक रूप से सक्षम लोगों के बच्चे ही शिक्षा पाने में सफल रहे थे और आम जनता शिक्षा और उच्च शिक्षा के लिए दशकों तक इंतजार करती रही। पूरे उत्तराखण्ड में गिनती के कुछ इलाकों में मिडिल व अपर मिडिल तथा मिशनरी स्कूलों की स्थापना अंग्रेजों ने की थी जिसमें बालिकायें नहीं के बराबर हुआ करती थी।

उत्तराखण्ड क्षेत्र में स्वतन्त्रता के पश्चात् लोगों ने श्रमदान कर विद्यालयों की स्थापनायें की, जिससे धीरे-धीरे शिक्षा का प्रकाश फैलने लगा लेकिन तब भी पर्वतीय क्षेत्रों में उच्च शिक्षा की व्यवस्था नहीं हो पायी, उच्च शिक्षा के लिए लोगों को लखनऊ व इलाहाबाद जाना पड़ता था। पर्वतीय क्षेत्रों में उच्च शिक्षा की व्यवस्था के लिए कुछ बुद्धिजीवियों ने प्रयास किये। जिनमें बदरी-केदार क्षेत्र के विधायक श्री नरेंद्र सिंह भंडारी, एडवोकेट श्री भाष्करानन्द मैठाणी, श्री सुरेंद्र अग्रवाल तथा मित्रानन्द घिल्डियाल प्रमुख थे। इन्होंने देश के प्रसिद्ध उद्योग पति माधवप्रसाद बिड़ला से सम्पर्क किया व उनसे श्रीनगर में एक स्नातकोत्तर कॉलेज खोलने के लिए निवेदन किया। जिसके पश्चात् ही गढ़वाल मण्डल में पहले डिग्री कॉलेज की स्थापना सुनिश्चित हो पायी जिसका नाम बिड़ला संगठक कॉलेज पड़ा।

विश्वविद्यालय आन्दोलन

भले ही श्रीनगर में डिग्री कॉलेज की स्थापना हो गयी लेकिन अभी भी दूर-दराज इलाकों में रह रही निर्धन जनता इसका पूर्ण लाभ नहीं ले पायी। श्रीनगर स्थित यह डिग्री कॉलेज आगरा विश्वविद्यालय के साथ सम्बद्ध था। जिस वजह से छोटे-छोटे कार्यों के लिए भी कालेज के विद्यार्थियों को आगरा जाना पड़ता था, साथ ही विशाल पर्वतीय क्षेत्र में फैली जनसंख्या की शैक्षणिक आकांक्षायें पूरी नहीं हो पा रही थी। इस बात को दृष्टिगोचर रखते हुए क्षेत्र के युवाओं, बुद्धिजीवियों एवं राजनेताओं ने पृथक पर्वतीय विश्वविद्यालय की आवश्यकता महसूस की। इस हेतु भारत के प्रधानमंत्री, राष्ट्रपति व उच्च शिक्षामंत्री के साथ-साथ दबाव की रणनीति बनायी गयी। लोगों को पता था कि बच्चा रोयेगा नहीं तो मां दूध पिलाने नहीं आयेगी। विश्वविद्यालय की स्थापना के लिए वृहद् रूप से आन्दोलन की रणनीति बनायी गयी व इसके संगठन का स्वरूप दिया गया। श्रीनगर में उत्तराखण्ड विश्वविद्यालय केंद्रीय संघर्ष समिति का निर्माण किया गया, जिसके संरक्षक स्वामी मनमथन व श्री भाष्करानन्द मैठाणी को बनाया गया। समिति के अध्यक्ष प्रेम लाल वैद्य, उपाध्यक्ष श्री विद्यासागर नौटियाल, मंत्री श्री कृष्णानन्द मैठाणी, श्री प्रताप सिंह पुष्पवान तथा श्री हजारी लाल जोशी को बनाया गया। समिति के प्रचार मंत्री श्री ऋषिबल्लभ सुन्द्रियाल बने। इसके अतिरिक्त केंद्रीय संघर्ष समिति में 20 सदस्यों को शामिल किया गया। 26 जुलाई 1971 को स्वामी मनमथन के आवाहन पर श्रीनगर में विशाल जनसभा का आयोजन किया गया। उत्तराखण्ड विश्वविद्यालय के संरक्षण में श्रीनगर, कीर्तिनगर, कर्णप्रयाग, गौचर, चमोली, पीपलकोटी, पौड़ी, जयहरीखाल, लैंसडौन, कोटद्वार, दुगड्डा, मसूरी, नन्दप्रयाग आदि शहरों में बाजार व सरकारी प्रतिष्ठान पूर्णतः बन्द रहे। आन्दोलन को व्यापक स्वरूप देने के लिए 15 अगस्त 1971 को टिहरी में स्वामी मनमथन के आगमन पर विशाल जनसभा का आयोजन किया गया। जिसमें स्वामी मनमथन ने लोगों से आन्दोलन को सफल बनाने के लिए जनता से अपील की। इसके परिणाम स्वरूप 23 अगस्त 1971 को टिहरी बन्द का सफलता पूर्वक आयोजन हुआ। विश्वविद्यालय आन्दोलन का विस्तार देने के लिए केंद्रीय समिति की अलग-अलग शहरों कस्बों में उपसमितियों का गठन किया गया। महिलायें व बच्चे भी धीरे-धीरे आन्दोलन से जुड़ने लगे। श्रीनगर में कमलेश्वर मंदिर के महन्त श्री गोविन्दपुरी के नेतृत्व में 10 हजार महिलायें व पांच हजार पुरूषों का विशाल सम्मेलन राजकीय बालिका विद्यालय में किया गया। स्वामी

मनमथन ने हम गढ़वाली नारी हैं, फूल नहीं चिंगारी है का नारा देकर महिलाओं एवं बालिकाओं को भी आन्दोलन से जोड़ दिया। 25 अगस्त को पौड़ी बन्द का आयोजन किया गया व 23 अगस्त 1971 स्वामी मनमथन तथा आदि बद्री के स्वामी ओमकारानन्द ने पौड़ी जिलाधीश कार्यालय के सम्मुख अनिश्चितकालीन भूखहड़ताल व अनशन पर बैठने का निश्चय किया। प्रशासन को इस बात की भनक लग गयी थी लेकिन ऋषिबल्लभ सुन्द्रियाल, श्री कुंजबिहारी नेगी, चंद्र सिंह रावत, देवीप्रसाद जोशी, गोपाल सिंह रावत, आदि की चतुराई से जिलाधिकारी कार्यालय के समक्ष दोनों महात्माओं की भूखहड़ताल शुरू हो गयी। 25 अगस्त को सम्पूर्ण पौड़ी बन्द रहा व नगर में 15 हजार लोगों का विशाल झुलूस निकाला गया।

भूखहड़ताल पर बैठे दोनों स्वामियों का वजन लगातार घटता जा रहा था। जिलाधिकारी ने उनकी कुशलक्षेम पूछी। 29 अगस्त 1971 को संघर्ष समिति के आहवान पर पुनः विशाल प्रदर्शन किया व शीघ्र विश्वविद्यालय की घोषणा न करने पर आन्दोलन को और विस्तार देने की बात की। धरने पर बैठे दोनों स्वामियों का स्वास्थ्य बिगड़ने लगा वहीं दूसरी ओर जनता में रोष फैलता जा रहा था। श्रीनगर और पौड़ी में 30 अगस्त की रात्रि से एक माह के लिए धारा 144 लगायी गयी। दर्जनों लोगों को गिरफ्तार कर जेल में बंद कर दिया गया। 4 सितम्बर 1971 को सरकार ने तत्कालीन विधायक शेर सिंह दानू व चंद्र मोहन सिंह नेगी को आन्दोलनकारियों से वार्ता के लिए अधिकृत किया। बद्री-केदार की यात्रा पर आये मध्यप्रदेश के भूतपूर्व शिक्षा मंत्री डॉ. महेंद्र कुमार मानव ने भी उत्तराखण्ड विश्वविद्यालय आन्दोलन के औचित्य का समर्थन किया। इस बीच देश में अन्य जगहों पर भी विश्वविद्यालय आन्दोलन के लिए ज्ञापन, धरने एवं प्रदर्शन होने शुरू हो गये। स्वामी मनमंथन और स्वामी ओमकारानंद की भूखहड़ताल लगातार जारी थी उनके स्वास्थ्य में गिरावट आने से चिन्तित थे अतः 2 सितम्बर 1971 को जनता के आहवान पर दोनों स्वामियों ने भूखहड़ताल समाप्त कर दी। इसके बावजूद उत्तराखण्ड विश्वविद्यालय आन्दोलन दिन-प्रतिदिन उग्र होता जा रहा था।

लोग उत्तराखण्ड के पांचवे धाम विश्वविद्यालय के लिए कटिबद्ध थे। लगातार गिरफ्तारियां हो रही थी सरकार जगह-जगह आन्दोलन को कुचल रही थी व दर्जनों लोगों को जेलों में ठूसा जा रहा था। छात्रों ने परीक्षाओं का बहिष्कार किया सत्याग्रहियों को जेल से मुक्त करवाने के लिए समिति लगातार रणनीति बना रही थी। भरे जेल चाहे चले लाख गोली, चले जूझने को निहत्थों की टोली। इस दौरान तत्कालीन वित्त मंत्री नारायण दत्त तिवारी ने हल्द्वानी में एक पत्रकार सम्मेलन में उत्तराखण्ड विश्वविद्यालय की घोषणा अपनी सुविधानुसार की जिस पर आंदोलनकारी राजी नहीं हुए। आंदोलन को कुचलने के लिए स्वामी मनमथन व कुंजबिहारी नेगी को बन्दी बनाकर रामपुर की जेल में ठूंस दिया गया। नारायण दत्त तिवारी के रवैये से उत्तराखण्ड विश्वविद्यालय आंदोलन विभाजित होने लगा था।

जिसके विरोध स्वरूप स्वामी मनमंथन ने रामपुर जेल से नारायण दत्त तिवारी को पत्र भेजा व अपनी पीड़ा जारी की। रामपुर जेल से स्वामी मनमथन व कुंजबिहारी नेगी को मुक्त करवाने के लिए हिण्डोलाखाल निवासी एडवोकेट श्री हुकुम सिंह नेगी ने 8 अगस्त 1971 से जिलाधीश पौड़ी के सम्मुख आमरण अनशन व भूखहड़ताल प्रारम्भ कर दी। जिस पर तत्कालीन मुख्यमंत्री कमलापति त्रिपाठी स्वामी मनमथन व कुंजबिहारी नेगी को रामपुर जेल से रिहाई के आदेश दिये। 5 अक्टूबर 1971 को उत्तराखण्ड विश्वविद्यालय संघर्ष समिति का एक शिष्ट मंडल लखनऊ में मुख्यमंत्री से मिला इस पर श्री त्रिपाठी ने सहानभूति व्यक्त करते हुए विश्वविद्यालय आन्दोलनकारियों को छोड़ने व विश्वविद्यालय कहां हो इस पर निर्णय के लिए पर्वतीय विकास परिषद् की बैठक 24 अक्टूबर को सुनिश्चित की। लेकिन फिर भी कोई उचित निर्णय नहीं हुआ। इस बीच एक प्रस्ताव ऐसा भी आया जिसमें प्रधानमंत्री ने 80 लाख रूपये पर्वतीय विश्वविद्यालय नैनीताल में खोलने की बात की गयी। जिसको आन्दोलनकारियों ने खारिज कर दिया। आन्दोलन लगातार जारी रहा। 15 अगस्त 1972 में श्रीनगर गढ़वाल में छात्र नेता वीरेंद्र पैन्यूली के नेतृत्व में 2 दिवसीय विराट सम्मेलन का आयोजन किया गया। जिसमें विभिन्न स्थानों से आये 2 हजार छात्र-छात्राओं ने भाग लिया व आन्दोलन को मजबूत करने का आवाहन किया। आन्दोलन की व्यापकता से प्रान्तीय व केंद्रीय सरकार लगातार चिन्तित थी इस तत्कालीन प्रधानमंत्री इन्दिरा गांधी ने गढ़वाल भ्रमण का कार्यक्रम बनाया व मुख्यमंत्री कमलापति त्रिपाठी ने पर्वतीय क्षेत्र गढ़वाल व कुमांऊ व गढ़वाल में दो विश्वविद्यालय की घोषणा कर दी। लेकिन केंद्रीय शिक्षा मंत्री प्रो0 नुरूल हसन ने नैनीताल में ही विश्वविद्यालय खोलने की बात कहकर पुनः आन्दोलनकारियों को नाराज कर दिया। अपने पूर्व निश्चित भ्रमण पर प्रधानमंत्री इंदिरागांधी ने फूलों की घाटी की यात्रा की।

उनके आगमन से पूर्व ही यह खबर आन्दोलनकारियों को पहुंच गई व उन्होंने मुख्यमंत्री की घोषणा पर पुनर्विचार करने का आवाहन किया। आन्दोलनकारियों ने निर्णय लिया कि पहले प्रधानमंत्री दो विश्वविद्यालय की घोषणा करे तभी वे जनता को संबोधित करेगी इसके लिए सटीक रणनीति बनायी गयी।

इस पर प्रधानमंत्री प्रतिनिधि मण्डल से वार्ता हेतु तैयार हो गये। इस वार्ता में संचार मंत्री हेमवती नंदन बहुगुणा, केसी पन्त व बलदेव सिंह आर्या भी सम्मिलित हुए। वीरेन्द्र पैन्यूली ने प्रधानमंत्री के समक्ष आन्दोलनकारियों की भावना से अवगत करवाया, जिस पर प्रधानमंत्री सहमत हो गयी व इन्दिरा गांधी ने जीआईटीआई की आम सभा में गढ़वाल व कुमांऊ विश्वविद्यालय की घोषणा कर दी लेकिन अभी भी असमंजस की स्थिति बनी रही व उत्तराखण्ड विश्वविद्यालय आन्दोलन संघर्ष समिति लगातार घोषणा लागू होने तक संघर्षरत् रही। जनवरी 73 में मुख्यमंत्री कमलापति त्रिपाठी ने विश्वविद्यालय के प्रस्ताव को मंजूर कर दिया व विशेष सेवा अधिकारी की नियुक्ति भी कर ली।

डॉ. स्वामी मनमथन ने सम्मेलन कर यह निर्णय लिया कि अगर सरकार अपने निर्णय से पीछे हटती है तो जनता के सहयोग से विश्वविद्यालय का संचालन किया जायेगा। आखिरकार लम्बे संघर्ष के पश्चात् 13 सितम्बर 1973 को तत्कालीन राष्ट्रपति ने विश्वविद्यालय अधिनियम को स्वीकृति प्रदान की। इसी प्रकार उत्तर प्रदेश सरकार ने 23 नवम्बर 1973 गढ़वाल विश्वविद्यालय के सम्बन्ध में विज्ञप्ति जारी कर 1 दिसम्बर 1973 को श्रीनगर गढ़वाल में विश्वविद्यालय की विधिवत स्थापना कर दी।

श्रमदान आंदोलन की ऐसी मिसाल और कहां

बीसवीं सदी के पांचवे दशक में समूची दुनिया द्वितीय विश्व युद्ध की विभीषिका से त्रस्त थी। युद्ध की समाप्ति के कुछ ही समय बाद भारतीय उपमहाद्वीप भी विशिष्ट औपनिवेशिक सत्ता से मुक्त हो गया। लेकिन एक गरीब और अविकसित देश के सामने कई समस्यायें मुंह बाये खड़ी थीं। देश में ढ़ांचागत विकास से बेहद पीछे था। लेकिन सबके दिलों में राष्ट्रवाद की भावनायें जागृत थीं इसलिये तमाम नागरिक राष्ट्र निर्माण में अपनी-अपनी भूमिका तलाश रहे थे। ऐसे समय में पौड़ी जिले के परागना चौंदकोट वासी भी पीछे नहीं रहे। यहां की जागरूक जनता ने अपने दम पर श्रमदान कर एक ऐसे आंदोलन को जन्म दिया जिसकी आज महज कल्पना ही की जा सकती है। इसके तहत जनता ने अपने दम पर बगैर सरकारी मदद के 30-30 किमी लम्बे दो स्थानों से सड़क मार्ग बनाये। चौन्दकोट वासियों के इस अनूठे श्रमदान आंदोलन के बारे में जिसने भी सुना वह आश्चर्य में पड़ गया। जनसहयोग की इस मिसाल को सुनकर यहां यूगोस्लाविया के नौजवानों का एक संगठन भारत आया। जिसने चौंदकोट वासियों के उस जज्बे का अध्ययन किया जिसमें वहां की जनता ने अपने श्रमदान द्वारा इतने बड़े निर्माण को मूर्त रूप दिया। इसके बाद तो इसकी प्रेरणा से गढ़वाल परिक्षेत्र में ग्यारह अन्य सड़के रीठाखाल, संगलाकोटी-पोखड़ा, बांघाट-ढाडूखाल- कांसखेत, डबरूखाल-धनपुर, विजोरापानी-कुण्जखाल, धुमाकोट-नैनीडांडा, दुगड्डा-लक्ष्मणझूला, डेरियाखाल, अंधरियाखाल, रथुवाढ़ाब-रिखणीखाल, पौड़ी-देवप्रयाग, गैरसैंण-ग्वालदम आदि बनी। गढ़वाल में यह श्रमदान आंदोलन 1970 के दशक तक प्रभावी रहा। पिछली सदी के चौथे दशक के अंत तक कोटद्वार-सतपुली-पौड़ी सड़क काफी बन चुकी थी। पर परगना चौंदकोट व राठवासियों को सतपुली और पाटीसैंण की व्यापारिक मंडियों से साजोसामान पैदल ढांकरी रास्तों या अश्वमार्गो से ले जाना होता था जो बेहद महंगा पड़ता था तथा इसमें बहुत समय लगता था।

इस समस्या का समाधान बस यही था कि वहां तक सड़क आये सरकार के पास संसाधन नहीं थे इसलिये क्षेत्र के समाजसेवियों व बुद्धिजीवियों के जेहन में यहां के लिये सड़क निर्माण का विचार रह रहकर आता था। इसमें दक्षिण मौंदाड़स्यूं ईड़ा गांव निवासी अपने समय के ग्रेजुएट व ब्रिटिश राज में अच्छे प्रशासनिक ओहदे पर रहे, समाजसेवी दर्शन सिंह नेगी ने पहल की। बाद में वे अपने इस काम के लिए जनबल के उपनाम से पुकारे जाने लगे। उनकी पहल पर पहली बैठक 12 फरवरी, 1951 को श्रीकोटखाल बाजार में आयोजित हुई जिसे जन निर्माण मेला का नाम दिया गया। इसमें क्षेत्र के अनेक गणमान्य लोगों ने शिरकत कर सतपुली से तीन किलोमीटर दूर जमरिया बैंड (मलेठी) से जणदादेवी तक जनसाध्य सड़क बनाने का प्रस्ताव पारित किया गया। इस बैठक को संबोधित करते हुए जनबल ने कहा कि सड़क विकास की रेखाएं है। यह गढ़वाल के दुर्गम इलाकों में अवश्य खीचीं जानी चाहिए। इसमें जनता की सहयोग की सख्त जरूरत है। यह समाचार लैन्सडौन से प्रकाशित साप्ताहिक **कर्मभूमि** अखबार में प्रमुखता से छपा था। इस विचार को अमली जामा पहनाने के लिए जल्दी ही इसी साल एक बड़ी बैठक 15 अप्रैल 1951 को यानि दो गते बैशाख को इगासर

दक्षिण मौंदाड़स्यूं ईड़ा गांव निवासी अपने समय के ग्रेजुएट व ब्रिटिश राज में अच्छे प्रशासनिक ओहदे पर रहे, समाजसेवी दर्शन सिंह नेगी ने पहल की। बाद में वे अपने इस काम के लिए जनबल के उपनाम से पुकारे जाने लगे। उनकी पहल पर पहली बैठक १२ फरवरी, १९५१ को श्रीकोटखाल बाजार में आयोजित हुई जिसे जन निर्माण मेला का नाम दिया गया। इसमें क्षेत्र के अनेक गणमान्य लोगों ने शिरकत कर सतपुली से तीन किलोमीटर दूर जमरिया बैंड (मलेठी) से जणदादेवी तक जनसाध्य सड़क बनाने का प्रस्ताव पारित किया गया। इस बैठक को संबोधित करते हुए जनबल ने कहा कि सड़क विकास की रेखाएं है। यह गढ़वाल के दुर्गम इलाकों में अवश्य खीचीं जानी चाहिए। इसमें जनता की सहयोग की सख्त जरूरत है। यह समाचार लैन्सडौन से प्रकाशित साप्ताहिक कर्मभूमि अखबार में प्रमुखता से छपा था।

कौथिग मेले के दिन एकेश्वर में बुलाई गई। यह काफी असरकारी रही एवं इसमें इस सड़क निर्माण के लिए बाकायदा एक जनसमिति गठित हो गयी। इसमें अध्यक्ष पद पर जिला परिषद् पौड़ी के पूर्व चैयरमैन मूल रूप से रिंगवाड़ी गांव निवासी हरेंद्र सिंह रावत को मनोनीत किया गया। दर्शन सिंह नेगी उपाध्यक्ष, गजेरा गांव के चंद्र सिंह रावत को सचिव, बच्छेली के शिक्षक समाजसेवी त्रिलोक सिंह नेगी को कोषाध्यक्ष जी.एम. ओ.लि.यू. कोटद्वार में खंजाची पद पर कार्यरत गुराड़ मल्ला निवासी सीताराम सेमवाल को सह सचिव बनाया गया। मासौं गांव निवासी युवा पत्रकार कुंवर सिंह नेगी **कर्मठ** इसके प्रचार मंत्री व महेशानन्द शास्त्री को सह प्रचार सचिव बनाया गया। इसके अलावा प्रत्येक गांव से दो-दो व्यक्तियों को समिति में बतौर सदस्य में शमिल किया गया। प्रस्तावित सड़क को लम्बाई के मुताबिक चार फ्रंटों (जॉबों) में बांटा गया, जिसके व्यवस्थापक कमिश्नर नियुक्त किये गये। प्रारम्भ स्थल जमारिया से खंलगधार (नौगांव) तक प्रथम फ्रन्ट के व्यवस्था कमिश्नर बंठोली के जमादार मनवर सिंह नेगी व डीब गांव के पंचम सिंह रावत बन्दीलाला को बनाया गया। आगे के निर्माण के लिए गरूडबिट (गणेशपुर) के से. नि. बिग्रेडियर शिवदयाल बड़ोला, कप्तान मगन सिंह रावत जैंतोली के थोकदार शिवसिंह रावत व नाई के सुबेदार रतन सिंह रावत जो बाद में डोडिंया सुबेदार नाम से प्रसिद्ध हुए। इनके साथ अन्य लोगों को भी चुना गया। सड़क निर्माण का शिलान्यास मौन्दाड़स्यू मलेठी गांव के पदान जीत सिंह बिष्ट ने पहली कुदाल चलाकर ने किया। हालांकि शुरूआत में जीत सिंह बिष्ट जमारिया तोक अपने चारागाह (गौचर) इलाके को सड़क की भेंट चढ़ाने के पक्ष में नहीं थे, पर बाद में वे मान गये। यह कम ही जानते हैं कि पहले इस क्षेत्र के लिये जमरिया-एकेश्वर-छामाखाल-जणदादेवी तक ही सड़क बनाने की बात हुई। लेकिन ज्वाल्पा के समीप नयारपुर के समीप कनमोठलिया से सड़क कैसी बनी? असल में कनमोठलिया निकट ज्वाल्पा धाम-संतुधार-सतपाली-रिंगवाडी-जणदादेवी-नौगांवखाल जन साध्य सड़क के निर्माण का श्रेय लैंसडौन न्यायालय के प्रथम अधि वक्ता रिंगवाड़ी निवासी मनवर सिंह रावत को जाता है। एडवोकेट मनवर सिंह रावत को लगा कि यदि एक ओर से सड़क बनी तो इस मार्ग का भावी लाभ दक्षिण पूर्वी चौंदकोट यानि मौन्दाड़स्यूं व गुराड़स्यूं के लोगों को ही ज्यादा मिलेगा। और इससे उत्तरी चौंदकोट, जैन्तोलस्यूं, रिंगवाड़स्यूं मवालस्यूं क्षेत्र के गांव सड़क से वंचित रहेंगे। इसलिए उन्होंने अपने क्षेत्र के लोगों को दूसरी ओर से सड़क निर्माण करने के लिए प्रेरित किया। यह सड़क भी पहली सड़क के साथ तीव्र गति से बनने लगी और कुछ समय बाद परगना चौंदकोट को अपने एक की जगह दो-दो सड़कों की सुविधा प्राप्त हुयी। इन सड़कों के निर्माण में शामिल हुये कुछ पुराने बुजुर्ग बताते है कि लोग अपने-अपने गांव से ढ़ोल दमाऊ की थापों पर नाचते हुए अपने-अपने फ्रंटों पर पहुंचकर निर्माण कार्य में जुट जाते थे। इस सड़क निर्माण में महिलाओं की भूमिका भी अविस्मरणीय रही है। इस ऐतिहासिक निर्माण को याद करते हुए बंठोली निवासी उत्तराखंड राज्य के अग्रणी आंदोलनकारी शहीद मोहन उत्तराखंडी बताते थे कि इस निर्माण के दौरान उनकी मां का चूल्हा दिन रात जलता रहता था। उनके पिता मनवर सिंह नेगी इस कार्य में जमादार की महत्वपूर्ण भूमिका निभा रहे थे। श्रमदान करने वाले स्वयं सेवियों के लिए उनके घर से खाना बनाकर निर्माण स्थलों पर भेजा जाता था।

नवम्बर 1951 में जमरिया से पहली सड़क का निर्माण कार्य शुरू हुआ, जिसका नौ मील लम्बाई का पहला फ्रन्ट उत्साहित श्रमदानियों ने मात्र चार माह में पूरा कर डाला। इसका उद्घाटन उप्र के प्रथम मुख्यमंत्री गोविंद बल्लभ पंत ने 16 फरवरी 1952 को जमरिया में किया। बाद के निर्माणों का लोकापर्ण सार्वजनिक निर्माण विभाग के तत्कालीन इंजीनियर कुलानन्द थपलियाल व गढ़वाल जिले के डिप्टी कमिश्नर अब्दुल जमील खान व तत्कालीन राज्य मंत्री जगमोहन सिंह नेगी ने किया। 1960 के दशक में इन सड़कों को सा.नि.वि. के प्रान्तीय खण्ड लैंसडौन के रखरखाव में राज्य सरकार को दे दिया गया। सन् 1977 में क्षेत्र समिति एकेश्वर की बैठक में जनप्रतिनिधियों ने इस बेमिसाल निर्माण की याद को चिरस्थायी बनाने के लिए चौंदकोट जनशक्ति मार्ग के आगे स्मारक प्रवेश द्वारों के निर्माण का प्रस्ताव पारित किया। 1988 में प्रमुख नरेंद्र डंडरियाल ने क्षेत्र पंचायत प्रमुख विकास निधि से बाद में जमरिया तथा कनमोठलिया स्थान पर दो प्रवेश द्वारों का निर्माण करवाया। यद्यपि इन सड़कों के निर्माण में समूचे चौंदकोट की जनता की अथक मेहनत रही है। लेकिन इस निर्माण में अग्रणी भूमिका निभाने वाले दर्शन सिंह नेगी जनबल नाई गांव के डोंडिया सुबेदार रतन सिंह रावत समेत आदि कई अन्य जन नेताओं की बहादुरी का आज भी लोग सलाम करते है। सरकारी धन के दुरूपयोग व घपले व घोटालों के इस युग तथा भ्रष्टाचारियों की मनमानी के अंधे दौर में चौंदकोटवासियों का यह कार्य आज भी प्रेरणा देता है कि भौतिक एवं ढ़ांचागत विकास केवल सुविधाओं व साधनों के बूते पर ही नहीं हो सकता बल्कि इसके लिए जनसहयोग ईमानदार पहल सबसे जरूरी है।

चकबन्दी आंदोलन

चकबंदी नेता गणेश सिंह गरीब का नाम उन लोगों में शामिल है, जो लम्बे समय से उत्तराखण्ड की माटी की उस आवाज को बुलन्द किये हुये हैं जिससे पूरा ही उत्तराखण्ड का पहाड़ी प्रदेश ग्रसित है। यह समस्या है पर्वतीय भाग में कृषि भूमि के बिखरे होने की, जिसके चलते पहाड़ में खेती चौपट हो गई है। बागवानी व अन्य कृषि जन्य कामकाज बर्बाद होते जा रहे हैं। इसका निदान जमीन की चकबन्दी कर निकाला जा सकता है।

दरअसल पहाड़ में अब जिस प्रकार भूस्वामित्व है, उस हालात में उस पर कृषि बागवानी से लेकर पशुपालन, जड़ी-बूटी कृषिकरण करना तब तक असंभव है जब तक कि उसका एकत्रीकरण कर वितरण नहीं होता है। एक स्थान पर जमीन होने पर ही कोई कृषक किसी भी प्रकार की कार्य योजना बनाकर कर सकता है और तभी यहां के लिए बनाई गई योजनायें जमीन पर उतर सकती है। गणेश सिंह गरीब पिछले 45 साल से क्षेत्र में चकबन्दी की मांग कर रहे हैं, जिसके अभाव में राज्य के पर्वतीय क्षेत्रों से भारी संख्या में लोगों का पलायन हो रहा है। इससे सदियों से आबाद खेत वीरान व बंजर होते चले जा रहे है। राज्य को करीब से जानने वाला हर व्यक्ति कम से कम उनकी बात से सहमत है। लेकिन राजनीतिक दलों व सरकारों में इच्छा शक्ति की कमी के कारण अभी तक यह मसला अनसुलझा ही है। सरकार चकबन्दी की बात भी करती है लेकिन उसने ऐसा कुछ भी नहीं किया है कि इस पर आगे बढ़ा जा सके। जमीन के बेकार होने से व गांव में रोजगार न मिलने से पर्वतीय क्षेत्रों में भारी पलायन हो रहा है। गांव से लोग कस्बों की ओर आ गये हैं और कस्बों से नगरों की ओर पलायन हो रहा है। पिछले 20 साल में नये राज्य में वही हालात हैं जो उप्र में थी। लेकिन गरीब का अभियान रूका नहीं है। वे आज भी उसी भावना के साथ इस मांग के लिए लड़ रहे हैं। अफसोस यह है कि राज्य के कर्णधार बर्बाद हो रहे पहाड़ पर आंसू तो बहा रहे हैं लेकिन इसका समाधान नहीं करना चाहते हैं।

ग्राम सूला, पट्टी असवालस्यूं, ब्लाक कल्जीखाल, पौड़ी गढ़वाल में 1 मार्च 1937 को जन्मे गणेश सिंह नेगी चकबन्दी की आवाज उठाने के गरीब क्या बने वे इस मांग के प्रतीक ही बन गये। एक बार फिर नई सरकार बनने जा रही है। वे चाहते है कि विधायक बनकर यहां से चयनित लोग सदन के पटल पर पहाड़ के गांवों के हालात को रखें जो उनके चुनाव के वक्त दिखे होंगे। गांव का विकास तभी हो सकता है, जब यहां पर जमीन आबाद हो और जमीन तभी आबाद हो सकती है जब उस पर चकबन्दी हो। इस मांग के लिए पूरा ही जीवन समर्पित करने वाले गरीब को नौकरी का मोह नहीं रहा। स्वाध्याय की ओर झुकाव हुआ तो दिल्ली चले आये। सन् 1965 से 1981 के मध्य दिल्ली के लोदी कालोनी स्थित न्यू खन्न मार्केट में रोडियों मैन्युफैक्चरिंग कार्य किया। लेकिन पहाड़ी की दशा को देखकर पहाड़ में स्वरोजगार व स्वावलम्बन के लिये स्वयं प्रयोग करने के लिए 26 जनवरी 1981 में दिल्ली छोड़कर गांव आ बसे। जहां पर स्वैच्छिक रूप से चकबन्दी की। 18 नाली बंजर भूमि को चंदन वाटिका नाम से आबाद कर लोगों के सम्मुख अपना प्रयोग रखा। लेकिन गरीब इसे पूरे राज्य में चाहते हैं। इसलिये 1984 के बाद चकबन्दी के लिए उन्होंने पर्वतीय क्षेत्र के सैकड़ों गांवों में पदयात्रायें, विचारगोष्ठी, जनसम्पर्क कर जनता में पोस्टर व पर्चों से जनजागरण किया। स्वयं अपने विकासखंड कल्जीखाल में जिला स्तर पर पौड़ी गढ़वाल में व राज्य स्तर पर चकबंदी कार्यकर्त्ताओं का सम्मेलन करवाये। कुछ लोगों को प्रेरित किया, जिसकी देखा देखी कर कीर्ति बाग, ग्राम हुलाकीखाल व खिर्सू 1985 एवं प्रेम बिहार, ग्राम तछवाड़ एकेश्वर (1988) में दो व्यक्तियों ने चकबंदी की और सफलता मिली तो वे भी उनके भक्त हो गये। उनकी मांग को विकास खण्ड अधिकारी बुद्धिबल्लभ ड्यूंडी ने पहचाना और वे भी उनसे जुड़े। उनके सहयोग से वर्ष 1992 में गरीब जी ने 12 दिनों तक हिमाचल प्रदेश के शिमला व मंडी जिलों में हुई चकबंदी का अध्ययन किया। उनका यह आंदोलन उनके संयोजन में विभिन्न संगठनों के बैनरों के तहत चला, जिनमें अखिल भारतीय प्रगतिशील गढ़वाली संगठन दिल्ली 1977, पर्वतीय विकास संगठन, कल्जीखाल (1984), मजदूर कृषक संघ,

टिंचरी आंदोलन

स्वतन्त्रता प्राप्ति पर जब सारा देश अपने को सजाने संवारने तथा व्यवस्थित करने में जुटा था, वहीं पौड़ी में नए सिरे से एक आन्दोलन की सुगबुगाहाट सिर उठाने लगी थी। पौड़ी गढ़वाल कमीश्नरी का

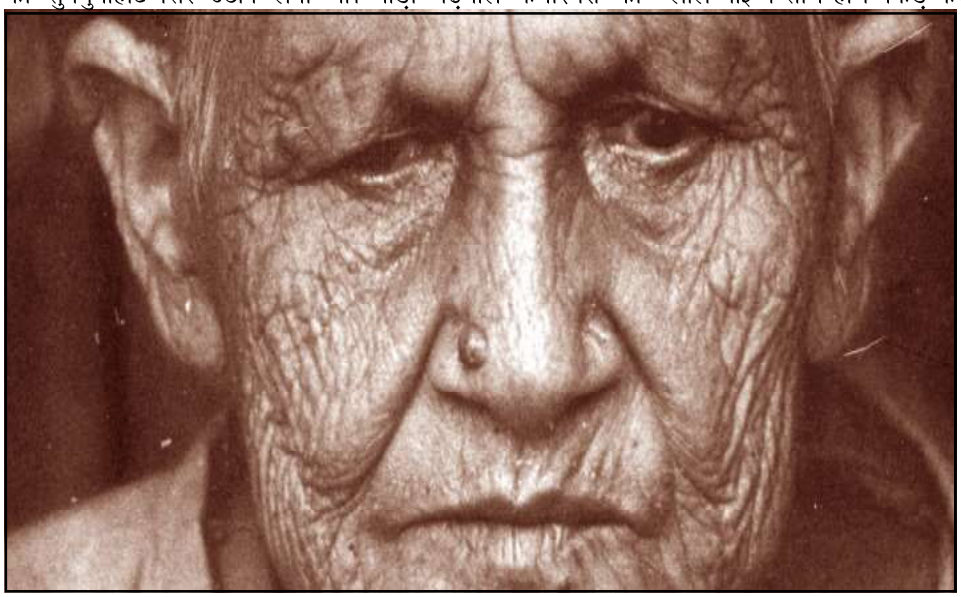

मुख्यालय है। सारी सुख-सुविधाओं के बावजूद पौड़ी की रूमानियत पर टिंचरी के कारण धब्बा लगा हुआ था, दिन ढ़लते ही शराबियों का हूजुम नगर की सड़कों पर दिखना आम था, और कहावत ही चल पड़ी कि ''सूर्य अस्त गढ़वाली मस्त''

एक दिन टिंचरी की दुकान से आदमी लड़खड़ाते हुए बाहर आकर सड़क पर हुड़दंग मचाने लगा और आने जाने वाली बहू बेटियों को भद्दे-भद्दे इशारे करने लगा। पास ही बैठी इच्छागिरी माई यह देख आग बबूला हो गई, वह सीधे ही डिप्टी कमिश्नर बागची के बंगले पर जा पहुंची। बागची बरामदे में बैठे कार्य कर रहे थे कि अचानक माई को आता देख रूक गये और माई का हालचाल पूछने लगे। गुस्से में लाल माई ने सीधे हाथ पकड़ कर कहा ''तू यहां बैठा है, चल मेरे साथ, देख तेरे राज में क्या अनर्थ हो रहा है'' माई को शांत करते हुए डिप्टी कमिश्नर बागची जीप द्वारा उस स्थान पर जा पहुंचे, जहां वह आदमी बेहोश पड़ा था। माई बोली देख लिया तूने क्या हो रहा है तेरे राज में लेकिन तू कुछ नहीं कर पायेगा। तू जा और सुन, मैं यह तमाशा और होने नहीं दूंगी। आग लगा दूंगी इस दुकान पर, मुझे जेल भेज देना, मैं जान दे दूंगी लेकिन अब टिंचरी नहीं बिकने दूंगी। डिप्टी कमिश्नर सकपका चुपचाप वहां से चले गये।

इधर माई ने टिंचरी की दुकान का दरवाजा खटखटाया लेकिन कोई प्रतिक्रिया न होने पर पत्थर से दरवाजा तोड़ डाला, अंदर शराब पी रहे आदमी दीवार फांद कर भाग गये। माई ने बाद में मिट्टी तेल छिड़क कर दुकान में आग लगा दी।

देखते-देखते ही दुकान जलकर भस्म हो गयी। इस घटना ने पौड़ी में शराब व्यवसाय को बंद होने पर मजबूर कर दिया था। इसी दिन से इच्छागिरी माई का नाम टिंचरी माई पड़ गया, और टिंचरी के खिलाफ उनका यह जनआन्दोलन टिंचरी आंदोलन के नाम से प्रसिद्ध हो गया। इच्छागिरि माई का असली नाम दीपा नौटियाल था।

कल्जीखाल 1986, पर्वतीय विकास चकबंदी समिति पौड़ी 1988, चकबन्दी परामर्श समिति, कोटद्वार 2000, मूल नागरिक किसान मंच, कल्जीखाल 2001 नाम प्रमुख है। गरीब ने जनजागरण के लिये आकाशवाणी केंद्र नजीबाबाद एवं पौड़ी से इस विषय पर अनेकों वार्तायें एवं विभिन्न पत्र पत्रिकाओं व स्मारिकाओं में सम्बंधित लेखों का प्रकाशन भी करवाया तो पुस्तिका उज्जवल भविष्य और हमारा दायित्व (वर्ष 1978), स्मारिका-गागर में सागर (वर्ष 1987), पुस्तक पर्वतीय विकास और चकबंदी (वर्ष 1990) का प्रकाशित की। गरीब जी ने चकबंदी की मांग को लेकर प्रधानमंत्री, मुख्यमंत्रियों, राज्य व केंद्रीय मंत्रियों, सांसदों, विध ायकों, योजना आयोग, सामाजिक कार्यकर्त्ताओं, बुद्धिजीवियों मीडिया के लोगों से सम्पर्क व पत्राचार किया। इसी कारण तत्कालीन सांसद बीसी खंडूरी 24 मार्च 1993 एवं राज्यसभा सदस्य मनोहरकान्त ध्यानी के द्वारा 1997 में सदन में प्रश्नकाल में चकबन्दी पर प्रश्न रखा।

इसके उपरान्त 27 सितम्बर, 1989 में उप्र सरकार द्वारा पर्वतीय क्षेत्रों में चकबंदी का निर्णय लिया। 1990 में चकबंदी आयुक्त द्वारा चकबंदी सर्वेक्षण दल भेजा गया। 1991 में पौड़ी एवं अल्मोड़ा में चकबंदी कार्यालयों की विधिवत स्थापना की गई। विभागीय उदासीनता के कारण यह कार्यालय लम्बे समय तक सोये रहे, जिससे सरकार को इनको बन्द करना पड़ा।

नवसृजित राज्य में पहली निर्वाचित सरकार में राजस्व मंत्री हरक सिंह रावत ने इस दिशा में पहल कर 2003 में चकबंदी परामर्श समिति का गठन करवाया व उनको 2003-2004 में सरकार की चकबन्दी परामर्श समिति में नामित सदस्य बनाया गया। लेकिन समिति की उदासीनता को देख गरीब ने समिति से इस्तीफा दे दिया। इसके बाद भाजपा राज में भी गरीब जी को गठित उच्चस्तरीय चकबंदी समिति में नामित सदस्य बनाया गया। लेकिन भाजपा ने भी कुछ नहीं किया। जबकि यह सत्य है कि पर्वतीय क्षेत्र में चहुंमुखी विकास करना है तो भूमि सुध ार व चकबन्दी ही एक मात्र विकल्प है।

उत्तराखण्ड राज्य आन्दोलन में जनपद गढ़वाल का योगदान

उत्तराखण्ड राज्य आन्दोलन तारीखें बोलती हैं

सन् 1938, 5 मई श्रीनगर गढ़वाल में कांग्रेस द्वारा पृथक राज्य की मांग की गयी। प्रताप सिंह नेगी की अध्यक्षता में सम्पन्न इस सम्मेलन में पंडित नेहरू तथा विजयलक्ष्मी पंडित ने कहा कि पर्वतीय अंचल के निवासियों को अपनी संस्कृति को समृद्ध बनाने का अधिकार मिलना चाहिए।

सन् 1946 में कुमाऊं के बद्रीदत्त पाण्डेय, पूर्ण चंद तिवारी सहित अनेक बुद्धिजीवियों ने पृथक प्रशासनिक इकाई बनाने की मांग उठायी, लेकिन शीर्ष नेताओं ने इसे अस्वीकार कर दिया।

सन् 1952 में भारतीय कम्युनिष्ट पार्टी ने पृथक राज्य आन्दोलन के प्रति पहाड़ में व्यापक आंदोलन छेड़ा। पेशावर कांड के नायक वीर चंद्र सिंह गढ़वाली ने पं. नेहरू के समक्ष राज्य योजना का प्रारूप रखा।

22 मई 1955 को पर्वतीय जन विकास समिति की दिल्ली सभा में उत्तराखण्ड क्षेत्र को हिमाचल प्रदेश (प्रस्तावित) में मिलाकर वृहद हिमाचल प्रदेश बनाने की मांग की गयी।

अगस्त 1966 में तत्कालीन सांसद व पूर्व टिहरी नरेश महाराजा मानवेंद्र शाह तथा पर्वतीय जनता ने पृथक राज्य प्राप्ति हेतु प्रधानमंत्री को ज्ञापन भेजा।

10-11 जून 1967 को रामनगर कांग्रेस सम्मेलन में पहाड़ के विकास पर गंभीरता से चिंतन किया गया तथा तत्कालीन राज्य सरकार को इसके लिए ज्ञापन

पृथक राज्य उत्तराखंड का आंदोलन में पौड़ी गढ़वाल का योगदान

➔ हर निर्णायक आन्दोलन की तह में शोषण और अवहेलना की ठोस परत और अन्तरात्मा की आवाज होती है। इस प्रकार के आन्दोलन एक दिन में परवान नहीं चढ़ते है। उसके समाज के जो लोग चिन्तित की स्थिति में आते रहते है वे उस शोषण और अवहेलना के प्रतिकार के लिए अपनी-अपनी सोच के अनुरूप व्याख्या कर निर्णय देते रहते हैं। इसमें समाज के चिन्तनशील कुछ लोग वर्तमान व्यवस्था में ही रहकर उसके निदान की बात करते हैं तो कुछ व्यवस्था परिवर्तन जरूरी समझते हैं। उत्तराखंड राज्य निर्माण की मांग के लिए भी ऐसा ही हुआ। आजादी से पहले भी कुछ लोगों ने कांग्रेस सम्मेलनों के द्वारा पृथक राज्य उत्तराखंड की मांग अंग्रेजों के सामने रखने की बात की तो कुछ ने इसे तब सिरे से खारिज कर दिया। पृथक राज्य की मांग के समर्थक उत्तराखंडी समाज के चिन्तक आजादी के बाद भी लगातार समय-समय पर अपनी मांग को सरकार के पास पहुंचाते रहे, किन्तु उनकी मांग तब नक्कारखाने में तोते की आवाज साबित होती रही, फिर भी राज्य समर्थकों ने अपनी मांग को छोड़ा नहीं और उनमें से कुछ ने अपने आपको इसके लिए समर्पित करते हुए क्षेत्रीय दल की स्थापना तक कर डाली। 1980 का दशक पृथक उत्तराखंड राज्य निर्माण के लिए काफी महत्वपूर्ण रहा है। इस दशक के अन्त में राष्ट्रीय दल भाजपा ने इस मांग को अपने घोषणा पत्र में शामिल कर दिया। और संघर्ष करने लगी। अब सौभाग्यवश एक राष्ट्रीय दल व क्षेत्रीय दल इस मांग के लिए आंदोलन करने लगे, लेकिन दुखद स्थिति यह रही की दोनों दलों की राजनैतिक अपेक्षाएं भी जुदा-जुदा थी। इसलिए कोई बड़ा आंदोलन नहीं हो पाया, फिर भी यह बात सामने आ गई कि इन दोनों दलों के द्वारा पृथक राज्य उत्तराखण्ड/ उत्तरांचल की मांग के लिए किए गए आन्दोलनों से उत्तराखंडी जनमानस में राज्य निर्माण का औचित्य समझ में आ गया।

दोनों दलों के संघर्ष से राज्य निर्माण के लिए तैयार उत्तराखंडी जनमानस ने इसका प्रमाण 1994 में तब दे दिया जब केवल तीन मांगों पंचायतों के परिसीमन, शिक्षण संस्थानों व नौकरियों में ओबीसी आरक्षण लागू न करने व बाहरी नियुक्तियों पर के लिए पौड़ी में उत्तराखंड क्रांति दल के आमरण अनशन को प्रशासन ने कुचल दिया था। 7 अगस्त 1994 की रात को हुई कार्यवाही से पूरा उत्तराखंड धीरे-धीरे उबलने लगा और सितम्बर, अक्टूबर में यह एक स्वत: स्फूर्त आम जनमानस का आंदोलन बनकर पुरानी मांगे भूलकर राज्य प्राप्ति की मांग करने लगा। आंदोलन कैसे-कब हुए इसका विस्तृत विवरण आगे देने की कोशिश की जा रही है, लेकिन यहां यह कहा जाना समीचीन है कि इस राज्य प्राप्ति के आंदोनलन को दो भागों में बांटा जाना चाहिए। राज्य प्राप्ति का 1994 का स्वत: स्फूर्त आंदोलन के लिए 50 वर्ष लगे हैं और इन 50 वर्षो में पृथक राज्य के लिए मानस तैयार करने वालों ने भी अविस्मरणीय त्याग और बलिदान किया है। इसलिए इनको भी सम्मान देना हमारा कर्तव्य बनता है।

दिया गया।

14-15 अक्टूबर 1967 को नई दिल्ली में उत्तराखण्ड विकास संगोष्ठी का आयोजन हिमालयी क्षेत्र के विकास के परिपेक्ष्य में आयोजित किया गया। सन 1968 में योजना आयोग ने पर्वतीय नियोजन प्रकोष्ठ खोला, लोकसभा में मानवेंद्र शाह के प्रस्ताव के आधार पर पर्वतीय क्षेत्र के लिए पृथक नियोजन की संस्तुति।

सन् 1970 में पीसी जोशी ने कुमाऊं राष्ट्रीय मोर्चे का गठन किया।

सन् 1971 में राजा मानवेंद्र शाह, इंद्रमणि बड़ोनी, लक्ष्मण सिंह अधिकारी और नरेंद्र सिंह बिष्ट ने आंदोलन को बढ़ाने का भरसक प्रयास किया।

सन् 1972 में उत्तराखण्ड परिषद् के कार्यकर्त्ताओं ने विरोध स्वरूप वोट क्लब पर गिरफ्तारी दी और 21 लोग गिरफ्तार कर दिये गये।

सन् 1972 में नैनीताल नगर में उत्तरांचल परिषद का गठन किया गया।

सन् 1978 में उत्तराखंड युवा मोर्चे ने चमोली के विधायक प्रताप सिंह पुष्पवाण के नेतृत्व में बद्रीनाथ से दिल्ली वोट क्लब तक पदयात्रा कर संसद घेराव किया।

सन् 1979 में टिहरी के तत्कालीन सांसद त्रेपन सिंह नेगी के नेतृत्व में दिल्ली में पंद्रह हजार से अधिक पहाड़वासियों ने भारी वर्षा के बीच सफलतापूर्वक मार्च किया।

24 जुलाई को इसी वर्ष उत्तराखण्ड क्रांति दल का गठन डा. देवी दत्त पंत की अध्यक्षता में मसूरी में किया गया। यह राज्य का प्रथम क्षेत्रीय दल था, जिसकी अवधारणा में उत्तराखण्ड की मांग ही प्रमुख थी।

सन् 1980 में पहाड़वासियों ने राज्य के प्रति आंदोलनात्मक जागरूकता के लिए उत्तराखंड

1994 के स्वत: स्फूर्त आंदोलन में पौड़ी गढ़वाल के आगाज को सलाम

11 **जुलाय** 1994 **स्थान कलेक्ट्रेट पौड़ी**

ग्राम पंचायतों की परिसीमन, स्थानीय नौकरियों और शिक्षण प्रशिक्षण संस्थानों में 27 फीसदी आरक्षण के विरोध में उत्तराखंड क्रांति दल के नेतृत्व में एक से डेढ़ हजार का जनसैलाब ने प्रदर्शन करते हुए कलेक्ट्रेट पौड़ी में धरना दिया, 5 घंटे तक काम काज ठप्प, उक्रांद नेता दिवाकर भट्ट ने नारा दिया ''अब समय आ गया कि करो या मरो''

13 **जुलाय** 1994 **स्थान श्रीनगर**

प्रशिक्षित बेरोजगारों ने ओबीसी आरक्षण के तहत बाहरी व्यक्तियों की नियुक्ति के लिए खिलाफ 2 घंटे का सांकेतिक चक्का जाम किया। इसके बाद मंडलीय कार्यकारिणी का गठन कर मदन सिंह भंडारी को अध्यक्ष, द्वारिका प्रसाद सती व मुकेश कुमार नौटियाल को उपाध्यक्ष, सोहन सिंह नेगी सचिव, राकेश कुमार भंडारी व कु0 सुधा असवाल कोषाध्यक्ष चुने गये।

19 **जुलाय** 1994 **स्थान कोटद्वार/पौड़ी**

आरक्षण के विरोध में छात्रनेताओं द्वारा एक दिन के लिए क्षेत्र के सभी शिक्षण संस्थाओं को बन्द सफल, इस बन्द का नेतृत्व छात्र संघ अध्यक्ष दीवान सिंह रावत व सचिव राजीव सेमवाल ने किया। 25 जुलाय से पौड़ी में उक्त मांगों को लेकर उक्रांद का होने वाला आमरण अनशन 2 अगस्त तक के लिए स्थागित।

26 **जुलाय** 1994 **स्थान पौड़ी**

जनपद पौड़ी गढ़वाल में 27 प्रतिशत ओबीसी आरक्षण के तहत हो रही उर्दू शिक्षकों की भर्ती को आए अभ्यर्थियों को आंदोलित युवाओं ने मारपीट कर भगा दिया और बेसिक शिक्षण अधिकारी के कार्यालय में तोड़फोड़ कर टेलीफोन की तार काट दी। इस आंदोलन का नेतृत्व मोर्चा अध्यक्ष विनय शर्मा, कमल किशोर रावत, मेहरबान आदि द्वारा किया गया।

30 **जुलाय स्थान कोटद्वार**

विचार गोष्ठी

ऐसा नहीं था कि बिना विचार विमर्श के 27 प्रतिशत ओबीसी आरक्षण नीति का एकाएक विरोध किया गया होगा। इसके लिए कोटद्वार में एक विचार गोष्ठी का आयोजन महाविद्यालय के छात्रों द्वारा किया गया। गोष्ठी का संचालन पदमेश बुड़ाकोटी, अध्यक्षता पूर्व पालिकाध्यक्ष शशिधर भट्ट व मुख्य वक्ता क्षेत्रीय विधायक सुरेंद्र सिंह नेगी थे। गोष्ठी में आरक्षण को गैर जरूरी बताकर संघर्ष की बात कही गई।

2 **अगस्त: स्थान पौड़ी**

अपने घोषित कार्यक्रम के तहत उत्तराखंड क्रांति दल ने पंचायत परिसीमन, बाहरी नियुक्तियों तथा आरक्षण नीति के विरोध में आमरण अनशन शुरू किया। दल के संरक्षक इंद्रमणि बड़ूनी के नेतृत्व में अन्य सात नेताओं पान सिंह रावत, देघाट, रतनमणी भट्ट, मुसमोला (टिहरी) प्रेम नौड़ियाल, पिलाखी टिहरी, विशन पंवार, वासवानंद पुरोहित, विष्णुदत्त बिंजोला (पौड़ी गढ़वाल) व दौलत राम (ढाईज्यूली) ने आमरण अनशन शुरू किया। इस अनशन को छात्र संगठनों, युवाओं तथा ग्रामीण क्षेत्र से व्यापक समर्थन मिला। इस अवसर पर जनपद गढ़वाल की समस्त शैक्षणिक संस्थाए बंद रही।

3 **अगस्त कोटद्वार/ पौड़ी**

आरक्षण नीति का विरोध कर सम्पूर्ण उत्तराखंड को आरक्षण की परिधि में लेने की मांग को लेकर कोटद्वार व पौड़ी में सभी शिक्षण संस्थाएं दूसरे दिन भी बन्द रही।

पौड़ी में उक्रांद के आमरण अनशन स्थल पर जाकर छात्र नेताओं ने युवाओं के भविष्य को लेकर

संघर्ष वाहिनी का गठन किया।

2 अप्रैल 1980 में उक्रांद के घोषणा पत्र में राज्य की मांग को प्रमुखता से रखा गया।

1982 में प्रधानमंत्री इंदिरा गांधी द्वारा बद्रीनाथ धाम में उक्रांद के प्रतिनिधियों से वार्ता।

20 जून 1983 में दिल्ली में चौधरी चरण सिंह ने पृथक उत्तराखण्ड की मांग को पूरे सिरे से नकार दिया।

1984 में भारतीय कम्युनिस्ट पार्टी के सहयोग से आल इंडिया स्टूडेन्ट फैडरेशन (आइसा) ने सितम्बर अक्टूबर माह में पृथक पर्वतीय राज्य की मांग को लेकर गढ़वाल में 900 किमी. लम्बी साइकिल यात्रा का आयोजन किया।

23 अप्रैल 1985 में प्रधानमंत्री राजीव गांधी की नैनीताल यात्रा पर उक्रांद द्वारा नैनीताल में प्रदर्शन।

23 फरवरी 1988 में उत्तराखंड में उक्रांद ने राज्य आंदोलन के दूसरे चरण में गिरफ्तारियां दी।

21 जून 1988 में अल्मोड़ा से उत्तराखण्ड संघर्ष वाहिनी का भी आंदोलन में कूदने का ऐलान।

12, 13 सितम्बर 1988 में उक्रांद द्वारा 36 घंटे बंद और चक्का जाम किया गया तथा जगह-जगह प्रदर्शन किये गये।

23 अक्टूबर को दिल्ली में विश्व प्रसिद्ध हिमालयन कार रैली के विरूद्ध प्रदर्शन, पुलिस द्वारा लाठीचार्ज।

सन् 1988 में चुनाव के दौरान भाजपा के शीर्ष नेता लालकृष्ण आडवाणी द्वारा अलग राज्य उत्तराखंड की मांग को गलत ठहराया।

13 फरवरी 1991 उक्रांद का उत्तराखंड में बंद व चक्का जाम पूर्णतया सफल रहा।

5 मार्च 1992 उप्र की भाजपा सरकार ने उत्तरांचल राज्य के संदर्भ में पूर्ण ब्यौरा केंद्र को पोषित किया। सांसद भुवन चंद्र खण्डूडी और राज्यसभा सदस्य

चलाए जा रहे आंदोलन को हर तरह का सहयोग देने की बात कही।

4 अगस्तः जनपद गढ़वाल

आंदोलन ने पकड़ी तेजी

आरक्षण नीति का विरोध अब धीरे-धीरे बढ़ने लगा। तीसरे दिन जहां कोटद्वार-दुगड्डा बाजार बन्द रहे। वही लैंसडौन सतपुली में शिक्षण संस्थाएं बन्द रही। पौड़ी में आमरण अनशन स्थल पर समर्थकों की संख्या बढ़ने लगी।

5 अगस्त पौड़ी

जिले के स्कूल कालेज बन्दी की घोषणा

आरक्षण विरोधी आंदोलन अब धीरे-धीरे उत्तेजना की ओर बढ़ने लगा था, जहां-तहां शिक्षण संस्थाएं बन्द की जा रही थी, विस्फोटक स्थिति को देखकर प्रशासन ने पूरे जिले के सभी शिक्षण संस्थाओं को 10 अगस्त को बन्द करने की घोषणा कर दी। फिर भी पौड़ी में आमरण स्थल पर समर्थकों की भीड़ लगी, कोटद्वार में शिक्षण संस्थाएं पांचवें दिन भी बन्द रही।

डीएम कार्यालय की दीवार गिराई।

आंदोलन के चलते आमरण अनशन स्थल से सटे डीएम कार्यालय में रात को एक विस्फोट किया गया जिसमें उसकी चाहरदीवारों जमीदोज हो गयी। लेकिन प्रशासन ने इसे सामान्य बताया।

6 अगस्त पौड़ी

अनशनकारियों की हालत बिगड़ी

आमरण अनशन पर बैठे बुजुर्ग लोगों का स्वास्थ्य आज चौथे दिन बिगड़ने लगा, सरकारी मेडिकल रिपोर्ट में इस बात की पुष्टि हो गयी थी। पुलिस व प्रशासन ने इसी रात अनशनकारियों को उठाने की योजना बना दी थी। जिसकी भनक उन्हें लग गई और पौड़ी की जनता रात को इनके पहरे पर लग गई। जिससे प्रशासन को पीछे हटना पड़ा।

7 अगस्त पौड़ी

स्वामीराम पहुंचे अनशनकारियों के बीच

योग गुरू व हिमालय हॉस्पीटल व मेडिकल कालेज के संस्थापक स्वामी ने आंदोलन को समाप्त करने व मांगे माने जाने के लिए तत्कालीन मुख्यमंत्री मुलायम सिंह यादव से बात की और उनके दूत के रूप में आमरण अनशनकारियों के बीच पहुंचे। वहां स्वामी राम व इंद्रमणि बड़ूनी के बीच हुई गुप्त वार्ता का तब ब्यौरा नहीं मिला किन्तु माइक पर स्वामी राम ने मांगे माने जाने की बात कही, लेकिन तब भी आंदोलन स्थगित नहीं हुआ। स्वामी राम ग्राम तोली, पौड़ी गढ़वाल के निवासी थे।

आमरण अनशनकारियों को जबरिया उठाया

इसी 7 अगस्त की आधी रात को प्रशासन ने अपनी योजना के तहत 2 अगस्त से अनशन पर बैठे उक्रांद नेताओं को लाठीडंडों के बल पर उठा दिया। इस दौरान वहां मौजूद समर्थकों व अनशनकारियों पर भारी लाठीचार्ज किया गया।

8 अगस्त पौड़ी

तोड़फोड़, लाठीचार्ज, हवाई फायरिंग

7 अगस्त की रात बर्बरता पूर्वक आमरण अनशनकारियों को उठाए जाने पर पौड़ी के बच्चे बूढ़े और नौजवान महिलाओं में भारी आक्रोश फैल गया। शिव का तांडव व काली का प्रचण्ड स्वरूप कलेक्ट्रेट पर साफ-साफ दिखाई दे रहा था। कलेक्ट्रेट में भारी तोड़फोड़, सरकारी गाडियों को आग

सुषमा स्वराज द्वारा क्रमशः लोकसभा, राज्यसभा में पृथक राज्य की मांग उठायी।

15 फरवरी 1992 में उक्रांद ने चंद्रनगर गैरसैंण को प्रस्तावित उत्तराखंड राज्य की राजधानी घोषित की।

27 फरवरी 1993 में मुक्ति मोर्चे द्वारा उत्तराखंड बंद व चक्का जाम का आयोजन।

30 अप्रैल 1993 उत्तरांचल प्रदेश संघर्ष समिति ने दिल्ली के जंतर मंतर से रैली निकाली।

सन् 1993 में तत्कालीन मुलायम सरकार ने पृथक उत्तराखंड राज्य निर्माण सम्बन्धी मंत्री रमाशंकर कौशिक की अध्यक्षता में एक समिति का गठन किया।

24 अप्रैल 1994 को उत्तराखण्ड संयुक्त मोर्चे ने दिल्ली में विशाल रैली आयोजित की।

5 मई 1994 को कौशिक समिति ने राज्य गठन पर अपनी रिपोर्ट प्रस्तुत की और पर्वतीय राज्य की स्थाई राजधानी हेतु गैरसैंण नगर को प्रस्तावित राजधानी बनाने हेतु भी पेशकश की।

8 अगस्त 94 को 27 प्रतिशत आरक्षण के विरोध में पौड़ी में उक्रांद कार्यकर्त्ताओं पर पुलिस द्वारा लाठीचार्ज।

15 अगस्त को नैनीताल में उक्रांद अध्यक्ष काशीसिंह ऐरी का राज्य मांग को लेकर आमरण अनशन शुरू।

23 अगस्त को उत्तराखंड बंद पूर्णत सफल।

24 अगस्त उप्र सरकार ने कौशिक की अनुशंसा पर उत्तराखंड राज्य गठन प्रस्ताव पारित कर केंद्र सरकार को भेजा।

29 अगस्त को उत्तराखंड संयुक्त संघर्ष समिति गठित।

1 सितम्बर को खटीमा में राज्य आंदोलनकारियों की रैली पर पुलिस की गोलीबारी से सात शहीद।

2 सितम्बर को खटीमा गोलीकांड

के हवाले कर थाने पर पथराव किया गया। पुलिस ने जनाक्रोश को दबाने के लिए लाठीचार्ज, आंसू गैस व कई राउण्ड हवाई फायर किए, पानी बौछार के लिए आई फायर बिग्रेड की गाड़ी पलट गई। उसके चालक गुरंग की घटनास्थल पर मृत्यु हो गयी। इस दौरान अनेक आंदोलनकारी जख्मी हो गए।

समस्त जनपद में बंद व चक्काजाम

पौड़ी की घटना के विरोध में सम्पूर्ण जनपद में आक्रोश बढ़ गया। कोटद्वार में बाजार बन्द कर चक्काजाम किया गया। इंद्रमणि बड़ूनी व रतनमणी भट्ट को मेरठ ले जा रही एम्बुलेंस को रोकने के लिए जत्था तैयार हुआ किन्तु उन्हें सिद्धबली, सनेह और पाखरो के रास्ते मेरठ ले जाया गया।

9 **अगस्त गढ़वाल**

आज सम्पूर्ण जनपद में आंदोलन ने और विस्तार ले लिया। पूरे जिले में पहले से ही बन्द शिक्षण संस्थाओं के छात्राओं और युवाओं ने पूरे जनपद में जोरदार प्रदर्शन , बन्द चक्काजाम किया। पौड़ी, श्रीनगर, सतपुली, गुमखाल, लैंसडौन, कोटद्वार में सभी सरकारी कार्यालयों सहित बाजार अभूतपूर्व बन्द रहे। पौड़ी में काशीसिंह ऐरी, उक्रांद फील्ड मार्सल दिवाकर भट्ट, विजेंद्र सिंह रावत व बाबा बमराड़ा ने जनसभा को सम्बोधित किया। लैंसडौन में छात्रनेता कु. भावना वर्मा व गीता पुण्डीर ने क्रमिक अनशन शुरू किया। कोटद्वार में अनेक नेताओं ने अपनी-अपनी पार्टी से इस्तीफा दिया। पौड़ी में उक्रांद का दूसरा जत्था अनशन पर बैठा जिसमें केदार सिंह बिष्ट, बिशम्बरदत्त डिमरी, राम सिंह पंवार, नंदन सिंह रावत, अमर सिंह चौहान, जगदीश प्रसाद बड़थ्वाल थे।

10 **अगस्त गढ़वाल जनपद**

शिक्षण संस्थाओं की बंदी १३ तक बढ़ी।

जनपद में आरक्षण विरोधी आंदोलन के उग्र होने के कारण प्रशासन ने जनपद के समस्त शिक्षण संस्थाओं की बंदी 10 से बढ़ाकर 13 तक कर दी। इसके बावजूद जनपद में बन्द चक्काजाम व प्रदर्शनों का दौर उग्र होने लगा।

आन्दोलन ग्रामीण क्षेत्रों तक भी पहुंचने लगा। द्वारीखाल, जयहरीखाल, लैंसडौन में भारी तोड़फोड़ की गई। एसडीएम पर पथराव किया गया। कोटद्वार में अनशन शुरू।

11 **अगस्त गढ़वाल**

पूरा जनपद आन्दोलनमय, प्रदर्शन व चक्काजाम जारी, जिलाधिकारी ने शंति की अपील, लैंसडौन में पीएसी तैनात, पौड़ी में दुकाने फूंकी, पौड़ी में अनशन जारी।

12 **अगस्त दुगड्डा**

दुगड्डा में पौड़ी प्रदर्शन को जा रही भाजपाईयों की दो बसों को प्रदर्शनकारियों ने वापस भेज दिया तथा लोनिवि के बंगले में बैठे भाजपा सांसद खंडूडी का घेराव कर बाजार लाए और खेद प्रकट करने पर जाने दिया।

लैंसडौन में महिलाओं का प्रदर्शन हुआ। दुगड्डा को छोड़कर शेष सभी बाजार खुले।

14 **अगस्त पौड़ी**

आरक्षण आंदोलन में पृथक राज्य की मांग

आरक्षण नीति, ग्राम पंचायतों के परिसीमन व बाहरी नियुक्तियों के विरोध में चल रहे आन्दोलन में पृथक राज्य की मांग ने जन्म ले लिया। अब आंदोलनकारी मान बैठे थे कि इस सब समस्याओं का हल केवल पृथक राज्य ही है।

16 **अगस्त पौड़ी/ कोटद्वार**

के विरोध में मसूरी में हुए प्रदर्शन पर भी पुलिस की गोलियों से दो महिलाओं समेत आठ लोग शहीद।

11 सितम्बर को लखनऊ में प्रवासी उत्तराखंडियों ने हुंकार रैली आयोजित कर गिरफ्तारी दी।

2 अक्टूबर को दिल्ली जा रहे हजारों निहत्थे उत्तराखंडियों पर मुजफ्फनगर में पुलिस ने गोलियां दागी, लाठीचार्ज किया और महिलाओं के साथ भ्रद्रता की। 6 शहीद, हजारा

घायल और सैंकड़ों लापता। इस घटना के विरोध में सम्पूर्ण उत्तराखंड में विरोध प्रदर्शन शुरू। हल्द्वानी, ऊखीमठ, अगस्त्यमुनि, देहरादून समेत राज्य के कई क्षेत्रों में भड़के दंगे के कारण कर्फ्यू लगा। इसी दिन दिल्ली में कई जगहों पर उत्तराखंडियों ने धरना प्रदर्शन कर घटना को राष्ट्रपिता महात्मा गांधी के अहिंसा दिवस का अपमान कर कड़ी निंदा की।

3 अक्टूबर को देहरादून, कोटद्वार और नैनीताल में विरोध प्रदर्शन के दौरान पुलिस की गोलीबारी से सात लोग शहीद।

10 नवम्बर 1995 को श्रीयंत्र टापू, श्रीनगर में उक्रांद के फील्ड मार्शल दिवाकर भट्ट के आमरण अनशन के दौरान पुलिस ने धावा बोलकर आंदोलनकारी यशोधर बेंजवाल और राजेश रावत की निर्ममतापूर्वक हत्या कर दी।

15 अगस्त 1996 को लालकिले से प्रधानमंत्री एचडी देवगौड़ा ने उत्तराखंड राज्य निर्माण की घोषणा की।

1998 को राष्ट्रपति द्वारा उत्तराखंड राज्य संबंधी विधेयक उप्र विधानसभा को भेजा।

24 जुलाई को 2000 को उत्तराखंड राज्य निर्माण पर हो रही देर पर सम्पूर्ण उत्तराखंड में बंद आयोजित।

27 जुलाई को उत्तरप्रदेश पुर्नगठन विधेयक 2000 लोकसभा में

आंदोलन की मांगों के समर्थन में तत्कालीन चार विधायकों हरक सिंह रावत, रमेश पोखरियाल निशंक, सुरेंद्र सिंह नेगी व पृथ्वी पाल सिंह चौहान ने पौड़ी में उपवास रखा। कोटद्वार में एडवोकेट सुभाष रावत का अनशन तीसरे दिन जारी रहा। उधर कोटद्वार परगना मजिस्ट्रेट ने कोटद्वार भाबर की सभी शिक्षण संस्थाएं अनिश्चितकाल तक के लिए बन्द करा दी।

18 अगस्त कोटद्वार

उत्तराखंड क्रांतिदल ने आमरण स्थल से अपना बैनर हटाकर नागरिक मंच के बैनर तले आने की घोषणा की।

पौड़ी: पौड़ी में विश्व विद्यालय परिसर के प्राध्यापकों ने भी आंदोलन को समर्थन देते हुए हरक सिंह रावत के नेतृत्व में मौन जुलूस निकाला।

सतपुली: नयारघाटी छात्रसंघ के बैनर तले चल रहे क्रमिक अनशन आज 8 वें दिन भी जारी रहा। धरने का नेतृत्व पुष्पेंद्र राणा ने किया।

19 **अगस्त पौड़ी**

जनपद के समस्त स्कूल कालेजों को जिलाधिकारी ने 27 अगस्त के लिए बन्द करने का आदेश जारी किया। कोटद्वार में बंद व चक्काजाम रहा।

23 **अगस्त गढ़वाल**

उत्तराखंड क्रांति दल द्वारा घोषित उत्तराखंड बंद ऐतिहासिक रहा। जनपद गढ़वाल के सभी बाजार, सरकारी कार्यालय, कोटद्वार में 24 घंटे तक रेल का चक्काजाम, श्रीनगर में हेमकुण्ड जा रहे यात्रियों से झड़प।

24 **अगस्त**

पौड़ी में फिर बवाल

पौड़ी में आमरण अनशन के तीसरे जत्थे को उठा देने से पुन: बवाल हुआ। बाजार जिला व मण्डल स्तरीय सभी कार्यालयों को बन्द करा दिया। पुन: पांच लोग आमरण अनशन पर बैठ गए। कोटद्वार में छात्रो, जनता व राज्यकर्मियों ने भरी हुंकार, मुलायम के लिए भरी आत्मघाती दस्ते की हुंकार। द्वारीखाल में भी अनशन शुरू, रमेश शर्मा अनशन पर बैठे।

27 **अगस्त कोटद्वार पौड़ी**

पूर्व सैनिकों ने भरी हुंकार

आंदोलन उत्तराखंड राज्य की मांग में परिवर्तित होने पर पूर्व सैनिक व अर्द्धसैनिकों ने भी संघर्ष का बिगुल बजा दिया। कोटद्वार में गौरव सेनानियों ने मेजर डीडीए रावत व कैप्टेन आनन्द सिंह बिष्ट के नेतृत्व में प्रदर्शन समर्थन की घोषणा की।

पौड़ी: में पूर्व सैनिकों ने अपने तगमों के साथ प्रदर्शन किया। इस सभा की अध्यक्षता कर्नल एसएस रावत ने की। इस अवसर पर 80 वर्षीय ब्रिगेडियर लक्ष्मण सिंह भी मौजूद थे।

थलीसैंण: में कैन्यूर, कपरोली, ऐंडी, पोखर, पानऊ के हजारों लोगों ने जुलूस प्रदर्शन कर आंदोलन को ताकत दी।

2 **सितम्बर पौड़ी**

पूर्व घोषित कार्यक्रम के तहत आज पौड़ी में उमड़ा छात्र और जनता का भारी सैलाब हतप्रभ कर देने वाला था। 80 हजार के आंकड़े को पार गया था। किन्तु शांति बनी रही। खटीमा कांड के विरोध में पूरा जनपद बन्द रहा और उत्तेजना बनी रही।

3 **सितम्बर:- जनपद**

प्रस्तुत।

1 अगस्त को उत्तराचंल विधेयक पारित।

10 अगस्त को राज्यसभा में पुर्नगठन विधेयक को मंजूरी।

9 नवम्बर 2000 को देश के 29 वें राज्य के रूप में उत्तरांचल का उदय, प्रदेश के प्रथम मुख्यमंत्री के रूप में भाजपा के विधान परिषद् सदस्य नित्यानंद स्वामी को शपथ दिलायी गयी।

उत्तराखंड राज्य के अमर शहीद।

1 **सितम्बर** 1994 **खटीमा**

2. श्री धर्मानंद भट्ट, ग्राम उमरकला, पो.आ. खटीमा (सुपुत्र श्री प्रताप चंद) 3. श्री गोपीचंद, चांद कालोनी, रतनपुर ढंकोट, खटीमा, (सुपुत्र श्री प्रताप चंद) 4. श्री परमजीत सिंह, राजीव नगर, खटीमा उधमसिंह नगर (सुपुत्र श्री बाबूराम) 5. श्री राम लाल, नवाबगंज, जिला बरेली, 6. श्री भुवन सिंह। 7. श्री सलीम, खटीमा, उधमसिंहनगर। 8. श्री भगवान सिंह सिरोली, खटीमा। 9. श्री प्रताप सिंह खटीमा उध मसिंहनगर

2 **सितम्बर** 1994 **मसूरी**

10. श्रीमती बेलमती चौहान, ग्राम खलोन, पट्टी धार अकोदया, टिहरी गढ़वाल (धर्मपत्नी श्री ध र्म सिंह चौहान) 11. श्रीमती हंसा धनाई, ग्राम बंगढ्डारा, पट्टी धारा मंडल, टिहरी गढ़वाल ध र्मपत्नी श्री भगवान सिंह धनाई 12. श्री राय सिंह बंगारी ग्राम तुनेटा पूर्वी भरदार, टिहरी (अब रूद्रप्रयाग) गढ़वाल। 13. श्री ध नपत सिंह ग्राम गगवाड़ा, पट्टी गगवाडस्यूँ पौड़ी गढ़वाल। 14. अमर शहीद श्री मदनमोहन ममगाई, हमर एंड कम्पनी कुलड़ी, मसूरी जिला देहरादून 15. श्री बलवीर सिंह नेगी, लक्ष्मी मिष्ठान भंडार लायब्रेरी चौक, मसूरी देहरादून 16. श्री जेठू सिंह बाटाघाट मसूरी।

मसूरी आंदोलनकारियों की नृशंस हत्या के विरोध में संपूर्ण जनपद गढ़वाल में बंद का आयोजन सफल रहा। जगह-जगह जुलूस प्रदर्शनों का दौर बना रहा।

4 **सितम्बरः- कोटद्वार**

गढ़वाल में आज सभी स्थानों में प्रदर्शनों का दौर काफी हल्का रहा। सभी स्थानों पर जनता ने जुलूस निकाले कल जैसा उत्साह नहीं था लेकिन क्रमिक अनशन बदस्तूर जारी रहा।

खटीमा व मसूरी में पुलिस द्वारा आंदोलनकारियों की नृशंस हत्या के विरोध में व उत्तराखंड राज्य की मांग को लेकर नन्हें नागरिकों ने जुलूस निकाला।

5 **सितम्बरः- कोटद्वार**

कोटद्वार में प्रदर्शन के दौरान जुलूस द्वारा थाने में पथराव व पटाखे फेंके गये। जिससे पुलिस बल में भारी रोष उत्पन्न हो गया तथा स्थिति तनावपूर्ण हो गयी।

6 **सितम्बरः- कोटद्वार**

छात्रों ने आज नाकेबंदी प्रारंभ कर दी है। इसी क्रम में आज आरक्षण विरोधी छात्र मोर्चे ने वन निगम के कौड़िया डिपों में लाखों रूपये की नीलामी को रोक दिया। रेत, बजरी, पत्थरों के ट्रकों को बाहर नहीं जाने दिया।

7 **सितम्बरः- पौड़ी**

पौड़ी में आरक्षण के विरोध व पृथक राज्य की मांग को लेकर जारी धरने में दो दिनों से जमें 82 वर्षीय माधोसिंह बिष्ट का कहना है कि उत्तराखंड प्राप्ति के लिए वे अपनी बलि देने को भी तैयार है।

पृथक राज्य एवं आरक्षण के मुद्दे का अभी तक कोई समाधान न होने के कारण छात्र संगठनों ने आंदोलन की धार बदलने का ऐलान किया। छात्र संघर्ष समिति द्वारा 48 घंटे का उत्तराखण्ड बंद का आह्वान किया गया जो आज रात से प्रारंभ होगा।

सतपुली में कर्मचारियों ने मशाल जुलूस निकाल कर प्रदर्शन किया।

8 **सितम्बरः- कोटद्वार**

सरकारी भवनों को स्वघोषित उत्तराखण्ड राज्य के कार्यालयों में तब्दील करने के लिए सिंचाई विभाग के कोटद्वार स्थित निरीक्षण भवन पर उक्रांद ने कार्यालय खोल दिया। उद्घाटन उक्रांद नेता नंदन सिंह रावत ने किया, इसका कब्जा एस-ई-मित्तल ने दिया।

इसी तरह पूरे जिले में सरकारी कार्यालयों पर आंदोलनकारियों ने कब्जा करना शुरू कर दिया था।

9 **सितम्बरः-पौड़ी**

48 घंटे के बंद के दौरान पौड़ी में उपकृषि निदेशक के कार्यालय में आगजनी हुई और कोटद्वार व पौड़ी के थानों में पथराव हुआ। पूरे जिले में बंद सफल रहा।

12 **सितम्बर : पौड़ी**

आयुक्त कार्यालय में भी तालाबंदी कर दी गई। पौड़ी, कोटद्वार, लैंसडौन, श्रीनगर, गुमखाल, धोबीघाट, जयहरीखाल व पौखाल में धरना प्रदर्शन जारी रहे।

13 **सितम्बर : जनपद**

आरक्षण के समर्थन में समाजवादी पार्टी व बहुजन समाज पार्टी द्वारा आज प्रदेश बंद का आहवान किया गया था किन्तु वह एकदम विफल रहा। बल्कि आरक्षण के विरोध में धरने प्रदर्शन जारी रहे।

श्रीनगर में आंदोलन के समर्थन में ब्लैक आडर रखा गया।

2 **अक्टूबर** 1994, **रामपुर तिराहा (मुजफ्फरनगर)**

17. श्री सतेंद्र सिंह चौहान, ग्राम हरीपुर, सेलाकुई देहरादून (सुपुत्र श्री जोध सिंह चौहान) 18. श्री गिरीश भद्री ग्राम अजबपुर, खुर्द (सुपुत्र श्री वाचस्पति भद्री) 19. श्री रविन्द्र सिंह रावत, बी-20 नेहरू कलोनी देहरादून (सुपुत्र श्री कुंदन सिंह रावत, 20. श्री राजेश लखेड़ा, अजबपुरकल देहरादून (सुपुत्र श्री दर्शन सिंह लखोड़ा) 21. सूर्यप्रकाश थपलियाल, सूर्यग्राम चौदह बीध ा, मुनीकीरेती, ऋषिकेश (सुपुत्र श्री चिंतामणि थपलियाल) 22. राजेश नेगी देहरादून

3 **अक्टूबर** 1994 **देहरादून**

23. अमर शहीद श्री दीपक वालिया, ग्राम बद्रीपुर, देहरादून (सुपुत्र श्री ओमप्रकाश वालिया)। 24. श्री राजेश रावत, चंदर रोड़, देहरादून (सुपुत्र श्रीमती आनंदी देवी) 25. श्री बलवंत सिंह जगवाण, देहरादून 26. श्री जयानंद बहुगुणा, देहरादून

3 **अक्टूबर** 1994 **कोटद्वार**

27. अमर शहीद श्री पृथ्वी सिंह बिष्ट, 28. अमर शहीद श्री राकेश देवरानी

3 **अक्टूबर** 1994 **नैनीताल**

29. अमर ीद श्री प्रताप सिंह बिष्ट

10 **नवम्बर** 1995, **श्रनगर गढ़वाल**

30. श्री यशोधर बैंजवाल, ग्राम बैंजी, पो. सिल्ली, अगस्त्यमुनि जिला रूद्रप्रयाग 31 अमर शहीद श्री राजेश रावत

शहीद बाबा मोहन उत्तराखंडी

राज्य प्राप्ति के बाद पहाड़ के हित में गैरसैंण राजधानी की मांग के लिए शहीद बाबा का नाम भी उत्तराखंड के अमर शहीदों में शमिल हो गया। बाबा मूलतः बंठोली, विकासखंड एकेश्वर पौड़ी गढ़वाल के रहने वाले थे।

19 **सितम्बर : जनपद**

राज्य आंदोलन के समर्थन में जनपद के सभी शिक्षक और कर्मचारियों ने अनिश्चितकालीन हड़ताल शुरू की। व्यापारियों ने भी आज काला दिवस मनाया।

23 **सितम्बर : कोटद्वार**

आंदोलन के अग्रणी नेता इंद्रमणि बडूनी ने कोटद्वार में एक जनसभा कर आंदोलन को एक नई राह दी। उन्होंने उत्तराखंडवासियों से दिल्ली संसद चलकर राज्य छीनकर लाने का आह्वान किया। इसके लिए 2 अक्टूबर 1994 की तिथि घोषित की गई।

25 **सितम्बर :**

2 अक्टूबर को बसें मुफ्त

कोटद्वारः उत्तराखण्ड राज्य के लिए दिल्ली संसद घेरों को जाने वालों के लिए प्रसिद्ध यातायात कंपनी जी.एम.ओ.यू.लि. ने अपनी बसें मुफ्त देने की घोषणा की।

पटवारी भी शामिल

पौड़ी : आंदोलन को कर्मचारी शिक्षकों का समर्थन मिलने के बाद पटवारी महासंघ ने भी दो अक्टूबर से हड़ताल में शामिल होने का ऐलान किया। यह जानकारी कर्मचारी नेता नवीन नैथानी ने दी।

26 **सितम्बर :**

एस.पी. कार्यालय पर पथराव

पौड़ी : पी.ए.सी. के एक जवान द्वारा युवती से छेड़छाड़ पर बेकाबू भीड़ ने पुलिस अधीक्षक कार्यालय का घेराव कर पथराव किया। इसमें पीएसी के कुछ जवान तथा पुलिस ड्राइवर घायल हो गया। पुलिस ने भी हवाई फायरिंग की। ट्रक व जीप क्षतिग्रस्त।

27 **सितम्बर :**

रैपिड एक्सन फोर्स तैनात

पौड़ी : आंदोलन की तेजी को बढ़ते देख जनपद के पौड़ी और कोटद्वार में पीएसी को हटाकर रैपिड एक्सन फोर्स तैनात की गई।

28 **सितम्बर :**

कालिख पोती, जूते की माला पहनाई

श्रीनगर : गत 31 अगस्त को पहाड़ विरोधी मुख्यमंत्री मुलायम सिंह की वार्ता में शामिल एक छात्र के कल यहां पहुंचने पर हजारों की संख्या में उमड़े आंदोलनकारियों ने उसकी क्षमायाचना को ठुकराते हुए उसका मुंडन कर जूतों की माला पहनाकर जुलूस निकाला।

पौड़ी : में रंगकर्मियों ने अनोखा प्रदर्शन कर आंदोलन में जान फूंक दी।

3 **अक्टूबर :**

व्यापक हिंसा, तोड़फोड़, कर्फ्यू लागू

एक और दो अक्टूबर को मुजफ्फरनगर कांड के विरोध में संपूर्ण जनपद में आक्रोश का सैलाब फूट पड़ा। जनता और पुलिस के बीच हर शहर में जबरदस्त संघर्ष हुआ। पुलिस ने जमकर लाठियां, गोलियां बरसाई।

पुलिस की पिटाई से कोटद्वार में पुलिस चौकी के पीछे पृथ्वी सिंह बिष्ट की मौत हो गई। जबकि राकेश देवरानी को भी पुलिस ने मार गिराया

राजधानी गैरसैंण के लिये एकमात्र शहीद जनपद गढ़वाल के बाबा मोहन उत्तराखण्डी

गैरसैंण को उत्तराखण्ड की स्थायी राजधानी बनाने के लिए एकमात्र शहीद बाबा मोहन उत्तराखंडी का जन्म अगस्त सन् 1948 में हुआ। पौड़ी जिले के एकेश्वर ब्लाक के बठोली गांव में मनवर सिंह नेगी के तीन बेटों में मझले मोहन इंटरमीडिएट एवं आईटीआई की पढ़ाई के बाद वर्ज़ 1970 में बंगाल इंजीनियरिंग में भर्ती हुए, लेकिन उनका सेना में मन नहीं लगा। वर्ष1994 में नौकरी छोड़ कर वे राज्य आंदोलन में कूद गए।

2 अक्टूबर 1994 को रामपुर तिराहे में हुई घटना से उन्होंने आजीवन बाल, दाड़ी न काटने की शपथ ली। 11 जुलाई 1997 को राज्य व राजधानी गैरसैंण के लिए शुरू अनशन का सफर 8 अगस्त 2004 की रात्रि को मौत के साथ ही थमा। बाबा मोहन उत्तराखंडी के आंदोलन 11 जनवरी 1997 को लैंसीडाउन के देवीधार में राज्य निर्माण के लिए अनशन। 16 अगस्त 1997 से 12 दिन तक सतपुली के समीप माता सती मंदिर में अनशन। 1 अगस्त 1998 से 10 दिन तक गुमखाल पौड़ी में अनशन। 9 फरवरी से 5 मार्च 2001 तक नंदासैंण गैरसैंण में अनशन। 2 जुलाई से 4 अगस्त 2001 तक नंदासैंण गैरसैंण में राजधानी के लिए अनशन। 31 अगस्त 2001 को पौड़ी बचाओ आंदोलन के लिए अनशन। 13 दिसंबर 2002 से 1 फरवरी 2003 तक चौंदकोट गढ़ी पौड़ी में गैरसैंण राजधानी के लिए अनशन। 2 अगस्त से 23 अगस्त 2003 तक कौनपुर गढ़ी थराली में अनशन 2 फरवरी से 21 फरवरी 2004 तक कोदियाबगड़ गैरसैंण में अनशन राजधानी घोषित करने के लिए 2 जुलाई से 8 अगस्त 2004 तक बेनीताल में अनशन किया 37वें दिन 8 अगस्त को उन्हें कर्णप्रयाग तहसील प्रशासन द्वारा जबरन उठाकर सीएचसी में भर्ती किया गया, जहां उन्होंने रात्रि को दम तोड़ दिया था।

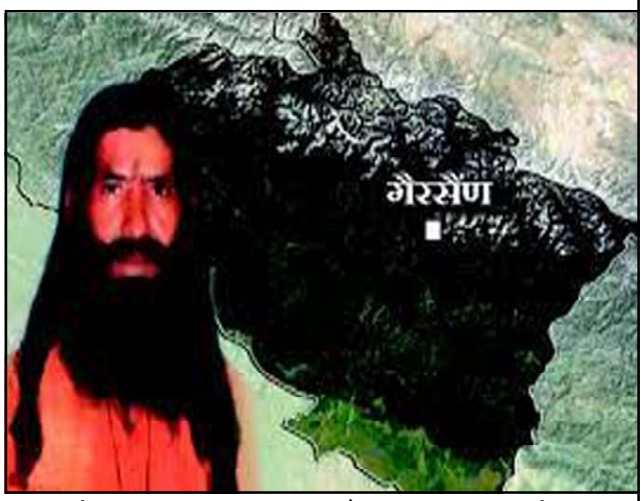

उत्तराखंड राज्य की परिकल्पनायें उसके समुचित विकास, आम जनता की आशाओं-अपेक्षाओं महिलाओं-युवाओं, खेत-खलिहानों, रोजगार व उद्योग धंधों की दशा-दिशा में सुधार के साथ जुड़ी है और उसी से सम्बद्ध है राज्य की रीति नीति प्रशासन एवं सत्ता। चूंकि उत्तराखंड राज्य शहादतों और जनता के संघर्षों से बना राज्य है। इसलिए शहीदों के स्वप्नों व जनता की अपेक्षाओं का सम्मान होना चाहिए। इन्हीं स्वप्नों व अपेक्षाओं में पलायन है तो खेती भी, रोजगार है तो पहाड़ों में सुख सुविधाओं का विकास, भ्रष्टाचार दूर करने की कल्पना है तो पहाड़ी राज्य की राजधानी पहाड़ में होने का सैद्धान्तिक वैज्ञानिक आधार भी। राज्य निर्माण के 21 वर्षों में इन्हीं मुद्दों पर जो खामोशी और ढ़ीलापन रहा उससे आम उत्तराखंडियों में निराशा का भाव आया है और कई स्थानों पर तो राज्य गठन की निरर्थकता का बोध भी।

राजधानी का प्रश्न इसलिए अहम है कि उत्तर प्रदेश में रहते पहाड़ों की भौगोलिक, आर्थिक परिस्थितियों के अनुरूप योजनाएं नहीं बनती थी। उनका क्रियान्वयन नहीं होता था और क्रियान्वयन के जिम्मेदार लोग लखनऊ में बैठे अपने आकाओं को खुशकर योजनाओं को भ्रष्टाचार की भेंट चढ़ा देते थे। उत्तराखंड राज्य की परिकल्पना अपने आप में संघर्ष का एक बड़ा अध्याय थी जब कथित राष्ट्रीय पार्टियां कांग्रेस और भाजपा उसे देशद्रोही मांग कहती थी। सीपीएम को भी गोरखालैंड का सुझाव घी सिंग का डर सताता रहा और उसने कभी उत्तराखंड राज्य का समर्थन नहीं किया। उत्तराखंड क्रांति दल की और सीपीआई की अलख ने न केवल भाजपा को राज्य की मांग के लिए विवश किया बल्कि सत्ता की भलाई चाहने का अवसर भी। अस्सी के दशक में उक्रांद के संस्थापक अध्यक्ष डॉ. डी.डी. पंत व महामंत्री विपिन त्रिपाठी गैरसैंण को उत्तराखंड की राजधानी बनाने का मन बना चुके थे।

गैरसैंण एक नाम नहीं बल्कि पहाड़ों का प्रतिनिधि स्थान है। सन् 1992 में जब उत्तराखंड क्रांतिदल ने अपने महाधिवेशन में गैरसैंण के चंद्रनगर नाम देते हुए राजधानी का औपचारिक शिलान्यास किया तो सभी ओर से उक्रांद के इस कदम का स्वागत हुआ। गैरसैंण, चौखुटिया व थलीसैंण विकासखंडों के गैरसैंण से लगे 50 किमी. लम्बे व 30 किमी चौड़े क्षेत्र को पेशावर कांड के अमर सैनानी वीरचंद्र सिंह गढ़वाली के नाम पर चंद्र नगर नाम देना, सन् 1984 में उत्तराखंड संघर्ष वाहिनी द्वारा मनाये गये पेशावर स्मृति दिवस के बाद पेशावर कांड के नायक को आदर देने का पहला बड़ा कार्य था। गैरसैंण दोनों मंडलों के बीच राजनैतिक दलों की विघटनकारी सामन्ती सोच को अंगूठा दिखाता राज्य आंदोलन का केंद्र बना तो साजिशों का उदय भी हुआ। उसी काल में उक्रांद डी ने कालागढ़ को राजधानी बनाने का शिगुफा छोड़ा। यह उक्रांद के आपसी कलह का परिणाम था जिसकी आंच राज्य विरोधी ताकतें सेंक रही थी।

उत्तराखण्डी संस्कृति में जनपद पौड़ी गढ़वाल की भूमिका

गढ़वाली भाषा, साहित्य एवं संस्कृति का वैशिष्ट्य

'खण्डा पंच हिमालस्य' अर्थात् हिमालय के 'पंच खण्ड' में आज का गढ़वाल 'केदारखण्ड' के नाम से विख्यात रहा। पौराणिक दृष्टि से, इसे ब्रहमदेश, केदारखण्ड, हिमवन्त, बदरिकाश्रम आदि नामों से जाना जाता है। यह क्षेत्र 'देवानमति दुर्लभ' तथा ऋषि-मुनियों की तप: स्थली रही है। इसलिए इसे देवभूमि और तपभूमि भी कहा जाता है। ऐतिहासिक दृष्टि से, यदि नवीं शताब्दी में कत्यूरी वंश को हिमालय का प्रथम ऐतिहासिक राजवंश माना जाता है, तो पन्द्रहवीं शताब्दी के बाद पंवार वंशीय पराक्रमी नरेश अजयपाल के द्वारा बावन गढ़ों को जीतने के कारण इसे गढ़वाल के नाम से जाना जाने लगा।

इतिहास के अनेक उत्थान- पतन के क्रम में, गढ़वाल लगभग साढ़े नौ सौ वर्षों (950-1803 ई0) के शासनकाल की (कत्यूरी वंश और पंवार वंश की) अनेक ऐतिहासिक घटनाएं गढ़वाल के विकास की गौरव-गाथा कहती दिखाई देती हैं। 1803 ई0 से 1815, के कालखण्ड में गोरखा आक्रमण ने गढ़वाल को पराजय के कगार पर पहुंचा दिया, पर अंग्रेजों की सहायता से सन् 1815 ई0 में गढ़वाल गोरखों के अत्याचारों से मुक्त हुआ, किन्तु इसकी कीमत अंग्रेजों ने गढ़वाल से वसूल की। फलत: गढ़वाल के दो भाग हुए-पौड़ी गढ़वाल और टिहरी गढ़वाल। पौड़ी गढ़वाल अंग्रेजों के अधीन रहा और टिहरी गढ़वाल टिहरी के राजा को मिला। बाद में गढ़वाल का इतिहास अंग्रेजों से अनवरत संघर्ष, देश की आजादी और आजादी के पचास वर्षों के विकास के इतिहास से जुड़ा हुआ है। मोटे तौर पर गढ़वाली भाषा, साहित्य एवं संस्कृति का सीधा सम्बन्ध, इसी पौराणिक, ऐतिहासिक, सामाजिक-राजनैतिक घटनाओं के विकास से जुड़ा हुआ है। यहां की नैसार्गिक सुषमा, उत्तुंग हिमाच्छादित शिखर, गंगा जमुनी संस्कृति की उद्घोषक नदियां एवं नाना प्रकार के लता-पादप व झरने सदा से- अनादि काल से-कवियों के हृदय मास्तिष्क को साहित्य-रचना हेतु उत्प्रेरित करती रही। गढ़वाल में रचना-धर्मिता की दृष्टि से तीन प्रकार के साहित्य उपलब्ध होते हैं। -(1) संस्कृत साहित्य (2) हिन्दी साहित्य (3) गढ़वाली साहित्य

संस्कृत साहित्य का गढ़वाल में अक्षय भण्डार है, जिससे हिमालयी संस्कृति और उसे वैशिष्ट्य का ज्ञान प्राप्त होता है। वैदिक एवं लौकिक साहित्य की दृष्टि से वेद, पुराण, धार्मिक ग्रन्थ, ज्योतिष ग्रंथ आदि की रचना इसी भूमि की साहित्य ऊर्जा और मानवीय उदात्त गुणों को प्रकट करने वाली है। संस्कृत की रचनाओं का बाद में भी सतत् प्रवाह जारी रहा। पं. मेधाकर बुधाणा, भरतज्योति राय, बागीश ओझा, पं. तुलाराम बुधाणा, पं. वासवानंद, पं. हरिदत्त नौटियाल, बालकृष्ण भट्ट आदि मनीषियों ने अनेक संस्कृत ग्रंथों की रचना की।

इसी प्रकार हिन्दी साहित्यकारों में मौलाराम, स्वामी शशिधर, शीशराम ममगाई, भोलादत्त चंदोला, चंद्रकुंवर बर्त्वाल, डा. पीताम्बर दत्त बड़थ्वाल, रमा प्रसाद घिल्डियाल, गुणानन्द जुयाल, डा. शिवप्रसाद डबराल, वाचस्पति गैरोला, पार्थ सारथी डबराल, महावीर प्रसाद गैरोला, डा. गंगा प्रसाद विमल, लीलाधर जगूड़ी, मंगलेश डबराल, बल्लभ डोभाल तथा अन्य नवोदित साहित्यकार सतत् भाषा शोध एवं साहित्य की साधना में रत हैं। इन साहित्यकारों ने हिन्दी साहित्य के भण्डार की अपूर्व श्रीवृद्धि की है। इन सब की चर्चा अप्रासंगिक नहीं है, किन्तु मेरा अभीष्ट गढ़वाली भाषा, साहित्य एवं संस्कृति के वैशिष्ट्य पर दृष्टिपात करना है। गढ़वाली भाषा का साहित्य दो रूपों में पाया जाता है- (1) गढ़वाली लोक साहित्य (2) गढ़वाली भाषा में सृजित साहित्य

गढ़वाली लोक साहित्य का भंडार समृद्ध है। इसमें लोक जीवन की अनुभूतियां अभिव्यक्त हुई है। लोक साहित्य की दृष्टि से लोक गीतों, लोक नृत्यों, लोक गाथाओं, लोकोक्तियों, लोक कथाओं आदि से सम्बन्धित अगाध साहित्य विद्यमान है। लोक साहित्य वर्गीकरण, संरक्षण, संवर्धन एवं प्रकाशन के लिए अनेक शोधार्थियों एवं विद्वानों ने सराहनीय कार्य किये है। पं. तारादत्त गैरोला, डा. गोविन्द चालक, डा. शिवानन्द नौटियाल एवं अनेक शोधार्थियों के कार्य इस दिशा में मील के पत्थर सिद्ध हुए हैं। आज भी गढ़वाली लोक साहित्य को लेकर अनेक शोधकार्य एवं स्वतंत्र पुस्तक लेखन के कार्य सम्पादित हो रहे है। गढ़वाली लोक साहित्य में लोक हृदय का स्पन्दन निहित होता है। अनेक सामाजिक, सांस्कृति, धार्मिक, आर्थिक, राजनीतिक, ऐतिहासिक भावों से ओत-प्रोत लोकगीत, लोकनृत्य, लोकगाथाएं, कहावतें, पखाणें, बुझौवल आज भी लोगों के मन को मोह लेते है। अनेक संस्कार गीत, खुदेड़ गीत, तुगीत, बाजूबन्द, पावड़े, जागर, गाथा हमारे जीवन का समरस हो गये हैं। डा. दिनेश चंद्र बलूनी ने लोक साहित्य के तीन भेद किये है। (1) पद्य साहित्य (2) गद्य पद्यात्मक साहित्य (3) गद्य साहित्य

इन्हीं तीनों में गढ़वाली लोक साहित्य को समाविष्ट किया जा सकता है। जिस प्रकार लोकगीत हमारे जीवन में रस-बस गये हैं, उसी प्रकार गढ़वाली लोकगाथाएं भी हमारे हृदय को झकझोरती है, पराक्रम का वर्णन करती है। डा. गोविन्द चातक ने इन लोक गाथाओं को तीन चरणों में बांटा है। (1) जागर गाथाएं (2) पंवाड़े (वीर गाथाएं) (3) प्रणय गाथाएं

लोक नृत्य व गीत भी जीवन के उल्लास व उत्साह के साथी हैं। डा. शिवानन्द नौटियाल ने गढ़वाल के लोकनृत्य गीत में हिमालय के गढ़वाल अंचल की जीवन्त संस्कृति का चित्रण किया है। डा. मोहन लाल बाबुलकर का शोध ग्रंथ अपने ढंग का अनूठा ग्रंथ है। इसी प्रकार डा. कुसुम नौटियाल की शोध कृति गढ़वाली

नारी एक लोक गीतात्मक पहचान लोक गीतों के माध्यम से नारी के हर्षोल्लास एवं दु:ख सुख की व्यथा कथा कहती है। इस दिशा में बहुत सारे कार्य हुए हैं और हो रहे है। गढ़वाली भाषा शब्द सम्पदा की दृष्टि से समृद्ध है। इसमें वैदिक, लौकिक, संस्कृत, तत्सम, अर्धतत्सम, तद्भव, देशज और विदेशी शब्द मौजूद है। इस भूमि ने राजनीतिक कारणों, व्यावसायिक स्थितियों, ऐतिहासिक कारणों, अनेक जातियों के आगमनों, तीर्थ यात्रियों, पर्यटकों, ऋषियों के कारण जहां विभिन्न सामाजिक, संस्कृतियों को जन्म दिया, वहीं पर भाषा के आधार पर गढ़वाली भाषा को समृद्ध किया। यहां पर प्रारम्भ में, जिस प्रकार कोल, किरात, खश, द्रविड, हूण, शक, गुर्जर, नाग, आर्य आदि कई जातियों का प्रवेश हुआ और उनसे सम्बन्धित भाषाओं के शब्द आज भी गढ़वाली भाषा में विद्यमान है। उसी प्रकार राजस्थानी, मराठी, ब्रज, अवधी, बिहारी, बंगला, नेपाली, सिन्धी, पंजाबी आदि शब्द भी गढ़वाली भाषा में समाविष्ट है। इसका कारण सत्य प्रसाद रतूड़ी की दृष्टि में यह है कि गढ़वाल संस्कृति में समस्त भारत संस्कृति समा गयी। सारे भारत वर्ष से उत्तर से दक्षिण से पूरब से, पश्चिम से लोग यहां आये। कश्मीर से पुरोहित और मियां आये। डबराल, सुन्द्रियाल तथा भट्ट दक्षिण से आये। बहुगुणा, बडोनी बंगाल से आये, तो नवानी, बड़थ्वाल, परमार, रौतेला गुजरात से गढ़वाल में पहुंचे। यहां की सभी उच्च जातियों के लोग ब्राहमण, राजपूत बाहर से आये। नौटियाल, उनियाल व थपलियाल धार मालवा से, मिथिल गौड़ देश से आये, तो खंडूरी, रतूड़ी, व्यासुड़ी वीरभूमि गौड़देश तथा दक्षिण से यहां पहुंचे। इसी तरह सारे राजपूत रावत, रांगड, नेगी आदि बाहर से यहां आये कोई राजपूताना से तो कोई पंजाब से कोई महाराष्ट्र से और कोई गुजरात से। इस तरह गढ़वाल सभी का अपना बन गया।

अत: आकस्मित नहीं कि इन सभी जातियों की भाषाओं का समावेश गढ़वाली भाषा में न हुआ हो। गढ़वाल के कई स्थानों के नामों व शब्दों पर भी इन नामों की विशेषताओं की छाप अमिट है। विद्वानों ने गढ़वाली भाषा की अनेक विशेषताएं बतायी है। यह भाषा शब्द भण्डार की दृष्टि से समृद्ध है। इसमें सूक्ष्म अर्थभेद की अभिव्यक्ति की क्षमता है। इसका अपना व्याकरण और कोश है। इसमें विविध भाषाओं के शब्द सम्मिलित हैं व लिपि देवनागरी है। इस भाषा के कुछ शब्द ऐसे हैं, जिनके सम्मुख हिन्दी में शब्द नहीं है। जैसे गढ़वाली की दिदा भुला और दीदी भुली के शब्द हिन्दी में नही हैं। इनको अभिव्यक्त करने के लिए हिन्दी में बड़ा या छोटा भाई या बहन शब्द लगाना पड़ता है। इसी प्रकार हिन्दी में कल शब्द कहने पर, जब तक भूत या भविष्य का प्रयोग नहीं किया जाता, अर्थ स्पष्ट नहीं होता जबकि गढ़वाली में संस्कृत के श्व: ह्य की भांति भोल (आगामी) दिन और ब्याली (विगत दिन) अपने आप में स्पष्ट हैं। इसी प्रकार गढ़वाली में सूक्ष्म अर्थ भेदी की दृष्टि से ऊनी, सूती, और ऊनी सूती, मिश्रिम वस्त्र जलने की गंध को किकर्याण, कुतराण और विकिल्याण शब्द का प्रयोग किया जाता है। उस दृष्टि से डा. हरिदत्त भट्ट शैलेश और डा. गोविन्द चातक का भाषा वैज्ञानिक अध्ययन सराहनीय है। जहां तक गढ़वाली भाषा में लिखित साहित्य का प्रश्न है- इसमें पर्याप्त साहित्य उपलब्ध है। डा. हरिदत्त भट्ट शैलेश ने इसका शुभारंभ सन् 1750 के आस-पास से माना है, जबकि विश्वम्भर दत्त चंदोला ने सन् 1860-80 के बीच तथा श्याम सिंह नेगी महाराजा सुदर्शन शाह द्वारा लिखी गढ़वाली में गोरख्याणी से माना है। शोध के गुंजलक में जाकर गढ़वाली पत्र (1905) के प्रकाशन से गढ़वाली कविता के प्रति आम लोगों का ध्यानाकर्षण अधिक हुआ है। कालान्तर में इसी समाचार पत्र ने आगे चलकर गढ़वाल में स्वतंत्रता के आंदोलनों में इस क्षेत्र में अहम भूमिका निभाई। डा. शैलेश ने गढ़वाली साहित्य को विकास की दृष्टि से पांच कालों में विभक्त किया है।- (1) आरम्भिक काल (2) गढ़वाली युग (3) समाज-सुधार या सिंह युग (4) पांथरी युग (5) आधुनिक या गढ़वाली जन साहित्य-परिषद युग

आरम्भिक काल में गढ़वाली पत्र के प्रारम्भिक रचनाओं को आधार बनाया गया है, जिसमें हर्षपुरी, हरिकृष्ण, दौर्गादत्ति, लीलानंद कोटनाला द्वारा लिखित बुरो संग, चेतावनी तथा विरह आदि कविताओं को लिया गया है। इसी प्रकार गढ़वाली युग में भी गढ़वाली पत्र की 1905 से प्रकाशित होने वाली कविताओं की चर्चा है। इस युग में सत्यशरण रतूड़ी, चंद्रमोहन रतूड़ी और आत्माराम गैरोला की रचनाओं का जिक्र है। इसी युग में बलदेव प्रसाद शर्मा और तारादत्त गैरोला की रचनाएं छपीं। पं. तारादत्त गैरोला का सदेई काव्य गढ़वाल के कण-कण व जन-जन में व्याप्त है। उनका यह गीत नारी कंठ के विरह स्वर को उद्दीप्त करता है।

हे ऊंची डांडयो तू नीसी आवा, घणी कुलांयों तु छांटि जावा। मैं ते लगीं छ खुद मैतुड़ा की, बाबाजी को देखण देश देवा।

इसी युग के योगीन्द्र पुरी की रैबार कविता भी पौन और भौंर के द्वारा रैबार भेजने की दूत परम्परा का निर्वहण करती है। बुड्या जवाई भी इन्हीं की कविता है। चक्रधर बहुगुणा की मोछंग कविता संग्रह भी इसी काल की देन है। पं. तारादत्त गैरोला ने गढ़वाली कवितावली की भूमिका में गढ़वाली में काव्य-लेखन पर बल दिया है। इसी काल में पं. तोताकृष्ण गैरोला और शशि शेखरानन्द की कविताएं प्रकाशित हुई। शशि शेखरानन्द सकलानी की एक कविता शिक्षा की यह विशेषता रही कि कविता की प्रत्येक पंक्ति के प्रथम अक्षर से कवि के नाम व पता का स्वयं ज्ञान हो जाता है। यह एक प्रयोग है। इसी प्रकार का प्रयोग अन्त्याक्षरी के रूप में प्रत्येक वर्ण को लेकर डा. शिवप्रसाद डबराल ने हिन्दी में किया था। छन्द वैविध्य अलंकार विधान, रस-मार्धुय की दृष्टि से इस युग की कविताएं बड़ी प्रभावकारी हैं। इसी युग में गढ़वाली भाषा के गद्य का भी प्रकाशन शुरू हुआ। शालिग्राम वैष्णव का गढ़वाली पखाणा, गिरिजादत्त नैथाणी का मांगल संग्रह तथा भवानी दत्त थपलियाल के दो नाटक जयविजय और प्रहलाद प्रकाशित हुये गढ़वाली छन्द माला एक पुस्तक भी छपी। समाज सुधार युग या सिंह युग भजन सिंह के नाम पर पड़ा।`व्यंग्य इस युग की कविता की विशेषता रही। सिंह सतसई, सिंहानाद, वीर वधू आदि उनकी प्रसिद्ध रचनाएं है। कमल साहित्यालंकार, सत्यप्रसाद रतूड़ी आदि इस युग में सक्रिय कवि रहे। पांथरी युग- भगवती प्रसाद पांथरी, जो काशी विद्यापीठ विश्वविद्यालय, वाराणसी के कुलपति भी रहे, के नाम पर पड़ा। उनकी बांसुली और निर्मोही जी की हिलांसी आदि इस युग के प्रसिद्ध काव्य है। जिस प्रकार सिंह युग में सन् 1937 में अ -आ के नमूने के रूप में वृहत गढ़वाली नागरी कोश का केवल एक अंक ही निकला, उसी प्रकार से पांथरी युग में भी सन् 1942 तके गढ़वाल शब्द भंडार के प्रकाशन की योजना बनी, किन्तु इस समय भी गढ़वाली शब्द गवेषणा समिति भी केवल अ का एक अंक निकाल पायी। इन सब से ज्ञात होता है कि गढ़वाली साहित्य और भाषा सम्पदा को एक व्यवस्थित एवं वैज्ञानिक स्वरूप प्रदान करने के लिए गढ़वाली विद्वान सत्त प्रयत्नरत

गढ़वाल की लोक कलाएं

कलाएं किसी भी समाज की संस्कृति का अनिवार्य अंग है। इनमें उस समाज की इच्छा-आकांक्षाएं, आचार-विचार, आस्था-विश्वास तथा अभिरूचियां रूपायित होती हैं। इस विचार से यदि संस्कृति किसी समाज की आत्मा है, तो कला संस्कृति की आत्मा यह मनुष्य के सामाजिक-आध्यात्मिक जीवन का दर्पण है। हम यह सब यह जानते हैं कि संस्कृति मनुष्य को संस्कार देती है। उसकी चेतना का परिष्कार कर उसे सामान्य प्राणी से अलग, एक विशिष्ट प्राणी बनाती है। मनुष्य तथा मनुष्ट समाज का सर्वांगीण विकास उसकी संस्कृति में ही निहित है। अत: उसकी संस्कृति उसके विकास की पहचान भी है। कहना न होगा कि इसमें कलाएं सक्रिय है। मेरी अपनी धारणा है कि भारत प्रकृति तथा संस्कृति का विराट् महाकाव्य है और गढ़वाल इस महाकाव्य का स्वर्णिम अध्याय है। इसमें जीवन का छंद बदला हुआ है, लेकिन वह भारतीयता का उत्कृष्ट छंद है! इस छंद, इस लय को पर्ववासी अपने श्रम एवं चिन्तन से हिमालय के सुरम्य आंगन में रचते हैं गंगा यमुना इस छंद को गुनगुनाती-गाती गंगासागर तक पहुंचाती है।

मेरी यह धारणा काव्यात्मक भले ही लग रही हो, लेकिन जिन लोगों ने एक बार भी गढ़वाल की यात्रा की है, वे मुझसे सहमति रखेंगे और इसका कारण यह है कि यह धर्म-धाम विशिष्ट प्राकृतिक सौन्दर्य का धाम है, अतिशयोक्ति न समझें तो कह लें गढ़वाल स्वर्ग का द्वार है। इसी अनूठे प्राकृतिक परिवेश के बीच यहां के समाज ने रची है। अपनी संस्कृति और इस संस्कृति का बहुत बड़ा हिस्सा है, यहां की लोक कलाएं। गढ़वाल की लोक कलाएं मोटे तौर पर पांच हिस्सों में बांट कर देखी गई है- लोक की ललित कला, चित्रकला, स्थापत्य कला, काष्ठ पच्चीकारी, शरीर चित्रांकन की कला

इस विचार को लेकर अध्येता श्री मोहनलाल बाबुलकर ने इस क्षेत्र की लोकधर्मी कला के उपलब्ध स्वरूपों को चार बड़े विभागों में बांटा है:

1- पेशेवर कला- अ- स्थापत्य कला, ब-पत्थर तराशने की कला, स- काष्ट कला, द- बर्तन बनाने की कला, य-दर्जीगिरी, र-आभूषण बनाने की कला, ल- बिनने की कला, व-मूर्ति बनाने

रहे। इस दिशा में मालचंद रमोला, टिहरी निवासी का गढ़वाली हिन्दी शब्द कोश एक प्रशंसनीय कदम है। यह कोश श्रद्धम संस्था अपर बाजार पौड़ी से प्रकाशित है। आधुनिक युग या गढ़वाली जन साहित्य परिषद् युग में गद्य-पद्य दोनों विधाओं में रचनाओं का लेखन हुआ। नाटकों में दामोदर प्रसाद थपलियाल का मखली, भगवती प्रसाद चंदोला का आज अलसो छोड़ देवा, डा. हरित्त भट्ट शैलेश का नौबत, डा. पुरूषोत्तम डोभाल के बिन्दरा और बुरांश जोत सिंह नेगी का भारी भूल चार गैल्यों का पांखू, डा. गोविन्द चातक का जंगली फूल आदि उल्लेखनीय हैं। इस युग में कहानी कविता, निबन्ध आदि के प्रकाशन भी गढ़वाली साहित्य को समृद्ध करने की दृष्टि से विशेष रूप से उल्लेख्य हैं। शोध की दृष्टि से गढ़वाली भाषा और गढ़वाली लोक साहित्य पर विशेष बल दिया गया है। संगम प्रकाशन की ओर से माई को लाल और अन्तिम गढ़ नाटक भी प्रकाशित हुए, जो क्रमश: श्रीदेव सुमन और कफ्फू चौहान पर आधारित है। गाड भ्यटेकि गंगा गढ़वाली भाषा में लिखी गयी गद्य विधा का आद्योपान्त इतिहास है, जिसमें प्रतिनिधि गढ़वाली एकांकी, गढ़वाली कहानी और निबन्ध आदि संग्रहीत हैं। इसी प्रकार भूम्याल गढ़वाली भाषा का प्रथम महाकाव्य है, जो लोकनायक जीतू पर आधारित है। एक बात उल्लेखनीय है जहां डा. हरिदत्त भट्ट शैलेश ने अपने काल-विभाजन में सन्-सम्वत् की सीमा पर विशेष ध्यान नहीं दिया या प्रवृत्ति पर ध्यान नहीं दिया है, वहीं पर अबोध बन्धु बहुगुणा ने शैलवाणी में लगभग 54 कवियों की कविताओं व उनकी जीवनियों को प्रकाशित किया है तथा परिशिष्ट में लगभग 25 कवियों का उल्लेख किया है। उन्होंने गढ़वाली कविता के विकास पर विस्तार से प्रकाश डालते हुए निम्नलिखित काल विभाजन भी प्रस्तुत किया है-

(1) पहला उत्थान-1901 से 1925 ई0 तक
(2) द्वितीय उत्थान-1926 से 1950 ई0 तक
(3) तृतीय उत्थान-1951 से 1975 ई0 तक
(4) चतुर्थ उत्थान-1976 ई0 से अब तक

इस काल विभाजन में देश की सामाजिक-राजनीतिक स्थितियों व घटनाओं व तदनुरूप कवियों की मानसिकता को आंकने का प्रयास किया गया है। एक विचारणीय विषय है कि गढ़वाली भाषा को और उसके साहित्य को सतत समृद्ध किया जाये, क्योंकि खड़ी बोली हिन्दी के बढ़ते प्रभाव से गढ़वाली भाषा-भाषी जनों और साहित्य सर्जकों में एक हीनता का भाव घर करता जा रहा है, कि कहीं वे केवल गढ़वाल तक ही या क्षेत्रीय साहित्य तक तो नहीं सीमित हो जायेंगे या हमें हिन्दी के सम्मुख दोयम तो नहीं माना जायेगा। इस विचार को हमें हटाना होगा। प्राय: अपनी भाषा बोलने में भी गढ़वाली जन-समुदाय संकोच का अनुभव करता है। यह स्थिति भी ठीक नहीं है। यह अपनी भाषा व संस्कृति के लिए घातक है, दरअसल, यह मन की हीनता हो सकती है, भाषा की नहीं। लोकवाणी सदैव से साहित्य का स्थान ग्रहण करती रही है। विद्यापति की अवहट्ठ भाषा जिसे उन्होंने देसिल बयना कहा और जिसमें उन्होंने कीर्तिलता लिखी। वह उनकी कीर्ति का अक्षय आधार-स्तम्भ है। कबीर की सुधक्कड़ी भाषा जायसी, तुलसी, अवधि, सूर-बिहारी का ब्रज भाषा आदि में लेखन आज भी साहित्य के मानदण्ड बने हुए हैं। अन्त में मैं अबोध बन्धु बहुगुणा की निम्नलिखित पंक्तियों से अपनी बात समाप्त कर रहा हूं:-

दिल की भाषा ब्वल्द जब, अपणी मां की बोलि,
पड़द जिकुड़ि मा छपछति, गेड़यों दैंद खोलि

विभागाध्यक्ष, हिन्दी विभाग, ग०वि०वि० परिसर पौड़ी

की कला, क- बुनने की कला, ख- लोहार गिरी

2- चित्रकला- अ-भित्तिकला, ब- मकान के बाहर चित्रित विभिन्न प्रकार की डिजायन।

3- काष्ट पर चित्रित चित्र-

अ- मंदिरों के दरवाजों पर लगी पीतल की पट्टियों पर अंकित चित्र उभरे या खुदे हुए, ब- पत्थरों पर अंकित रेखाचित्र

4-शरीरांकन

गाजल तथा अलंकरण हेतु गोदे गए चित्र।

उन्होंने लोक नाट्य और लोक संगीत को इससे अलग रखा है और स्वतंत्र रूप से उसका विवेचन किया है। (दष्टव्य: पश्चिमी पहाड़ी की उप-बोली का लोक-साहित्य और कला, 1970, इलाहाबार, भारतबंधु, प्रकाशन)। इसके अतिरिक्त बाबुलकर जी ने अल्पनाओं को लोक-कलाओं में नहीं रखा, जबकि अल्पनाएं/ ऐंपण लोक कला का एक महत्वपूर्ण अंश है। प्रारम्भ में सभी लोक-कलाएं अव्यावसायिक होती हैं। कालांतर में उनमें धीरे-धीरे व्यावसायिकता आने लगती है। फिर भी सारी कलाएं व्यावसायिकता नहीं हो जातीं। इस तथ्य के साथ-साथ यह भी ध्यान रखने की बात है, जो लोक-चेतना में लोक-तत्व विद्यमान रहते है और प्राय: व्यावसायिकता आने पर भी ऐसी कलाओं का व्यवसाय क्षेत्र प्राय: उसी भू-भाग तक सीमित रहता है। अपनी आवश्यकता के अनुरूप ही वहां के निवासी उन कलाओं, कला-उपकरणों को निर्मित करते हैं।

सब मिलकर हम गढ़वाल की लोकलाओं में इन कलारूपों में सम्मिलित करेंगे- काष्ठकला, आभूषण, निर्माण-कला, वस्त्र-निर्माण एवं अभिरंजन-कला, वाद्य, पात्र एवं शस्त्र निर्माण-कला, मेले-लोकोत्सव और नृत्यादि के लिए बनाए जाने वाले खिलौने, मुखौटे आदि की निर्माण-कला, टोकरी आदि बनाने की कला। उपर्युक्त लोक-कला-रूप व्यावसायिक लोक-कला की श्रेणी में आते हैं, जबकि निम्नांकित कला-रूप अव्यावसायिक हैं- त्यौहारों, व्रत-अनुष्ठानों और संस्कारों इत्यादि सुअवसरों पर निर्मित विविध अल्पनाएं (ऐपण), भित्ति-चित्र आदि, व्यक्तिगत सौन्दर्य-अभिरूचि की तृप्ति के लिए निर्मित कला, अंगों पर गोदने गुदवाना आदि। गढ़वाल के गांव इन लोक-कलाओं के घर हैं।

इस सुरम्य अंचल के लोक कलाकार परम्परागत रूप से इन कलाओं को समृद्ध एवं विकसित करते चले आ रहे हैं। सर्वप्रथम हम गढ़वाल की काष्ट लोक-कला पर ध्यान दें। व्यावसायिक कला के रूप में यहां काष्ट कला बहुत पहले से चली आ रही है। यहां के प्राचीन घरों की चौखट-दरवाजों इत्यादि पर उकेरी गई कलात्मक अभिव्यंजनाएं आज भी लोक-कला के परम्परागत स्वरूप निरन्तर लुत्प होता चला आ रहा है, फिर भी यहां के 50 प्रतिशत गांव अभी भी काष्ठ कला का वह रूप सुरक्षित रखे हुए हैं। वस्त्र निर्माण और अभिरंजन-कला भी गढ़वाल में विकसित रूप में मिलती है। शीत प्रदेश होने से यहां ऊनी वस्त्र ही प्राय: बनते हैं। विशुद्ध इनके बने मोटे वस्त्रों में बहुधा सादी बनावट मिलती है। उनमें विशेष अभिप्रायों (मोटिफ) की खोज करने पर निराशा ही हाथ लगेगी, किन्तु वर्तमान में अच्छे संसाधन विकसित होने से कलात्मक गलीचे, शाल आदि यहां निर्मित हो रहे है, जिनमें प्राचीन अभिप्रायों को सुन्दरता के साथ डाला जाता है।

गढ़वाल में धातु के वाद्ययंत्र, दैनिक उपयोग के पात्र और अस्त्र-शस्त्र भी बनाये जाते हैं। यद्यपि आज इनका प्रयोग निरन्तर घट रहा है। पिरु भी प्राचीन उपलब्ध सामग्री यहां की लोक-कला के बेजोड़ नमूने प्रस्तुत करती है। टोकरियां और चटाइयां यहां पर व्यापक स्तर पर बनती है। इनको प्राय: रिंगाल और बांस से बनाया जाता है। यहां की विशेष टोकरियों के अतिरिक्त कंधे पर लटकाने वाली कण्डी, घेल्डा और सन की टाटपट्टी भी बनती है। लोक मानस की सौन्दर्य भावना भूमि, भित्ति तथा पट् चित्रों के रूप में व्यापक अभिव्यक्ति पाती रही है। अल्पना या ऐंपण चित्रांकन की एक सशक्त विधा है।

यह कार्य मुख्यत: महिलाओं अथवा पूजा करने वाले ब्राहमणों द्वारा किया जाता है। घर के द्वार, देहरी, आंगन, पूजा-स्थल, भंडारगृह इन सभी स्थानों पर अवसरानुकूल इनका अंकन होता है। लाल-मिट्टी (गेरू) या कमेड़े से लीपी गई आधार-भूमि पर पिसे हुए चावल (बिस्वार) के बिन्दु एवं रेखाओं से पीठ, चौकी, भद्र, खोड़ी इत्यादि रचे जाते है। इनमें पूर्ण घट, अंगूरबेल, नींबू, नाग, तोता, चरण चिह्न, मछली के अभिप्राय (मोटिफ) अधिक में निश्चित रंगों का प्रयोग मिलता है, जिसमें सूर्य तथा मंगल रक्तवर्ण (अबीर, पिठियां) चंद्रमा तथा शुक्र श्वेत रंग (आटे से) वृहस्पति व बुद्ध पीतवर्ण (हल्दी या पीले रंग से), राहु व शनि काला वर्ण (काला रंग) और केतु धूम्र वर्ण (मिश्रित रंग)- द्वारा दर्शाए जाते है।

इसी तरह कुछ अल्पनाओं में चक्र, त्रिभुज, बिन्दु इत्यादि के प्रतीक भी मिलते हैं। मुख्य द्वार चौखट पर बने म्याल में गणेश, गौरा, हाथी, कमल, स्वास्तिक की रचना की जाती है। अन्य प्रकार के भित्तीय अलंकरणों में थापा, ज्युती, हिमाचल आदि लिए जा सकते है। विवाह आदि शुभ-अवसरों पर अल्पनाओं को विशेष रूप से बनाया जाता है। अल्पनाओं ऐंपण काष्टकला और भित्ति-चित्रों में प्रयोग होने वाले प्रमुख प्रतीक इस प्रकार वर्गीकृत किए जा सकते हैं। 1- अक्षर और ज्यामितिक प्रतीक- ऊँ, स्वास्तिक, सरल और लहरदार रेखाएं, वर्ग, त्रिभुज, षटभुज, बिन्दु आदि, 2- पशु-पक्षी प्रतीक: हाथी, घोड़ा, शेर, तोता, मछली सर्प, 3- वृक्ष-लता-फल प्रतीक: अंगूर, नीबू, कमल, गुलाब आदि, 4-नक्षत्र-प्रतीक: सूर्य, चंद्रमा, नव-गृह, 5- देवी-देवता प्रतीक: गणेश, शिव, दुर्गा, लक्ष्मी, 6-मानव-प्रतीक: मानव आकृतियां, पैरा के चिह्न, हाथों के चिह्न, 7- वस्तु प्रतीक: कलश, शंख, चक्र, त्रिशूल आदि ये सभी प्रतीक गहन आध्यात्मिक अर्थ संजोए हुए रहते है। उदाहरण के लिए -ऊँ एक ज्यामितिय प्रतीक है, जो विश्व का सबसे अधिक पूज्य एवं गहन अर्थ वाला प्रतीक है। यह ब्रह्म का प्रतीक है। प्राण ही ब्रहमा, विष्णु, महेश-क्रमश: जल देने वाली, रक्षा करने वाली तथा संहार करने वाली, तीनों शक्तियों का प्रतीक तीन अक्षर-अ उ म या ऊँ है।

यह एक मांगलिक मंत्र-गणानां त्वा गणपति हवा महे का रूप है। यहां अधिक विस्तार में जाने का अवश्यकता नहीं है। संक्षेप में इतना ही कहना पर्याप्त रहेगा कि गढ़वाल के लोक-कलाएं अत्यंत समृद्ध हैं और इनमें यहां के समाज की सौन्दर्य-चेतना, आध्यात्मिक-भावना चिन्तन और अभिरूचि आकार लेती चली आई है।

इन लोक-कलाओं के संरक्षण के विशेष आवश्यकता है, क्योंकि आधुनिक जीवन ने इनके प्रति नए समाज की रूचि को कम कर दिया है। हमें विलुप्त होती इन लोक कलाओं को बचाए रखना होगा, ताकि हिमालयी संस्कृति की विकास धारा को नए सिरे से समझा जा सके। निश्चय ही यह धारा उस सुदूर बिन्दु से जुड़ती है जब गढ़वाल में गुफा चित्रों का प्रचलन था।

गढ़वाल के लोकगीत

गीतों का अपना महत्व है, जिसका अनुमान इससे भी लग जाता है कि चार वेदों में एक वेद सामवेद की रचना सिर्फ गीत गाने के लिए की गई। इसमें महत्व के कारण ही सम्भवत: श्रीकृष्ण ने गीता में कहा कि वेदान्ता सामवेदास्मि अर्थात वेदों में सामवेद हूं। विभिन्न भाषाओं की जननी संस्कृत के साहित्य का शुभारंभ भी गीतों से ही हुआ और गीत ही शताब्दियों से राष्ट्र और जातियों को समयोपयोग संदेश देते रहे हैं, इसलिए समय के साथ-साथ गीतों में तत्कालीन सामाजिक धार्मिक और राजनैतिक स्थितियों का भी जिक्र होता रहा है। किसी भी क्षेत्र और समुदाय के गीत उस जनजीवन के सहचर और सुख दुख के साथी रहे हैं, इसलिये लोकगीतों को उस क्षेत्र का दर्पण भी कहा जाता है। लोकगीतों पर उस काल की तमाम अच्छाईयों-बुराईयों का भाव और भाषा का प्रभाव पड़ता रहा है। कदाचित यही स्थिति गढ़वाल के लोकगीतों की भी है। गढ़वाल के लोकगीतों का अपना विशिष्ट महत्व है। गढ़वाल के लोक साहित्य को जानने के लिये भी हमें गढ़वाल के लोकगीतों की थाती से जाना होगा क्योंकि गढ़वाल का लोक साहित्य लोकगीतों से जुड़ा है। गढ़वाल के लोक साहित्य के लिखित अवस्था में न होने के कारण भी लोकगीतों के महत्व को कम नहीं आंका जा सकता है। गढ़वाल में प्रकृति और कृषि का सहचर्य लोकमानस से जुड़े होने के कारण यह सहज रूप से गढ़वाल की रागात्मक कृतियों में भी मुखर होता है। जैसा विविधातापूर्ण स्वरूप गढ़वाल का है, वैसी ही विविधता गढ़वाल के गीतों में भी परिलक्षित होती है। यहां के लोकगीत और संगीत के इन रूपों में यहां की परम्परा, बोली एवं संस्कृति पुष्ट होती है। पहाड़ी जीवन की जटिलता, विषम परिस्थितियों तथा समस्याओं के विषय को यही गीत-संगीत अमृत में बदलने की सामर्थ्य रखता है तथा यही घाटी से चोटी तक के जनजीवन को स्पन्दित करता रहता है। गढ़वाल के लोकगीतों का साहित्य अलिखित होने के कारण उनमें समय-समय पर तब्दीलियां की जाती रहीं, लेकिन मांगल गीतों व पूजा के गीतों का स्वरूप कदाचित पुरातन ही रहा, इसका कारण गढ़वाल में शास्त्र सम्मत धर्म दोनों के प्रति याहां के जनजीवन की आस्था हो सकता है। वास्तव में भावना और विश्वास लोकजीवन की अभिव्यक्ति के तत्व हैं और दोनों के समन्वय से ही धर्म की उत्पति हुई है। धर्म के साथ भावना का अनुप्रेरण जरूरी है और यही तादात्म्य भक्ति और अनुष्ठान की विभिन्न क्रियाओं को जन्म देती है, जिनमें अनुष्ठान, पूजा-पाठ, तंत्र-मंत्र, जादू टोना आदि शमिल है। गढ़वाल के लोकजीवन में आदिम ध र्म की इन प्रवृतियों के दर्शन अनेक रूपों में होते है और यह भाव यहां के लोकगीतों में भी देखने का मिलता है। वेदों में जिस प्रकार पूजा का वर्णन है उसी प्रकार गढ़वाल में प्रकृति पूजा की जाती है, जिसमें अग्नि का आहवान ध ार्मिक अनुष्ठानों, विवाह आदि के अवसर पर किया जाता है। अग्नि पूजा में अग्नि के साथ विभिन्न सरोकारों को जोड़ा जाता है। ऐजा अगानि मेरा मात लोक मेरा मात लोक त्वेबिना अग्नि ब्रहमा भूखो रेगे, भूखो रैंगे! गढ़वाल में गंगा की पूजा अमरत्व प्रदान करने वाली महत्ता, जीवनदायिनी सरिता के साथ-साथ मूर्ति पूजा के रूप में भी की जाती है। गंगा के महात्म्य को देखते हुए गंगा के प्रति यहां के लोकगीतों में दृष्टिगोचर होती है। गढ़वाल में पवित्र वृक्षों की सुरक्षा भी लोक धर्म है। बड़ (बरगद), पीपल, कुश, दूब, श्रीफल, बेल, आम पंच्या (पदम), तुलसी कुणज का देवताओं की पूजा से सम्बन्ध होने के कारण ये वृक्ष पूज्य होते हैं और ऐसे वृक्षों का रोपना, सींचना व उनके चारों ओर चत्वारिका (चौरी) बनाना भी पूज्य माना जाता है, इसलिये यहां के लोकगीतों में वृक्षों के प्रति अनुराग मौजूद है। कार्य की सफलता के लिए भूमि की पूजा का भी रिवाज प्रचलित है जिसका वर्णन यहां के लोकगीतों में झलकता है। दैणा हुंय्या खोळी का गणेश दैण हुंय्या मोरी का नारैण। दैणा हुंय्या पंचनामा द्यवता दैणा हुंय्या भूमि का भुम्याळ।।

गढ़वाल के मांगल गीतों में पक्षियों के प्रति आत्मीयता ही नहीं झलकती है बल्कि उच्च स्थान भी प्राप्त होता है। अशुभ माने जाने वाले कौवे को मांगल गीतों में शगुन माना गया है। आवा कागा, बैठा कागा हरिया विरिछ बोल कागा, बोल कागा चौदिसों सगुन

गढ़वाल के लोकगीतों में यक्ष नागपूजा, भी है गढ़वाल के कई जगह यक्षजगत को अनिष्टिकारी शक्ति के रूप में जाना जाता है। जिसे शंति व सुरक्षा का देवता माना जाता है। घंटाकर्ण (घड़ियाल) को भी कहीं यक्ष माना गया है इसकी पूजा होती है। वीरों में वीर बाबा कलिया वीर, भैरू खितरपाल (क्षेत्रपाल), भूमिया नरसिंह (दो रूपों में डोंड्या व दूधिया) का उल्लेख लोकगीतों में मिलता है। अनिष्टकारी भूत, भैरव, जगस, मागी, आछरी, ऐड़ी, भराड़ी, हमभूत, रणभूत, मसाण अछरी, तोला सैंद आदि के गीत भी यहां गाये जाते है। इन शक्तियों से निजात पाने के लिए जो गीत हैं उन्हें रखवाली, रांसा, सैदाली कहते हैं। गढ़वाल के देवी-देवताओं की पूजा की नृत्यगीत मयी पूजा परम्परा है, जिसके लिये घडियाला (वाद्यवादन) आयोजित किये जाते हैं और स्थानीय देवी देवताओं की पूजा अर्चना की जाती है। गढ़वाल के जीवन के मांगलिक कार्यों व संस्कारों से सम्बन्धित सभी लोकगीतों को मांगल कहा जाता है। गढ़वाल में ये मांगल (संस्कार गीत) आज भी गाये जाते हैं। विवाह के मांगल में विवाह की सभी क्रियाओं में मांगल गीत गाये जाते हैं। बारातियों के साथ वधू पक्ष का उन्मुक्त हास-परिहास भी गीतों के द्वारा ही प्रदर्शित किया जाता है। गढ़वाल के बसन्त ऋतु में गाये जाने वाले गीतों में खुदेड़ गीत प्रमुख है। लेकिन व्याख्या के अधिक अहसास से ही इन गीतों के अर्थ को जाना जा सकता है। खल्याणी को दांदो मांजी खल्याणी को दांदो, झम। तेरी याद औंद मांजी शरील हिरांदों, झम।। चौफला गढ़वाल के मिलन गीत हैं, इनके पद-पद में इतिहास और अनुनय का मार्मिक चित्रण मिलता है। कन च भण्डारी तेरो मलेथा?

गढ़वाल में बारामासा लोकगीतों की अपनी एक विशिष्ट शैली है, जो मौखिक परम्परा में बड़ी लोकप्रिय है। बारामासा गीतों में षटऋतु वर्णन होता है- चैत का मैना चोरीन कर्यां चोरी की चीज न छुंरूयां, प्यारो मैना बैसाग को न ये तमाख धुवां, कालो कस कलेजा बैठलो खांसी पड़ली भुयां। रंवाई जौनसार में छोपती गीत प्रचलित हैं। इन गीतों में प्रेम, रूप और संवाद की त्रिवेणी समाहित हैं। ये गीत उल्लास के

अवसरों, त्योहारों और उत्सवों में गाये जाते हैं। गढ़वाल के रवांई-जौनसार क्षेत्र में लामण में न छोपती की तरह संवाद होते हैं और न इनमें नृत्य का समावेश होता है। तेरो मेरो नाणिये लोखड़ा ओरे साता डोक नाण पाण थामि थ दैण हाता। बाजूबन्द गढ़वाल के संवादात्मक प्रणय गीत है। बाजूबंद में स्त्री-पुरूष जंगलों में जाकर इसकी तान छेड़ते हैं- खणी जालो च्यूणों चार दिन होंद मनख्यों क्वू ज्वूणों। पहाड़ में समय-समय पर जो घटनायें घटित हुई, उन्हीं प्रसंगों को लेकर लोक कलाकारों व वादि्यों ने अनेक गीतों की रचना की है। इन गीतों से जो लोक जीवन में नई चेतना आयी, उसी ने उन सामायिक घटनाओं को लम्बे समय तक प्रासांगिक रखने का कार्य भी किया। ऐसे गीतों ने गढ़वाल में इतिहास के माफिक कार्य किया। द्वी हजार आठ भादौं का मास सतपुली मोटर बॉगिन खास गढ़वाल में मांगल व पूजा सम्बन्धी गीतों को छोड़कर अन्य लोकगीतों में बदलाव आता रहा क्योंकि लोक गीतों का साहित्य अलिखित होने के कारण इन गीतों की पंक्तियों में तुकबन्दी करते हुए जिसमें भी जैसी पंक्तियां जोड़ी वैसे ही गीत बनते चले गये। गढ़वाली गीतों के रचनाकारों की यही वह पीढ़ी थी, जिसने गढ़वाली गीतों को लिखित रूप में नई पहचान देने की सार्थक कोशिश की। इसके बाद इलेक्ट्रानिक्स मीडिया का उपयोग गढ़वाल के रचनाकारों गायकों ने किया। लोक कलाकारों/ रचनाकारों के ये प्रयास जन-जन तक लोकप्रिय भी हुये। इस बहुआयामी कार्य को कालजयी रचनाकार केशव अनुरागी, उमाशंकर सतीश, जीत सिंह नेगी, नरेंद्र सिंह नेगी, चंद्र सिंह राही व शिव प्रसाद पोखरियाल ने अंजाम दिया। इलेक्ट्रानिक मीडिया का उपयोग लोकगीत / लोकसंगीत के लिये किये जाने की जो शुरूआत हुयी वह आज अपने उत्कर्ष पर है। लेकिन पूर्व में दो जून की रोटी के लिए श्रोताओं / दर्शकों को आकर्षित करने का जो उपक्रम पूर्व में वादियों ने किया, वैसा ही कार्य कैसेटों की बिक्री के लिये अब कई गायक भौंड तरीकों से फिल्मी गीतों के अनुवाद अश्लील शब्दों व गढ़वाली गीतों में फिल्मी धुनों का समावेश कर रहे है। गढ़वाली गीतों के इस संक्रमण काल में नरेंद्र सिंह नेगी की गायकी बेहतरीन रचनाओं और उतने ही सुंदर संगीत के कारण आज लोकप्रियता के शिखर पर हैं। उन्होंने पहाड़ के सरोकारों को अपनी खूबसूरती से अपने गीतों में उकेरते हुए आम आदमी तक पहुंचाया है। यही कारण है कि आज गढ़वाली गीतों का बेताज बादशाह में रूप में जाने जाते हैं।

जनपद पौड़ी के प्रमुख मेले

खैरालिंग (मुण्डेश्वर)-यह ऐतिहासिक मेला जनपद के कल्जीखाल ब्लाक में मनाया जाता है। यहां असवालस्यूं पट्टी के 84 गांव और पटवालस्यूं व मनियारस्यूं गांव के हजारों लोग कौथिग (मेला) देखने उमड़ते हैं। यहां पर बकरों की बलि दिये जाने की प्रथा थी, किन्तु अनेक सामाजिक एवं सांस्कृतिक संस्थाओं द्वारा पशुबलि पर रोक लगाने का प्रयास किया जा रहा है। वर्तमान में पशुबलि प्रथा पर पूर्ण रोक प्रशासन द्वारा लगाई गई हैं। यह मंदिर जिला मुख्यालय पौड़ी से कल्जीखाल-बौंसाल मार्ग पर 29 किमी की दूरी पर समुद्रतल से 1800 मी. की ऊँचाई पर अवस्थित है। यहां पर जून माह के प्रथम सप्ताह में दो दिवसीय मेला लगता है और मनौती के रूप में मंदिर में धवज चढ़ाये जाते हैं। वर्ष 1972 में सर्वप्रथम स्वामी मन्ययन ने यहां पर पशुबलि विरोधी अभियान चलाया था।

बूंखाल कालिंका-कालिंका की पूजा मांगशीर्ष माह के शुक्ल पक्ष में कालिंका के पुजारियों द्वारा भूमिधारों एव चक्रधावकों के ग्रहों एवं पंचांगों के लग्नानुसार की जाती है। परम्परानुसार मेले में पांच-सात दिन पूर्व कालिंका मण्डाण (धार्मिक नृत्य) शुरू हो जाता है।

किवदंतियां हैं कि कालिंका का अवतरण करीब चार सौ वर्ष पूर्व गढ़वाल की कण्डवालस्यूं पट्टी के चौपड़ा गांव के एक शिल्पकार परिवार शिया लौहार के वंश में कन्या के रूप में हुआ। जनश्रुतियों के अनुसार एक दिन इस बालिका को उसके साथ ग्वाले मेडला के जंगल में गड्ढा खोदकर इस बालिका को दबाकर स्वयं घर आ जाते हैं।

काफी खोजबीन के बाद तीसरे दिन मश्त बालिका अपने माँ-बाप व गांव के प्रधान के सपने में आकर बताती है कि मैं अब कालिंका बन चुकी हूं और मुझे बूंखाल की भूमि में स्थापित किया जाय। तब से प्रतिवर्ष इस स्थान पर भव्य मेले का आयोजन किया जाता है, जिसे देखने के लिए स्थानीय व दूरदराज के लोग यहां आते हैं।

कठबद्दी-बैसाख माह के तीसरे सोमवार को जनपद के विकासखण्ड खिर्सू के कोठगी एवं ग्वाड़ गांव में प्रतिवर्ष बारी-बारी से एक अनोखा मेला आयोजित किया जाता है। मेले का मुख्य आकर्षण 450 हाथ लम्बा बावला (पहाड़ी घास) की मोटी रस्सी के ऊपर बुरांश की लकड़ी से बना आदमकद पुतला लगभग 200 मी. की ऊँचाई से नीचे गांव में स्थित पंचायत घर तक संतुलन के साथ फिसलाया जाता है।

यद्यपि यह पारम्परिक खेल दो से तीन मिनट में ही पूरा हो जाता है, किन्तु स्थानीय लोग कई माह पूर्व से इसकी तैयारी एवं इंतजार करते हैं। दो-तीन सप्ताह तक सामूहिक रूप से मोटा रस्सा बन जाता है। क्षेत्रीय घंडियाल देवता की पूजा अर्चना की जाती है तथा ढोल दमाऊ के साथ सामूहिक नृत्य होते रहते हैं।

बैकुंठ चतुदर्शी मेला-जिला मुख्यालय से 8 किमी पैदल 29 किमी मोटर मार्ग की दूरी पर श्रीनगर में स्थित कमलेश्वर महादेव मंदिर में आयोजित होने वाला बैकुंठ चतुदर्शी मेला पूरे पहाड़ में विख्यात है।

मुख्य रूप से यह मेला संतान प्राप्ति के लिए नि:सन्तान महिलाओं द्वारा बैकुंठ चतुदर्शी को रातभर प्रज्वलित दीप लेकर खड़े रहकर की जाने वाली तपस्या के लिए जाना जाता है। केदारपुराण में उल्लेख है कि त्रेतायुग में भगवान श्रीराम ने रावण का वध करने के पश्चात गुरू वशिष्ट की आज्ञानुसार ब्रह्महत्या से मुक्ति के लिए शिव उपासना की। शिव ने राम की परीक्षा लेने हेतु एक कमल छुपा दिया।

सौ में से एक कमल कम पाकर श्रीराम ने उस कमल के स्थान पर अपना एक नेत्र शिव को अर्पित कर दिया। श्रीनगर गढ़वाल का यह सबसे प्राचीन मेला है, इस दिन यहां पूजा अर्चना के अतिरिक्त जिला प्रशासन एवं नगर पालिका परिषद द्वारा सांस्कृतिक कार्यक्रमों का आयोजन किया जाता है।

नीलकंठ महादेव-पौड़ी जनपद के सुप्रसिद्ध धार्मिक केन्द्र स्वर्गाश्रम के पार्श्व भाग चन्द्रकूट अग्नि पार्श्व में नीलकण्ठ महादेव का मंदिर है। श्रावण मास में बम-बम बोले के जयघोष के साथ देश के विभिन्न क्षेत्रों में से लाखों कांवड़िये आस्था को लेकर यहां आते हैं। पूरे भारतवर्ष में नीलकण्ठ का विशेष महात्म्य है।

शिवरात्रि के अतिरिक्त श्रावण मास में जलाभिषेक के लिए नीलकण्ठ मंदिर में भव्य मेला लगता है, जिसमें स्थानीय जनता एवं जिला प्रशासन पूर्ण सहयोग करता है।

जनपद के प्रमुख धार्मिक/पर्यटक स्थल

पौड़ी जनपद अपने दर्शनीय, ऐतिहासिक, धार्मिक एवं नैसर्गिक पर्यटन के लिए यहां के मनोहारी दृश्य, देवमंदिर, ऐतिहासिक स्थल, पर्यटकों के आकर्षण के केंद्र हैं। महाभारत एवं रामायण कालीन घटनाओं के कई सन्दर्भ यहां उपस्थित हैं। प्रदेश सरकार उत्तराखण्ड को पर्यटन प्रदेश घोषित कर चुकी है, इसी घोषणा के फलस्वरूप यहां के पर्यटक स्थलों को जीर्णोद्वार किया जा रहा है। जिससे देश–विदेश के पर्यटक इस देवभूमि की ओर आकर्षिक हो रहे हैं और लगातार पर्यटकों की संख्या में वृद्धि हो रही है।

देवलगढ–देवलगढ़ गढ़वाल राजा की राजधानी रही है जो कि बाद में श्रीनगर में स्थापित हुई। यह शक्तिपीठ के नाम से प्रसिद्ध है। यहां पर राजराजेश्वरी देवी का प्राचीन मंदिर है और यह देवी गढ़वाल नरेशों की कुल देवी के रूप में प्रसिद्ध है। यह श्रीनगर से लगभग 20 किमी दूर चार हजार फीट की ऊंचाई पर स्थित है। यहां पुरातात्विक महत्व के स्थल हैं तथा भव्य गौरा देवी मंदिर भी पर्यटकों के आकर्षण का केंद्र है।

धारी देवी–यहां पर भगवती कराल–वंदना काली की काले पत्थर की आकर्षक मूर्ति है। किवदंतियों के अनुसार बताया जाता है कि प्रातः सौम्य, मध्याह्न भीष्म और सांयकाल शांति रूप में मूर्ति दिखाई देती है। यह श्रीनगर–बद्रीनाथ मोटर मार्ग पर श्रीनगर से 15 किमी की दूरी पर अलकनन्दा नदी के पार्श्व में कल्यासौड़ के नीचे स्थित है।

बिनसर–सघन देवदार के वनों से आच्छादित लगभग 7500 फीट की ऊँचाई पर बिन्सर महादेव का प्राचीन विशाल मंदिर प्राचीन वास्तुकला हेतु प्रसिद्ध है। दूधतोली के अंचल में तथा पौड़ी से थलीसैंण मार्ग पर लगभग 116 किमी0 की मोटर मार्ग तथा 10 किमी0 लगभग पैदल मार्ग की दूरी पर बिन्सर स्थित है।

लक्ष्मणझूला–लक्ष्मणझूला ऋषिकेश के पास गंगा के बायें पार्श्व में अवस्थित है। यह प्रदेश का प्रसिद्व धर्मस्थल है। यहां स्वर्गाश्रम, गीता भवन, परमार्थ निकेतन आदि आश्रम आधुनिक ढंग से निर्मित हैं। यह तीर्थस्थल है तथा यहां लक्ष्मण जी का मंदिर है। गंगा जी के ऊपर यहां झूला पुल हैं जो लक्ष्मणझूला व रामझूला के नाम से प्रसिद्व है।

नीलकण्ठ–लक्ष्मणझूला से 8 कि.मी. की पैदल दूरी व 22 कि.मी. मोटर मार्ग पर 3 हजार फीट की ऊँचाई पर नीलकंठ महादेव का मंदिर स्थित है। यह साधुओं के सिद्धि स्थल के रूप में प्रसिद्ध है। पतित–पावनी गंगा और सुदूर भागों की छटा का दिग्दर्शन इस स्थान से सुलभ है।

ताड़केश्वर–जनपद पौड़ी के पर्यटन सर्किट लैंसडोन से 39 कि.मी. दूर तथा कोटद्वार शहर से 70 कि.मी. की दूरी पर स्थित 5400 फीट की ऊँचाई पर सुरम्य देवदार के सघन वृक्षों से आच्छादित ताड़केश्वर महादेव विष गंगा म मधु गंगा का उद्गम स्थल भी है। यहां पर शिवरात्रि के अवसर पर भव्य मेला आयोजित होता है।

ज्वाल्पा देवी–पौड़ी–कोटद्वार मार्ग पर पौड़ी से 34 कि.मी. की दूरी पर स्थित शक्ति पीठ के रूप में ज्वाल्पा देवी का मंदिर स्थित है। यहां भगवती ज्वाल्पा का प्राचीन मंदिर है। दशहरे के अवसर पर यहाँ विशाल मेला लगता है।

क्यूंकालेश्वर मंदिर–कहा जाता है कि तारक दैत्य से पीड़ित होकर यमराज ने पौड़ी के निकट क्यूंकालेश्वर नाम से प्रचलित पर्वत श्रृंखला पर तपस्या की थी और भगवान शिव ने यमराज (कीनाश) का क्यूंकालेश्वर में वास करने का वचन दिया। यमराज की धर्मस्थली क्यूंकालेश्वर को पुराणों में कीनाश पर्वत के नाम से जाना जाता है। यहां पर महाशिवरात्रि के अतिरिक्त वर्ष भर पूजा अर्चना होती है। 2200 मीटर की ऊंचाई पर स्थित यह सुंदर देवस्थल देवदार, बांज, बुरांस, चीड़, सुराई, आदि सघन वृक्षों से आच्छादित है और पर्यटन स्थल के साथ–साथ धार्मिक आस्था का भी प्रतीक है।

व्यास घाट–यह स्थल देवप्रयाग से 14 कि.मी. की दूरी पर गंगा तट पर स्थित है। कहा जाता है कि यह व्यास मुनि का तपस्या स्थल था। मकर व विषुवत संक्रांति और बसन्त पंचमी आदि पर्वों पर लोग स्नान करने यहाँ आते हैं।

कण्वाश्रम–कोटद्वार से 14 कि.मी. की दूरी पर कण्वाश्रम स्थित है। यहां लगभग 5900 वर्ष पूर्व महर्षि कण्व का सुविख्यात विश्व विद्यालय था, जहाँ पर्याप्त संख्या में छात्र अध्ययन करते थे। विश्वामित्र ने भी यहां तपस्या की थी। विश्वामित्र व मेनका के परिणय से उत्पन्न शकुन्तला का पालन तथा शकुन्तला व दुश्यंत के पुत्र भरत का जन्म यहीं पर हुआ था। वर्तमान में इस स्थान को योग व ध्यान केंद्र तथा बहुआयामी पर्यटन स्थल के रूप में विकसित किया जा रहा है।

दिगोलीखाल–धुमाकोट से 13 कि.मी. की दूरी पर यह स्थान गुजडु गढ़ी की उपत्यका में है और गढ़वाल व अल्मोड़ा की संधि में है। इस क्षेत्र के निवासियों का स्वतंत्राता संग्राम में सर्वाधिक योगदान रहा है। यह पर्यटकों के लिए देखने योग्य क्षेत्र है, जो कि अपनी प्राकृतिक छटा के लिए प्रसिद्ध है। मिर्च, नारंगी, हल्दी, अखरोट आदि के लिए यह क्षेत्र प्रसिद्ध है।

कार्बेट राष्ट्रीय उद्यान ढिकाला–हिमालय की तलहटी पर स्थित अंतर्राष्ट्रीय ख्याति प्राप्त कार्बेट नेशलन पार्क वन्य जीव जन्तु विहार के लिए प्रसिद्ध है। इस उद्यान की शोभा निराली है। नाना प्रकार के वन्य जीन जन्तुओं का स्वछन्द विचरण, ऊँचे–ऊँचे मचान, शीशम के हरे वृक्ष, घास आदि पर्यटकों का मन मोह लेते हैं। यहा पर सभी आधुनिक सुविधाएं उपलब्ध हैं। कोटद्वार तथा रामनगर से यहाँ का मार्ग है। कालागढ़ बांध कण्डी आदि रमणीक स्थलों का भ्रमण यहां पर आसानी से किया जा सकता है।

सोनानदी पक्षी विहार–यह कार्बेट नेशनल पार्क के पश्चिमी भाग पर सोना नदी क्षेत्र में 301.18 वर्ग कि.मी. में फैला है। कोटद्वार से लगभग 47 कि.मी. दूर है। यहाँ पक्षियों की 580 प्रजातियां पाई जाती है। इसके अतिरिक्त हाथी, बाघ, चीता, सांभर, भालू आदि जानवर भी पाये जाते हैं। पर्यटकों के आवास हेतु हल्दू पड़ाव व कांडा नामक स्थान पर वन विश्राम भवन हैं। सोनानदी पक्षी विहार पर्यटकों के लिए खुलने का समय 15 जून तक होता है।

कोट महादेव–कोट महादेव का मंदिर पट्टी सितोनस्यूं में स्थित है तथा महर्षि वाल्मीकि की तप स्थली थी। मान्यता है कि भगवान

श्रीराम के पुत्र लव–कुश द्वारा श्री राम के अश्वमेघ यज्ञ का घोड़ा रोकने से भगवान श्रीराम का यहाँ आगमन हुआ था। इस स्थान पर ही श्रीराम ने लव–कुश को अपनाया तथा माता सीता को साथ चलने के लिए कहा। माता सीता फलस्वाड़ी गांव के मैदान में कार्तिक शुक्ल पक्ष द्वादशी के दिन धरती की गोद में समाई थी, तब से निरंतर फलस्वाड़ी के मैदान में इगास के दूसरे दिन प्रतिवर्ष मनसार नाम से मेला धूमधाम से मनाया जाता है। निकट के देवलगांव में लक्ष्मण जी का मंदिर है, इस मंदिर में लक्ष्मण की उत्तानवस्था में मूर्ति है। किवदंतियां हैं कि माता सीता इसी स्थान पर निवास करती थी।

सिद्धबली–कोटद्वार से लगभग 2 कि.मी. उत्तर में खोह नदी के बायें पार्श्व में सिद्धबली हनुमान का एक प्रसिद्ध मंदिर है, जिसमें न केवल पर्वतीय क्षेत्रों के श्रद्धालु अपितु मुरादाबाद, बिजनौर, मेरठ, मुजफ्फरनगर आदि स्थलों से भी श्रद्धालु दर्शनार्थ आते हैं।

लैंसडौन–पर्यटक नगरी लैंसडोन समुद्र तल से 5600 फीट की ऊँचाई पर, रेलवे स्टेशन कोटद्वार से 39 कि.मी. तथा पौड़ी से 81 कि.मी. की दूरी पर स्थित है। लार्ड लैंसडाउन द्वारा स्थापित गढ़वाल राईफल्स के मुख्यालय के रूप में प्रसिद्ध है। यह जनपद गढ़वाल में एक मात्र छावनी है। यह स्थल अत्यन्त रमणीक है और पर्यटक यहाँ के मनोरम दृश्य देखकर आनंद विभोर हो जाते हैं। यहां पर प्रसिद्ध कालेश्वर महादेव का मंदिर भी है, जिसके कारण लैंसडोन को कालेश्वर नाम से भी जाना जाता है।

कोटद्वार–गढ़वाल के दक्षिणी छोर पर मंडल का रेलवे स्टेशन, सबसे पुरानी मण्डी, मोटरों का सबसे बड़ा अड्डा और इमारती लकड़ी की सबसे बड़ी मण्डी है।

भाबर की उपजाऊ भूमि कोटद्वार की बहुमूल्य सम्पत्ति है। यह गढ़वाल का प्रमुख प्रवेश द्वार है। यहाँ पर्यटक गढ़वाल की धरती पर स्थित विभिन्न ऐतिहासिक, नैसर्गिक और धार्मिक स्थलों का भ्रमण सरलतापूर्वक कर सकते हैं। यहां से लैंसडाउन 39 कि.मी. व कण्वाश्रम 14 कि.मी. की दूरी पर पर्यटक स्थल हैं। कोटद्वार से सोनानदी पक्षी विहार में भी प्रवेश किया जा सकता है।

कमलेश्वर मंदिर–श्रीनगर अलकनंदा के बायें तट पर खुली मनोरम घाटी में स्थित है। श्रीनगर में कोटद्वार और ऋषिकेश के मोटर मार्ग मिलते हैं। यह गढ़वाल नरेश की पुरानी राजधानी रही है। यहां कमलेश्वर महादेव का प्राचीन मंदिर है। यहां श्रीयंत्र एक शिला पर खुदा है, जिसे शंकराचार्य ने अलकनंदा में फेंका था। श्रीनगर गढ़वाल विश्वविद्यालय की स्थापना से यह नगर आधुनिक शिक्षा का केंद्र बनता जा रहा है।

कला–कौशल, शिक्षा तकनीकी प्रशिक्षण, काष्ठ–कला, ताम्र कला, स्वर्ण–कला के उत्थान के लिए यह नगर प्रसिद्ध है। श्रीनगर का सम्पूर्ण भाग विभिन्न देवी–देवताओं का स्थान माना जाता है। गणेश जी का मंदिर भी यहां स्थित है। यहां पर मर्हिष मर्दिनी, कंस मर्दिनी आदि अनेक शक्तियों के गुप्त व प्रकट स्थान हैं। यहां से पांच कि. मी. देवप्रयाग मार्ग की ओर अलकनंदा तट पर आकर्षक विल्वकेदार स्थल है। मान्यता है कि यहाँ किरात रूप में शिव और अर्जुन युद्ध हुआ था।

कांडा–पौड़ी देवप्रयाग मोटर मार्ग पर सबदरखाल के निकट स्थित है। यहां पर देवी का मंदिर है। यहां विशाल मेला लगता है।

रामीसेरा–यह रमणीक स्थली दुगड्डा–ढिकाला मोटर मार्ग पर स्थित है यहां पर देवी का मंदिर है। यहां विशाल मेला लगता है।

विल्वकेदार–श्रीनगर से 5 कि.मी. नीचे अलकनन्दा के तट पर यह मंदिर स्थित है। मान्यता है कि किरात रूप में शिव और अर्जुन का किरातार्जुन युद्ध विल्वकेदार में ही हुआ था।

दमदेवल–सतपुली–थलीसैंण मोटर मार्ग पर सघन वन में स्थित है। यह स्थान अत्यन्त मनोहर है। सेबों के उद्यान और निकट कुमकुम डालियों से युक्त यह रमणीय स्थली दर्शकों का मन मोह लेती हैं।

तड़ासर–देवदार वनों के मध्य तड़ासर महादेव का बहुत ही प्राचीन मंदिर, जिसमें प्राचीन सुंदर मूर्तियां हैं, लैंसडोन से लगभग 21 कि. मी. की दूरी पर 6 हजार फीट की ऊँचाई पर यह मनोरम स्थल स्थित है।

चरेख–कोटद्वार से लगभग 6 कि.मी. की दूरी पर चरेख की चोटी लगभग 4 हजार की ऊँचाई पर अत्यन्त रमणीक स्थली है। यहां से हिमालय का विस्तृत मनमोहक दृश्य दर्शकों का हृदय मोह लेता है। चारों ओर सघन वन और पक्षियों का मधुर संगीत इस पहाड़ की शोभा हैं। कहते हैं कि आयुर्वेदाचार्य चरक यहीं रहते थे और यहीं उन्होंने चरक शास्त्र की रचना की थी।

आदेश्वर महोदव–रानीगढ़ पौड़ी मारूखेत मार्ग पर अदवानी लगभग 19 कि.मी. दूरी पर बांज, बुरांस आदि के जंगलों से घिरा एक आकर्षक स्थल है। अदवानी से लगभग 2 कि.मी. पर रानीगढ़ चोटी घने जंगलों की प्राकृतिक छटा से युक्त आदेश्वर महादेव का मंदिर आकर्षण का केंद्र है।

सल्ट महादेव–यह धार्मिक स्थली कुमांऊ गढ़वाल की सीमा पर रामनगर–बैजरो मोटर मार्ग पर स्थित है। यहां पर शिवजी का प्राचीन मंदिर है। यहां पर कुमांऊ गढ़वाल का विशाल मेला लगता है।

कालागढ़–कोटद्वार से 48 कि.मी. दूरी पर स्थित कालागढ़–रामगंगा बांध क्षेत्र के कारण पर्यटकों के आकर्षण का मुख्य केंद्र है। यहां सिंचाई विभाग व वन विभाग के अतिथि गृह आवास हेतु उपलब्ध है।

दूधातोली–भारत में ब्रिटिश हुकूमत के खिलाफ विद्रोह करने वाले महान स्वाधीनता सेनानी वीरचंद्र सिंह गढ़वाली की समाधि स्थल है, जिस पर 12 जून को मुक्ति दिवस के नाम से मेला लगता है, जिसमें पौड़ी, चमोली जिलों में बड़ी संख्या में लोग भाग लेते हैं। इस स्थान में अनेक स्थानीय नदियों के उद्गम स्थल हैं।

खिर्सू–पौड़ी से 19 कि.मी. दूरी पर खिर्सू 1700 मीटर की ऊँचाई पर बाँज, बुरांश के घने जंगलों के मध्य आकर्षक स्थल है। यहां पर्यटक आवास गृह तथा वन विश्राम भवन है। यहां से हिमालय की लगभग 300 चोटियों का विहंगम दृश्य दिखायी देता है। पर्यटकों के आकर्षण के लिहाज से यह जनपद के उपयुक्त स्थानों में एक है।

चीला क्षेत्रा–1983 में स्थापित राजाजी राष्ट्रीय पार्क का चीला क्षेत्रा पौड़ी जनपद में स्थित है। यह हरिद्वार से 8 कि.मी. की दूरी पर है। एशियाई हाथी यहां का मुख्य जानवर है। इसके अलावा चीता, जंगली बिल्ली, भालू, हिरन आदि वन्य जीव तथा अनेक प्रजातियों के पक्षी पाये जाते हैं।

जनपद गढ़वाल की दिवंगत विभूतियां

श्री पुरिया नैथाणी

विलक्षण कूटनीतिज्ञ तथा साहसी सेना नायक श्री पूर्णमल उर्फ पुरिया नैथाणी का जन्म शुक्लपक्ष पूर्णमासी भाद्रपद सम्वत् 1705 वि. (अगस्त सन् 1648 ई.) के दिन नैथाणा गांव के श्री गोंडु नैथाणी के घर हुआ था। बड़ी उम्र में संतान होने के कारण पिता बहुत प्रसन्न थे। उन्होंने ज्योतिषियों से गणना कराई तो सबने कहा बालक बहुत होनहार प्रतीत होता है, यह एक महान व्यक्ति और विजयी योद्धा होगा।

महत्वपूर्ण कार्यः-

श्रीनगर की चतुरतापूर्ण रक्षा- सन् 1680 ई. में दिल्ली में कूटनैतिक सफलता प्राप्त करने के बाद ये श्रीनगर दरबार में एक अत्यन्त विश्वासपात्र और प्रतिष्ठित राज कर्मचारी के रूप में कार्य करने लगे। तदुपरान्त महाराजा फतेहशाह जी की दिग्विजय में श्री पुरिया नैथाणी ने एक सेनापति के रूप में महत्वपूर्ण भाग लिया। एक प्रकार से ये उनके दाहिने हाथ रहे। उसी सिलसिले में इन्हें राज्य की पूर्वी सीमा पर कुमाऊंनी सेना के आक्रमणों से गढ़वाल की रक्षा करने के लिए अनवरत संग्राम करना पड़ा।

कुमाऊं के राजा जगतचन्द ने एक बड़ी सेना लेकर श्रीनगर में आक्रमण कर दिया। पुरिया नैथाणी के वाक्चातुर्य और नीतिज्ञता से प्रभावित होकर राजा जगतचन्द ने श्रीनगर एक ब्राह्मण को दान में दे दिया, और राजनीति में लूटपाट करके कुमाऊंनी सेना वापिस चली गई। पुरिया नैथाणी ने पूर्वी सीमा की नाकाबंदी मजबूत कर दी। और गढ़वाली सेना ने सन् 1710 ई. में सीमा से आगे बढ़कर कुमाऊं के कुछ सीमावर्ती गांवों पर भी कब्जा कर लिया। कुमाऊं नरेश को जब यह समाचार मिला तो वे कुछ नहीं कर पाये, क्योंकि पुरिया जी की बुद्धिमता से गढ़वाली सेना पूर्णतया सुसज्जित कर दी गई थी। और सीमा प्रांतीय गढ़ों में यथेष्ट युद्ध सामग्री भी पहुंचा दी गई थी।

कठैत उपद्रव में प्रशंसनीय कार्य- सन् 1715 ई. में महाराजा फतेहशाह का देहावसान हुआ और उनके ज्येष्ठ पुत्र केवल नौ मास ही राज्य कर पाये थे कि अकस्मात उनका भी देहान्त हो गया। राज्य में उस समय कोई उत्तराधिकारी नहीं था लेकिन रानी गर्भवती थी। इस समस्या को लेकर मंत्रियों में मतभेद उत्पन्न हो गया। ऐसी विकट परिस्थिति में राज्य के शुभचिन्तकों ने पुरिया जी को संदेश भेजा, ये उन दिनों नैथाणा में विश्राम करने लगे थे। ये तत्काल श्रीनगर पहुंचे और इन्होंने समझौता कराया कि राज्याधिकारी का जन्म होने तक स्वर्गीय महाराजा दलीपशाह के छोटे भाई उपेन्द्रशाह राजकार्य चलावें यदि रानी की लड़की हो तो आगे भी वे राज्य करते रहेंगे और यदि पुत्र उत्पन्न हो तो उसका ही राजतिलक किया जायेगा। इस समझौते के अनुसार महाराज उपेन्द्रशाह ने आठ महीने तक राज्य किया। और तब महाराजा प्रदीपशाह का जन्म हुआ। नवजात राजकुमार का उसी समय राजतिलक कर दिया गया।

राज्य में दरबारियों में पारस्परिक वैमनस्य और लालच उत्पन्न हो गया और वे सुकुमार शिशु की हत्या का षड्यंत्र रचने लगे जिसकी भनक राजमाता को भी लग गई और उन्होंने रातोंरात पुरिया जी को नैथाणा से बुलाकर सब बातें बतलाई और अनुरोध किया कि किसी सुरक्षित स्थान में ले जाकर शिशु राजा की रक्षा कीजिए।

राज्य में कठैत बन्धुओं का उपद्रव बढ़ गया। कठैत बन्धुओं ने अपने परिवार के छत्तीस व्यक्ति खुद मार दिये तथा रण सज्जा से सुसज्जित होकर अपने कोठे से निकल पड़े। घमासान युद्ध मच गया, कठैत लोग बड़ी वीरता से लड़े, उन्होंने नागु सौंट्याल को मार डाला तथा अन्य कई व्यक्तियों को तलवार से मौत के घाट उतार दिया। जब और राजकर्मचारी मुकाबले पर नहीं दिखाई दिये तब वे अपने मूल इलाके दशौली की ओर चल दिये। भट्टी सेरा से आगे कठिन चढ़ाई चढ़कर जो पहुंचे तो मदनसिंह भंडारी व भीमसिंह बर्त्वाल अपने सैनिकों समेत मिल गये। और पांचों कठैत भाई वहीं पंचभयाखाल की उस धार पर मार डाले गये!

इस प्रकार नीतिज्ञतापूर्वक उस कठैत उपद्रव को शांत कराके श्री पुरिया नैथाणी श्रीनगर वापिस आये और राजभक्त मंत्रियों से मिलकर वहां दुबारा शांति स्थापित की। श्री शंकर डोभाल मंत्री की स्मृति में इन्होंने शंकर मठ का निर्माण कराया जो अभी तक विद्यमान है। फिर ये नैथाणा से बालक प्रदीपशाह को श्रीनगर ले आये और वहां गद्दी पर बिठाकर, राजमाता के विशेष अनुरोध पर शासनकार्य में उन्हें परामर्श देने लगे।

कफ्फू चौहान

उदयपुर परगने की जुवा पट्टी में गंगा नदी के किनारे एक ऊंचे टीले पर ''उपूगढ़'' स्थित था। उसका शासक उन दिनों चौहान वंशीय युवक कफ्फू चौहान था। उसे अपने गढ़ की स्वाधीनता प्राणों से प्यारी थी, और उसे दुख था कि दक्षिणी गढ़पतियों ने बिना लड़े कैसे महाराज अजयपाल की संरक्षता स्वीकार कर ली है। उसने इनके उत्सव में शामिल होने से इंकार कर दिया जब उसे दुबारा चेतावनी भेजी गई तो उसने लिख भेजा- मैं पशुओं में सिंह की तरह और पक्षियों में गरूड़ की तरह हूं, मैं किसी की भी आधीनता स्वीकार नहीं कर सकता। परिणाम स्वरूप महाराजा अजयपाल ने एक बड़ी सेना भेजकर चढ़ाई बोल दी।

गंगातट पर श्रीनगरी सेना और इधर गंगा की गरजती तरंगों से संघर्ष करता हुआ उपूगढ़ अचल खड़ा था। सिर्फ एक झूला ही इस ओर आने का एकमात्र साधन था। माता और पत्नी के समझाने के बावजूद भी कफ्फू चौहान ने आधीनता स्वीकार नहीं की। कफ्फू चौहान ने रात को झूला पुल को उड़ा दिया। सुबह तड़के दोनों ओर से युद्ध की तैयारी हो गई और मारू बाजे बजने लगे। सुबह कफ्फू ने आकर चरण छू कर आर्शीवाद लिया। माता ने एक सहायक सरदार देबू को बुलाकर कहा बेटा यदि उपूगढ़ के भाग्य फूट ही जाय तो पहिले खबर कर देना। जब हमारा गढ़पति ही नहीं रहेगा, तो हम भी नहीं रहेंगे। हमारे गढ़पति को आजादी प्यारी है, तो हम भी जीते जी अधीनता स्वीकार नहीं करेंगे। अजयपाल उपूगढ़ की राख पर ही अधिकार कर सकता है-जीवित उपूगढ़ पर नहीं!

उधर जब श्रीनगरी सेनापति ने देखा कि एकमात्र झूला कटा हुआ है तो वे बहुत उत्तेजित हुए। उन्होंने फौरन थोड़ी ही दूरी पर एक नया झूला बनवाया और सेना लेकर उपूगढ़ को घेर लिया। इधर थोड़ी सेना थी सेना क्या थी पागलों और स्वाधीनता के मतवालों का जुलूस था। भंयकर युद्ध हुआ, कफ्फू ने वीरता से युद्ध किया अपने सब शत्रु सैनिकों को मौत के घाट उतार दिया।

श्रीनगर सेना में भगदड़ मच गयी और मैदान साफ हो गया। कफ्फू खुशी खुशी लौटता और देखता है कि सारा गढ़ धरधरा कर जल रहा

है। बात यह हुई कि जब कफ्फू शत्रु के बीच मारकाट मचा रहा था और बड़ी देर तक बाहर नहीं दिखाई दिया तो देबू ने समझा की माता की आंशका पूरी हुई इसलिये उसने गढ़ में यह खबर पहुंचा दी। अत: वह गढ़वाली ललनाओं का जौहर था। आग के शोले आकाश में पहुंच रहे थे, और कफ्फू बेसुध होकर भूमि में पड़ा यह सोच रहा था कि जिस माता और प्रियतमा और उपूगढ़ के लिए मैंने यह दुस्साहसपूर्ण कार्य किया था, आखिर में क्या उसका यही परिणाम होना था।

जब उसे होश आया तो वह महाराजा अजयपाल के समक्ष बंदी की तरह घिरा हुआ था। महाराजा के आश्वासन की यदि आधीनता स्वीकार कर लोगे तो उपूगढ़ से भी बड़ा अधिपति बना दूंगा के बावजूद कफ्फू चौहान ने मर जाना पसंद किया लेकिन महाराज अजयपाल के समक्ष सिर झुकाना पसंद नहीं किया। उस अद्भूत साहस, वीरता और आत्म सम्मान की भावना को देखकर महाराजा आश्चर्य चकित हो गये। उन्होंने सिंहासन से उतर कर मृतक कफ्फू के लिए सिर झुकाया और कहा वीर, तुम जीते, मैं हारा! कफ्फू की वीरता को देखकर सबके मन में एक ही बात आ रही थी-वीर गया, पर वीरता शेष रह गई।

श्री मोलाराम तोमर

दिल्ली के चित्रकार श्री शामदास से पांचवी पीढ़ी में श्री मंगतराम के सुपुत्र के रूप में सन् 1743 ई. में श्रीनगर में इनका जन्म हुआ। ये सात भाई थे लेकिन अन्य किसी के बारे में कोई विवरण नहीं मिलता। इनकी माता का नाम रामदेवी था। इनका परिवार का वास्तविक व्यवसाय स्वर्णकारी था। तथ्य यह है कि उन दिनों प्राय: सभी हिन्दू चित्रकार, विशेषकर राजपूत शैली के चित्रकार पेशे से स्वर्णकार ही थे, लेकिन साथ ही कला साधना भी करते थे।

इनकी मृत्यु सन् 1833 ई. में हुई।

महत्वपूर्ण कार्य:-

गढ़वाली चित्रांकन शैली के एक प्रमुख आचार्य, कुशल राजनीतिज्ञ सुन्दर कवि व इतिहास लेखक तथा सफल मनस्तत्वेत्ता श्री मौलाराम ने विभिन्न दिशाओं में अपनी प्रतिभा का चमत्कार दिखाया था। इनकी रचनाओं ने गढ़वाल की कला व साहित्य को समृद्ध कर दिया है। अठ्ठारहवीं शताब्दी के उत्तरार्द्ध तथा उन्नीसवीं शताब्दी के पूर्वार्द्ध के गढ़वाल पर जो राजनैतिक अंधकार छाया हुआ था, उसके बावजूद इन्होंने कला, साहित्य और ज्ञान की मशाल को प्रज्जवलित रखा, और इस कारण इन्होंने स्वयं अपने आप ही को नहीं बल्कि इस प्रदेश को भी गौरव प्रदान कर दिया था।

श्री गढ़ु सुम्याल

रणबांकुरे भड़ श्री गढ़ु सुम्याल का जन्म लगभग सन् 1395 ई. में गढ़वाल राज्य की दक्षिणी पूर्वी सीमा पर स्थित तल्लि खिमसरि हाट नामक स्थान में हुआ था। इनके पिता श्री ऊदी सुम्याल रावत थे और इनकी माता का नाम कुंजावती था। लेकिन इनके जन्म से कुछ महिने पहले ही इनके पिता का देहांत हो चुका था। इनका विवाह सरू कुमैण के साथ हुआ। इनकी मृत्यु सन् 1450 ई. के लगभग हुई।

गढ़ु सुम्याल पहले तिमल्याली आए वहां से टुपली कोट आए फिर ये खिमसरि हाट पहुंचे जहां इन्होंने अपने राज्यारोहण का उत्सव मनाया। तिमल्याली सौकाणी व रूद्रपुर में इन्हीं का राज्य हो गया। इन्होंने लंबे समय तक राज्य किया। जिसमें प्रजा सुखी और सम्पन्न थी।

श्री लोदी रिखोला

पट्टी मल्ला बदलपुर के बयेली गांव में लगभग सन् 1590 ई. में इनका जन्म एक रिखोला परिवार में हुआ था। इनके पिता अपने इलाके के एक प्रतिष्ठित थोकदार थे। इनका विवाह एक संभ्रांत थोकदार परिवार की पुत्री से हुआ।

महत्वपूर्ण कार्य:-

लोदी रिखोला ने तिब्बत युद्ध में वीरता का परिचय दिया। इन्होंने दिल्ली लुटेरों का दमन करने के लिए जिस स्थान पर रक्षणी सेना नियुक्त की थी। उस स्थान को अब रिखणीखाल कहते हैं।

महाराजा महीपतिशाह के आदेश पर लोदी रिखोला ने सिरमौरी लुटेरों के दांत खट्टे कर दिये। लेकिन दरबारियों द्वारा रचित षड़यंत्र में इनकी मृत्यु हो गई। गढ़वाल का रखवाला होने के कारण इन्हें रिखोला की उपाधि दी गई।

●श्री कलम सिंह नेगी

श्री कलम सिंह नेगी का जन्म जिला पौड़ी गढ़वाल की पट्टी मौदाड़स्यूं के ईड़ा ग्राम में 10 अगस्त सन् 1906 ई. को हुआ था। इनके पिता श्री भूपाल सिंह नेगी का इनके बचपन में ही देहांत हो गया था। अत: माता ने ही इनका पालन पोषण किया और फिर इनके मामा श्री हरेन्द्र सिंह रावत जी की सहायता से इन्हें शिक्षा दिलाई। सन् 1924 ई. में आगरा से इन्होंने हाईस्कूल परीक्षा उत्तीर्ण की। फिर सन् 1928 में इन्होंने वनारस हिन्दू विश्वविद्यालय से बी.ए. की परीक्षा उत्तीर्ण की और सन् 1930 ई. में लखनऊ विश्वविद्यालय से इतिहास का विषय लेकर ये एम.ए. हुए। श्री गोपाल कृष्ण गोखले द्वारा भारत प्रसिद्ध भारत-सेवक-समिति स्थापित की गई थी जिसके प्रधान डॉ. हृदयनाथ कुंजरू थे। उन्होंने इन्हें समिति का आजीवन सदस्य नियुक्त कर दिया। समिति का उद्देश्य भारत की सेवा के लिए आत्मोत्सर्ग की भावना वाले युवकों को प्रशिक्षित किया जाय और उन्हें आर्थिक निश्चिन्तता प्रदान करके भारत के उत्थान में प्रवृत्त करना था। समिति में नये सदस्य को किसी सीनियर मैम्बर के साथ काम सीखना पड़ता है, और फिर यदि उसने प्रविष्ट कर लिया तो उसे कम से कम बीस वर्ष तक अपना जीवन उस समिति के सुपुर्द कर देना होता है। इस प्रकार स्थायी सदस्य हो जाने के बाद वह भारत के किसी भी भाग में किसी एक विषय को लेकर कार्य प्रारम्भ करता है, तथा समिति उसे हर प्रकार का सहयोग और निश्चित मासिक भत्ता प्रदान करती है। सन् 1933 ई. में ये भारत-सेवक-समिति में प्रविष्ट हुए और मृत्यु पर्यन्त उसी पद पर कार्य करते रहे। इलाहाबाद के चार वर्षो के जीवन में इन्होंने संयुक्त प्रांतीय हरिजन-सेवक-संघ के संयुक्त मंत्री के पद पर कार्य किया। सन् 1936 ई. में अखिल भारतीय हरिजन सेवक संघ के प्रधान मंत्री श्री ठक्कर बापा के साथ इन्होंने गढ़वाल का दौरा किया, इस अवसर पर इन्होंने एक सप्ताह तक कोटद्वार, दुगड्डा, डाडामण्डी, लैंसडौन व पलायन ढ़ौटियाल आदि स्थानों पर आम सभायें कराई तथा गढ़वाल में हरिजन-सेवा-कार्य को पुर्न संगठित किया।

गढ़वाल के लगभग ढाई वर्ष के जीवन में इन्होंने कोटद्वार मे प्रसिद्ध

सर्विडिया फार्म स्थापित किया। उस फार्म में उन्होंने उन्नत श्रेणी के धान व लाई आदि के बीजों का परीक्षण कराया, ताकि भाबर के किसान उनका उपयोग करके लाभ उठा सकें। उन्होंने फलदार पौधों, मुर्गी पालन तथा मधु व्यवसाय की वैज्ञानिक प्रणालियां भी चालू की, ताकि जनता का ध्यान आकर्षित हो। वे फर्म को ग्रामीण जनता की सेवा के लिए सर्वोपयोगी केन्द्र बनाना चाहते थे।

इनकी क्रियाशीलता अधिक हरिजन सेवा में थी। अभी ये स्थायी रूप से गढ़वाल आये ही थे कि डोला पालकी की समस्या ने विकट रूप धारण कर लिया, वह आंदोलन कई वर्षो से चला आ रहा था, लेकिन बिंजोली (पट्टी गुराडस्यूं) और मैंदोली (पट्टी कौड़िया) की बारातों के कारण स्थिति जटिल हो गयी। उसी अड़चन के कारण महात्मा गांधी को व्यक्तिगत सत्याग्रह आंदोलन कुछ दिनों के लिए स्थगित करनी पड़ी। तुरंत ही सारे देश का ध्यान इस ओर आकर्षित हो गया और स्वयं गढ़वाल में हलचल पैदा हो गयी। फलस्वरूप 23 फरवरी, सन् 1941 ई. को लैंसडौन में एक सर्वदल सम्मेलन हुआ, जिसमें बिठ (सवर्ण) जनता ने हरिजन भाईयों के इस सामाजिक अधिकार को स्वीकार कर लिया। उस सम्मेलन द्वारा एक स्थायी समिति बनायी गयी और ये उसके संयोजक चुने गये। उस पद से इन्होंने प्रशंसनीय कार्य किया तथा अनेक बारातों को सकुशल निकलवाने में सहायता पहुंचायी। इस विषय पर **डोला पालकी सवाल** शीर्षक से इन्होंने एक पुस्तिका भी प्रकाशित कराई। सन् 1941 ई. में इनके निमंत्रण पर श्री ठक्कर बावा और श्रीमती रामेश्वरी नेहरू ने गढ़वाल का दौरा किया, वे इनके साथ कोटद्वार, दुगड्डा, लैंसडौन, देवप्रयाग, श्रीनगर और पौड़ी आदि मुख्य केन्द्रों पर गये और अधिकारियों व सार्वजनिक कार्यकर्ताओं से मिलकर हरिजन सेवा की एक नई योजना तैयार की। उसके अनुसार गढ़वाल में ये सीधे अखिल भारतीय हरिजन सेवक संघ के प्रतिनिधि के रूप में कार्य करने लगे। इन्होंने कई हरिजन बालकों को दिल्ली की हरिजन उद्योगशाला में प्रविष्ट कराया। साथ ही जहरीखाल तथा पौड़ी में शिल्पकार छात्रावास खुलवाये, जिसमें बलदेव सिंह आर्य को इस शिल्पकार छात्रावास का प्रतिनिधि बनाना, उनमें निशुल्क निवास के अतिरिक्त कुछ छात्रवृत्तियों का भी प्रबंध किया। बाद में इसी प्रकार के छात्रावास कर्णप्रयाग व देहरादून में भी खोले गये। इसी तरह हरिजनों की शिक्षा तथा अन्य दिशाओं में इन्होंने महत्वपूर्ण कार्य किये। इनकी मृत्यु 9 सितम्बर सन् 1942 ई. को हुई, तब ये केवल 36 वर्ष के थे।

●श्री जयानन्द भारतीय

निर्भय समाज-सुधारक तथा कर्मठ राष्ट्रीय कार्यकर्ता श्री जयानन्द भारतीय का जन्म जिला पौड़ी गढ़वाल की साबली पट्टी के अरंकडैई ग्राम में 17 अक्टूबर, सन् 1881 ई. को हुआ। इनके पिता श्री छविलाल खेतीबाड़ी के साथ-साथ **जागरी** का कार्य करके किसी प्रकार अपना जीवन निर्वाह करते थे। ऐसे गरीब शिल्पकार परिवार में जन्म होने के कारण इन्हें बहुत ही साधारण शिक्षा मिल पाई, लेकिन बाद में अपने अध्यव्यवसाय से इन्होंने यथेष्ट ज्ञान प्राप्त कर लिया था। अपना पैतृक धंधा होने के कारण शुरू में इन्होंने भी जागरी के व्यवसाय से निर्वाह करना प्रारंभ किया, लेकिन उस व्यवसाय से भी ठीक निर्वाह न होते देखकर इन्हें नैनीताल व देहरादून आदि पर्वतीय नगरों में अंग्रेज साहबों के साथ नौकरी करनी पड़ी। इनका आर्य समाज की तरफ आकर्षण पैदा हुआ और सत्यार्थ प्रकाश पढ़ने का मौका मिला। इन्होंने आर्य समाज की शिक्षाओं का गहरा अध्ययन किया। अभी ये गढ़वाल में आर्यसमाज के प्रचार की तैयारी कर ही रहे थे कि प्रथम विश्व महायुद्ध प्रारंभ हो गया। उस अवसर पर आर्थिक स्थिति सुधारने की दृष्टि से ये फौज में भर्ती हो गये और भारत से बाहर जाकर कई देशों में कार्य किया। वहां के जीवन का अध्ययन करके भी इन पर प्रभाव पढ़ा और सन् 1920 ई. में ये भारत वापिस आकर फौज की नौकरी से मुक्त हो गये। अब इन्होंने जम कर आर्य समाज का प्रचार प्रारंभ किया और लगन के साथ उसमें जुट गये। कुछ समय तक तो ये आर्यपथिक के नाम से सारे जिले का भ्रमण करते रहे और स्थान-स्थान पर आर्य समाजों की स्थापना की। विशेषकर पिछड़े हुये वर्ग में एक अभूतपूर्व क्रांति पैदा हो गयी । इनके प्रचार कार्य से शिल्पकारों ने अपनी तरह-तरह की कुरीतियों को छोड़कर अपने बच्चों को शिक्षा देना प्रारंभ कर दिया। धार्मिक प्रचार के साथ-साथ इन्होंने डोला पालकी आंदोलन को जन्म दिया। इन्हीं की प्रेरणा से सन् 1924 ई. में डोला पालकी के साथ शिल्पकारों की सबसे पहली बारात संगठित की गई, वह दुगड्डा के पास बीरगांव से पट्टी बिजलोट के काण्डी ग्राम को गयी, वापिस आते समय सेंधीखाल में वह बारात लूट ली गयी। तथा मारपीट पड़ी। उस अवसर पर ये स्वयं उपस्थित थे। इसके बाद और भी अनेक बारातें व्यवस्थित रूप से निकाली गयी। केवल आर्य समाज के ही द्वारा पद दलित वर्ग का सुधार संभव न समझकर सन् 1928 में इनके प्रयत्नों से गढ़वाल सर्व दलित बोर्ड की स्थापना हुई। उस बोर्ड ने शिल्पकारों को भूमि दिलाने का आंदोलन शुरू किया। उन्होंने भारत सरकार से भी लिखा पढ़ी की और शिल्पकारों को फौज में भर्ती करवाने का अनुरोध किया। साथ ही उसने शिल्पकार छात्रों को छात्रवृत्तियां तथा अन्य सुविधायें दिलाने की भी कोशिश की व कुछ में सफलता प्राप्त की। इन्होंने केवल धार्मिक व सामाजिक सुधार तक ही अपना कार्यक्षेत्र सीमित नहीं रखा। भारत के स्वाधीनता संग्राम में भी ये छह बार जेल गये। इस प्रकार इन्होंने अपना सारा जीवन देश समाज व धर्म की सेवा मे लगाया। तबियत खराब होने के कारण इनकी मृत्यु 9 सितम्बर सन् 1952 ई. को हुई।

●श्री महेश चन्द्र शर्मा

प्रवास में प्रसिद्धि पाने वाले ज्योतिष के विद्वान श्री महेश चन्द्र शर्मा का जन्म जिला गढ़वाल की पट्टी खाटली के खेतू ग्राम में 7 जनवरी, सन् 1913 ई. को हुआ था। इनके पिता श्री सदानन्द शास्त्री एक विद्वान व्यक्ति थे, और वे सतगुरू बाबा के नाम से प्रसिद्ध थे।

इन्होंने नैनीडाण्डा स्कूल से हिन्दी मिडिल परीक्षा उत्तीर्ण करने के बाद कुछ समय तक बीरोंखाल के डी.ए.वी. स्कूल में शिक्षा प्राप्त की, फिर अपने भाई के पास ये करांची जाकर अध्ययन करने लगे। अभी ये दसवीं श्रेणी में पढ़ ही रहे थे कि सन् 1930 का सत्याग्रह आंदोलन प्रारंभ हो गया। उन दिनों इन्होंने विद्यार्थियों का एक क्रांतिकारी दल तैयार किया और विविध प्रकार की हलचलें शुरू कर दी। महात्मा गांधी के प्रति श्रद्धा रखते हुए भी ये उनके कार्यक्रम से बुनियादी मतभेद रखते थे। उन्हीं हलचलों के फलस्वरूप इन्हें विद्यालय से निकाल दिया गया। सन् 1932

ई. में अफ्रीका पहुंच गये। वहां इन्होंने अपना नाम पंडित एम.एस. शर्मा रख लिया और बाद में ये इसी नाम से प्रख्यात हुए। अफ्रीका से ही ये जर्मनी पहुंचे और वहां अनेक विद्वानों के संपर्क में आकर इन्होंने सामुद्रिक विद्या और खगोल शास्त्र का विशेष अध्ययन किया। तथा वहां से सन् 1936 ई. में करांची लौट आये, जहां इन्होंने अपना ज्योतिष कार्यालय स्थापित किया। इनकी भविष्यवाणियां अधिकांशतया ठीक सिद्ध होती थी, इस कारण वह बहुत लोकप्रिय थे। ये केवल अपने कार्यालय तक ही सीमित नहीं हुये, सार्वजनिक जीवन में भी गहरी रूचि होने के कारण ये नेताजी सुभाषचंद्र बोस द्वारा स्थापित फारवर्ड ब्लॉक में सम्मिलित हो गये। उस दल की सिंध शाखा के उपप्रधान चुने गये।अगस्त सन् 1942 ई. के भारत छोड़ो आंदोलन के सिलसिले में इन्हें हैदराबाद (सिन्ध) में बंदी बना लिया गये। लगभग चार वर्ष तक जेल की यातनाएं भुगतने के बाद सन् 1945 ई. में ये मुक्त हुये। ये आगरा व अवध प्रांतीय सभा, गढ़वाल सभा, चपरासी संघ, विद्यार्थी एसोसिएशन सिंध, आर्य समाज, थियोसौफिकल सोसायटी आदि कई संस्थानों के सभापति थे, साथ ही पेरामाउंट इंश्योरेंस कंपनी आर.यू.पी. को-ऑपरेटिव बैंक के भी डायरेक्टर थे। स्वाधीनता के बाद भारत बंटवारा के कारण इन्हें भारत आना पड़ा और सन् 1947 ई. में ये अहमदाबाद आ गये। इन्होंने अंग्रेजी मासिक पत्रिका प्रोफोसी को भारत में भी शुरू किया। इनकी गणना विश्वभर के सर्वोत्तम ज्योतिषियों में की जाती थी। हिंदी व अंग्रेजी के अतिरिक्त सिंधी व गुजराती का इन्होंने उच्च ज्ञान प्राप्त किया था, इसी के कारण ये भविष्यवाणी का योग्यतापूर्वक संपादन करने में सफल थे। अंग्रेजी की इनकी योग्यता प्रोफेसी के संपादन से स्पष्ट हो जाती है। संस्कृत में भी इनकी पर्याप्त गति थी तथा मराठी भाषा से भी ये जानकार थे। इनके भाषण शैली में एक विशेष आकर्षण था। इनका व्यक्तित्व मनमोहक था। हास्य तथा प्रसन्नचित्ता हमेशा इनके साथ रही, ये निरभिमानी और मिष्टभाषी थे। इन्होंने कई कवितायें भी स्वान्तः सुखाय लिखी, तथा तीन चार एकाकी नाटक भी लिखे। इनके लेखों से इनकी विचार प्रौढ़ता स्पष्ट है। इतना होनेपर भी, इन्हें अपने गढ़वाली होने का गौरव था। हमेशा अपने गरीब व अशिक्षित प्रवासी भाइयों की सहायता के लिए ये उद्यत रहते थे। गढ़वाल की कई शिक्षा संस्थाओं को इन्होंने आर्थिक सहायता प्रदान की। इनके कारण सिंध और गुजरात में गढ़वालियों ने एक सम्मान का स्थान प्राप्त किया। इनकी मृत्यु 24 अक्टूबर सन् 1952 ई. को हृदय आघात से हुई।

श्री केशर सिंह रावत

असहयोग आंदोलन में गढ़ केशरी की उपाधि से विख्यात तथा समाज तथा सिद्धान्तवादी समाज सुधारक श्री केशर सिंह रावत का जन्म 18 नवम्बर, सन् 1882 ई. को ग्राम गजेरा, पट्टी रिंगवाड़स्यूं में हुआ था। इनके पिताजी का नाम श्री वैरागी सिंह और माता का नाम श्रीमती फूलदेई था। ये डंगवाल रावत वंश से संबंधित थे। इन्होंने रिंग्वाड़ी विद्यालय में प्रारंभिक शिक्षा पाई। फिर सन् 1905 ई. में पोखड़ा स्कूल से मिडिल परीक्षा उत्तीर्ण की, किन्तु दुर्भाग्यवश से दसवें दर्जे तक ही शिक्षा प्राप्त कर सके। ये जिलाधीश पौड़ी गढ़वाल के कार्यालय में लिपिक हो गये। फिर चमोली में नकल नवीस के पद पर भेजे गये। कुछ वर्षो के बाद इन्हें नाजिर के पद पर पदोन्नत किया गया और ये पौड़ी आ गये।

पौड़ी में उन दिनों श्री गंगादत्त जोशी तहसीलदार के पद पर कार्य कर रहे थे। वे गढ़वाल के उच्च वर्णो में से आर्य समाजी होने वालों में प्रायः सर्वप्रथम थे। उनके संपर्क में आने के बाद रावत जी धीरे-धीरे निष्ठावान आर्य समाजी बन गये। एक दिन अंग्रेज साहब ने इन्हें बुलाने के लिए चपरासी भेजा ये अपने नित्य कर्म में व्यस्त थे तथा दफ्तर जाने का समय भी नहीं हुआ था इन्होंने कहलवा भेजा कि ये धार्मिक कार्यक्रम पूरा करने के बाद आयेंगे इस पर अंग्रेज आगबबूला हो गया और इनके घर जाकर कहने लगा कि या तो नौकरी कर लो या संध्या ही। उसके बाद उन्होंने दफ्तर जाकर अपना त्याग पत्र दे दिया। इन्होंने अपने गांव के समीप जाणदाखाल केन्द्र स्थान में एक दुकान खोल दी और आलू की खेती भी की, साथ ही एक पाठशाला स्थापित करके छोटे बच्चों को स्वयं पढ़ाने भी लगे। जाणदाखाल में ही **चन्द्र वीभिंग** स्कूल के नाम से कताई बुनाई का एक कारखाना भी चालू कर दिया। कांग्रेस ने असहयोग का बिगुल बजा दिया। सब जगह कांग्रेस कमेटियां स्थापित की गयी। इन्हें उसका मंत्री नियुक्त किया गया। गढ़वाल में बेगार बर्दायश के विरूद्ध हमारे चरितनायक जी ने उस संग्राम में अग्रगण्य मोर्चा लिया इसीलिए बाद में जबकि पांडे जी **कूर्माचल केशरी** के नाम से विख्यात हुये, तब श्री रावत जी को गढ़वाल की जनता ने **गढ़ केसरी** की उपाधि प्रदान की।

उन्हीं दिनों गढ़वाल के तत्कालीन डिप्टी कमिश्नर मिस्टर मेसन दौरे पर थे और चौंदकोट परगने के केन्द्र स्थल नौगांवखाल में उनका कैम्प पड़ा हुआ था। वे पौड़ी वापिस जाने वाले थे। पर केशर सिंह जी ने ऐसा अच्छा संगठन किया कि जिलाधीश को एक भी कुली नहीं मिला पाया। ये स्वयं मि. मेसन के समक्ष पहुंचे और स्पष्ट बता दिया कि आम जनता के निर्णय के अनुसार उन्हें कुली नहीं मिल पायेंगे। वे जिलाधीश सज्जन अंग्रेज थे उन्होंने अनुनय विनय भी की, और कहा कि उस बार उन्हें कुली दे दिये जायें, ताकि वे पौड़ी पहुंच सकें, आगे से वे उस प्रथा को स्वयं समाप्त कराने का प्रयत्न करेंगे। पर रावत जी टस से मस नहीं हुये मजबूर होकर मि. मेसन को बिना सामान के पौड़ी जाना पड़ा उन्होंने वहां से खच्चर भेजे और तब उनका सामान नौगांवखाल से पौड़ी पहुंच पाया। उस शानदार सफलता के कारण सारे जिले में केशर सिंह जी का नाम फैल गया। वहां दूसरी ओर इन्हें फंसाने के षड़यंत्र रचने लगे। उधर केशर सिंह जी जनता में कहते फिरते कि पटवारियों को नाली मत दो, उन्हें भेंट पिठाई मत दो, उनके बोझ ढोते हो तो उनसे मजदूरी लो। तब तो पटवारी और कानूनगो इनसे नाराज हो गये। सरकारी कर्मचारियों की नाराजगी के चलते इन्हें षड़यंत्र में फंसाया गया तथा इन पर राजद्रोह का आरोप लगाया गया। आखिर 17 जून सन् 1922 ई. को लैंसडौन की मजिस्ट्रेट की अदालत में पेशी हुई, इन्होंने अपने बयान में कहा कि मैंने किसी से किश्ता न देने को नहीं कहा, और कांग्रेस का ही ऐसा आदेश है। पर इन्होंने अपनी सफाई में सबूत पेश करने से इंकार कर दिया। मजिस्ट्रेट ने फैसला दिया कि जाब्ता फौजदारी की दफा 107 के मुताबिक एक साल भर के लिये मुचलके और जमानत दो या एक साल की कैद भोगो। इन्होंने जमानत देने से साफ इंकार कर दिया और जेल जाना स्वीकार किया। 19 जून 1922 ई. की रात में करीब साढ़े तीन बजे एक थानेदार और दो सिपाहियों के साथ इन्हें पौड़ी जेल भेज दिया गया। जेल में पहुंचते ही इन्होंने वहां की दुर्व्यवस्था के विरूद्ध भूख हड़ताल कर

दी और अच्छे भोजन, स्वच्छ कपड़े और मानवीय व्यवहार के लिए लड़ाई छेड़ दी। आखिर जनमत भड़क न उठे इस भय से सरकार को इनके सत्याग्रह के सामने झुकना पड़ा तथा इनकी मांगे पूरी कर दी गई। पौड़ी जेल में इनका एक वर्ष का कारावास पूरा होने वाला था। मजिस्ट्रेट के आदेश के अनुसार 16 जून सन् 1923 ई. को इनके कारावास की अवधि पूरी होती थी। तत्कालीन सरकार ने चौंदकोट के लोगों द्वारा इनके स्वागत की तैयारी को देखते हुए एक सप्ताह पहले ही 9 जून की प्रातः इन्हें जेल से बाहर निकाल दिया, और एक पुलिस कांस्टेबल के साथ इन्हें अपने घर के लिए रवाना कर दिया। तब 10 जून को चौंदकोट वालों को पता चला कि केशर सिंह जी जेल से मुक्त होकर अपने गांव गजेरा की ओर आ रहे हैं तब पहले पड़ाव पर इनके सैकड़ों प्रशंसक गाजे बाजों के साथ पहुंच गये और गढ़केसरी के जय हो के नारे लगाते हुये इनके कार्यक्षेत्र जाणदाखाल तक ले आये।

इस प्रकार गढ़वाल की ओर से स्वाधीनता समर में इन्होंने पहली ऐतिहासिक आहूति दी थी। पर इनकी दुकान चौपट हो चुकी थी और कताई बुनाई का कारखाना भी बंद हो गया था। इन्होंने फिर अपने व्यवसाय की ओर ध्यान दिया और ईमानदारी का ऊंचा आदर्श प्रस्तुत किया। इनकी मेहनत और लगनशीलता से इनकी दुकान की ख्याति दूर-दूर तक फैल गयी। फिर बहुत सोच विचार के बाद इन्होंने सामाजिक चेतना लाने के उद्देश्य से श्री रघुवर दयाल (पाखरी) आदि मित्रों से परामर्श किया। और सन् 1925 ई. में आर्य समाज चौंदकोट की स्थापना की तथा उस संगठन के माध्यम से छुआछूत तथा मिथ्या जात्याभिमान दूर करने का ये अथक प्रयत्न करने लगे। सारे जिले में कुछ ही दिनों में आर्य समाज चौंदकोट की धूम मच गयी। पर कुछ स्वार्थ विमोहित कट्टरपंथी लोग इनके भंयकर विरोधी बन गये। 14 अप्रैल सन् 1929 ई. को एकेश्वर का विषुवत संक्रांति का प्रसिद्ध मेला जुड़ा हुआ था। उस मेले में चौंदकोट आर्य समाज की ओर से मेला प्रचार का आयोजन किया गया था। आर्य समाजी जनसेवको के उत्साह और साथ में समझदार जनता के सहयोग उसी स्थान से प्रचार कार्य का क्रम भी चलता रहा। साथ ही चौंदकोट आर्य समाज से प्रेरणा लेकर के बंगार, दुगड्डा, कोटद्वार, पौड़ी और लैंसडौन आदि कई स्थानों पर आर्य समाजों की स्थापना हो गयी। फिर इनके प्रयत्नों से सारे जिले के लिए आर्य प्रतिनिधि सभा स्थापित करके उसे उत्तर प्रदेशीय आर्य प्रतिनिधि सभा से सम्बद्ध करा दिया। इस प्रकार से जो लोग स्वतंत्रता संग्राम में सीधे भाग नहीं ले सकते थे, उनके लिए रचनात्मक कार्यो का मार्ग खुल गया। उसे शुद्धि आंदोलन कहना अधिक उपयुक्त होगा। विशेष करके हरिजनों को डोला पालकी आदि के नागरिक अधिकार दिलाने का प्रयत्न किया गया। इस प्रकार इन्होंने अपनी सारी शक्ति समाज सुधार के क्षेत्र मे लगा दी थी, फिर स्वाधीनता संग्राम के प्रति इनकी सदैव सहानुभूति रही। सन् 1929 ई. में जब महात्मा गांधी जी उत्तर प्रदेश के दौरे के क्रम में नजीबाबाद आये थे, तब केशर सिंह जी उनके दर्शनों के लिए वहां पहुंचे थे और अपनी ईमानदारी की कमाई का बचत धन उन्हें भेंट कर दिया था। फिर जून सन् 1930 ई. में जब दुगड्डा (गढ़वाल) में सत्याग्रह सम्मेलन आयोजित किया गया था, तब इन्होंने सद्परामर्श दिया था। बाद में इनका जाणदाखाल का घर सत्याग्रही जत्थों का विश्राम स्थल बन गया था और उन्हें आर्थिक सहायता भी देते रहे। ये अन्त तक सात्विक जीवन व्यतीत करते रहे और श्रमदान के कार्यो आदि में क्रियात्मक सहयोग भी देते रहे। इन्होंने दल बंदियों से दूर रह करके शुद्ध राष्ट्रीय दृष्टिकोण अपनाया। ये चाहते तो ऊंचे पदों पर जा सकते थे, लेकिन इन्होंने सदा इंकार किया। यहां तक राजनैतिक पीड़ितों को मिलने वाली जमीन व पेंशन संबंधी सरकारी सहायता भी स्वीकार नहीं की। आखिर इनकी पवित्र आत्मा ने 19फरवरी सन् 1958 ई. को लगभग छहत्तर वर्ष की आयु में प्रभु की शरण में प्रयाण किया।

●श्री हरेन्द्र सिंह रावत

गढ़वाल जिला बोर्ड के सच्चे अर्थो में चैयरमैन तथा बाद में उसी नाम से विख्यात व्यवहार कुशल श्री हरेन्द्र सिंह रावत ग्राम रिंगवाड़स्यूं (पौड़ी गढ़वाल) के निवासी थे, जहां इनके पिता एक उच्च थोकदार वंश से संबंधित थे। इनके बड़े भाई श्री नरेन्द्र सिंह रावत गढ़वाल के सर्वप्रथम समाज सुधारकों में थे। जिलाधीश कार्यालय में सरकारी कर्मचारी होते हुये भी वे आर्यसमाज में प्रविष्ट हो गये थे, यह ध्यान देने के बात है कि उन दिनों आर्यसमाज को ब्रिटिश अधिकारी शंका की दृष्टि से देखते थे। उनमें होनहार गढ़वाली युवकों को प्रोत्साहन देने व सहायता करने की अभिरूचि थी।

ऐसे सम्पन्न घर में हरेन्द्र जी का सन् 1878 ई. में जन्म हुआ था। ये प्रारंभ से ही परिश्रमी विद्यार्थी थे, अतः पहले इन्होंने अपने बड़े भाई की संरक्षता में मिशन स्कूल चोपड़ा (पौड़ी) में शिक्षा प्राप्त की और फिर बरेली जा करके हाईस्कूल तक अध्ययन किया। वहां से लौटने के बाद इन्हें वन विभाग में नौकरी मिल गयी। इन्होंने फॉरेस्टर के साधारण पद से वन विभाग में अपना सरकारी जीवन प्रारंभ किया। और अपनी लगन, परिश्रमशीलता तथा कर्तव्य परायणता के द्वारा धीरे-धीरे उन्नति करते चले गये, तथा फॉरेस्टर से डिप्टी रेंजर, फिर रेंजर और अंत में एक्स्ट्रा असिस्टेंट कंजरवेटर के पद तक पहुंच गये थे। इनका वन विभागीय प्राविधिक ज्ञान इतना विस्तृत तथा गहन था कि जिन दिन ये चकरौता में सेवारत थे, तब देहरादून स्थित वन विभागीय कॉलेज के प्रशिक्षार्थियों के समक्ष भाषण देने के लिए उन्हें आमंत्रित किया जाता था। इस प्रकार लंबी प्रशंसनीय राजकीय सेवा करने के बाद सन् 1935 ई. के प्रारंभ में ये पेंशन पर आ गये।

इन्होंने अपने बड़े पुत्र की स्मृति में अपने पैतृक ग्राम रिंगवाड़ी के समीपवर्ती केन्द्र स्थान नौगांवखाल में एक एलोपैथिक अस्पताल का भवन निर्मित कराके उसके संचालन का भार जिला बोर्ड के सुपुर्द कर दिया। अब तो वह एक राजकीय अस्पताल में परिवर्तित हो चुका है।

नवंबर सन् 1935 ई. में गढ़वाल बोर्ड के चैयरमैन का चुनाव होना था, हरेन्द्र जी की सुयोग्यता की ख्याति पहले ही सब जगह पहुंच चुकी थी। इसलिए बोर्ड के सदस्यों ने सर्वसम्मति से इन्हें अध्यक्ष पद के लिये निर्वाचित कर दिया।

इस प्रकार 6 दिसंबर सन् 1935 ई. को इन्होंने जिला बोर्ड के चैयरमैन के पद से कार्य प्रारंभ किया। उस बोर्ड का कार्यकाल चार वर्ष का था, लेकिन सन् 1939 ई. में द्वितीय विश्व महायुद्ध छिड़ जाने के कारण शासन के द्वारा चुनाव स्थगित कर दिये गये, और एक एक वर्ष करके उस बोर्ड का कार्यकाल बढ़ाया जाता रहा, परिणामस्वरूप वही बोर्ड पूरे साढ़े बारह वर्ष अर्थात 31 मई सन् 1948 तक चलता रहा।

लेकिन हरेन्द्र सिंह जी ने सोचा कि ये तो चार वर्षो के लिये ही निर्वाचित हुये थे, अत: बहुत अधिक समय तक उस पद पर चिपके रहना उचित नहीं होगा। इसलिये इन्होंने अपने पद से त्याग पत्र दे दिया, और 6 मार्च सन् 1945 ई. को ये उस भार से मुक्त हो गये। इस प्रकार लगभग साढ़े नौ वर्षो तक इन्होंने जिला बोर्ड का संचालन कर दिया।

जब उन्होंने जिला बोर्ड का चार्ज लिया तो जिला बोर्ड पर नब्बे हजार का कर्जा था। वे लगन से जिला बोर्ड का कर्जा चुकाने तथा उसके निर्माण में जुट गये। उनके गढ़वाल सबका जिला बोर्ड बहुत अच्छा बोर्ड था, काफी अच्छे अनुभवी योग्य व्यक्ति सदस्य थे। अपने कार्यकाल में बोर्ड की नाजुक स्थिति होते हुये भी उसे दृढ़ बनाया। कोटद्वार नौगांवखाल पर तो अपने स्वयं पास से रूपया लगाया और अपने कार्यकाल के अंतिम समय में जिला बोर्ड भवन का पुर्ननिर्माण भी किया। जब उन्होंने जिला बोर्ड से सन् 1945 ई. में त्याग पत्र दिया, तब जिला बोर्ड के खाते में तीस हजार रूपया बचत था।

जब कुछ वर्षो बाद गढ़वाल भर में श्रमदान द्वारा मोटर सड़कों को बनाने का उत्साह पैदा हुआ तब इन्होंने दो मोटर सड़कों को बनाने में विशेष योगदान किया। जहरीखाल गुमखाल सड़क के लिये इन्होंने अच्छा परिश्रम किया और गुमखाल की ओर से उसका निर्माण कार्य भी प्रारंभ कराया, बाद में वह सड़क सीधे लैंसडौन तक बन गयी। चौंदकोट परगने में जन साध्य सड़क के नाम से सतपुली सिरकोटखाल एकेश्वर नौगांवखाल सड़क का काम शुरू हुआ तब इन्होंने पाटीसैंण से कुछ आगे कनमुठलिया पुल से सन्तूधार होकर नौगांवखाल तक मोटर सड़क बनवाने का काम प्रारंभ कराया और बड़ी तेजी से उसे नौगांवखाल पहुंचा दिया। 31 मार्च सन् 1954 ई. को उस कनमुठलिया-नौगांवखाल मोटर सड़क का उद्घाटन भी करा दिया।

श्री हरेन्द्र सिंह जी एक तपस्वी और कर्मठ जन सेवक थे, राजनैतिक विचारों में मध्यम मार्गी पर बहुत कुशल और मिष्ट भाषी। आखिर 23 मार्च, सन् 1963 ई. को कोटद्वार में पिचासी वर्ष की आयु में इन्होंने स्वर्गलोक को प्रयाण किया।

●श्री हंस महाराज

अपने दिव्य संदेश के द्वारा सारे भारत में ख्याति प्राप्त करने वाले श्री हंस महाराज ग्राम गाड़ की सेड़िया पट्टी तलाई (पौड़ी गढ़वाल) के निवासी थे। इनके पिता का नाम श्री रणजीत सिंह रावत था, वे देवसाल रावतों के वंश के साधारण कृषक थे। उन्हीं के पुत्र के रूप में हंस जी ने 8 नवंबर सन् 1900 को जन्म लिया था, और इनका नाम रखा गया था श्री हंसराम सिंह रावत। इन्होंने साधारण शिक्षा प्राप्त की थी, यद्यपि बाद में स्वाध्याय के द्वारा इन्होंने अपना ज्ञान विस्तृत बना लिया था। अन्य गढ़वाली लड़कों की तरह एक दिन ये भी अपना घर छोड़कर नौकरी की तलाश में निकल पड़े और क्वेटा (बलूचिस्तान) पहुंच गये। वहां उन दिनों गढ़वाली बड़ी संख्या में रहते थे।

वहां कई प्रकार की नौकरियां करते हुये तथा अपना ज्ञान भी साथ ही साथ बढ़ाते हुये ये कई वर्षो तक रहे। उन दिनों इन्हें आर्य समाज के उत्सवों में जाने का अवसर मिला और ये उसके सिद्धान्तों और कार्यक्रम से प्रभावित हुये। कुछ वर्षो के पश्चात इन्हें किसी कार्यवश लाहौर जाना पड़ा और संयोगवश वहां एक संत पुरूष से इनकी भेंट हो गयी। वहीं से इनके जीवन की दिशा बदल गयी, क्योंकि उनसे इन्हें दीक्षा प्राप्त हुई थी। उन सन्त जी ने इन्हें दीक्षा दी और उपदेश दिया। उस उपदेशामृत का पान करने के बाद मानों इनके ज्ञान चक्षु खुल गये हो और श्री भगवत् गीता के पदों का अर्थ स्पष्ट होने लगा। तब से सब काम छोड़ करके ये अपना समय गुरू जी की सेवा में ही बिताने लगे। उस संत जी ने भी अपने शिष्य की योग्यता को पहचान कर कुछ दिनों बाद अपने सब शिष्यों को बुला करके घोषणा की कि मैं हंस के हृदय में हूं और हंस मेरे हृदय में इसलिये मेरी मृत्यु के बाद सब हंस का आदेश मानेगें। इतनी घोषणा करने के बाद संत जी ब्रह्मलीन हो गये। पर उनके एक शिष्य ने विद्रोह खड़ा कर दिया और स्वयं अपने आप को गुरू घोषित कर

fn;kA gaa thusdgkfd mUgsa lkakfjd lafRr ugha pkfg, blfy,
;sv iusxq dklaskiZkfjr djusdsfy, ikxy dhrjg ogka ls
py fn;sA

budsxq thLo;aghjkuaijph Fks eywr%ftykikSM+hx<+oky dh
iVVhxqMwdsxkaeiyklhds,d{kf=k; ifjokj esamudktUe gqvk
Fkk vkjSmugksaus ia kc dsfl ¼iq"kLokehLo: ikuathlsnh{kk yh
FkhA

rnqijkar dqN o"kkZsd ;sfnO; iadk'kvkjS'kfDr cgqe dklaskiSyksus
gqsylgkjSvkjSfl ¼a esaHkze.kdjrsjgsAlu~1930 bZesa;s igyhckj
fnYyhvk;svkjSfnYyh Dykfkfey dslkeusjgusyxsAfnYyh ls
mRrj inzskdsdqN LFkkuksaesatkukiz;kjHkkdj fn;kA/hjs&/hjsbudh
[;kfr iSyusyxhvkjSbudsHkDrksadhla[;keasof¼gksusyxhAblh
izdkj lsl u~1950 bZrd gaa thdsvuq;k;hdhla[;kcgqr c<+
x;hA/hjs&/hjsbudhvuqifLFkfr esabudsHkDr lRraa dkv;kstu
djusyxsAdqNvU; f'k";ksausgaa thdsfy;sviukiwjk thou
lefiZr djfn;kvkjSosiwZe egkReksdgstkusyxsAmUgkasfnukaemRrj
inzskdsy[kumQ vyhx<+ ejknkckn vkfn LFkkuksa Fkkiaskc dsdbZ
dsUnzksaeslRlaxkadhJ`a[kyk'kq gksx;hlkFkghमासिक हंसादेश
का प्रकाशन करके इनके संदेशों का प्रसार किया जाने लगा।

इसी तरह सन् 1960 ई. तक हंस जी का प्रभाव पूरे उत्तर भारत में फैल गया था।

इसके अलावा गुजरात, बम्बई, महाराष्ट्र, बिहार, कलकत्ता, नेपाल और कश्मीर तक इनके अनुयायी हो गये। तब इन्होंने रामलीला मैदान और कन्स्टीटूयूशन क्लब में दो शांति सम्मेलनों का आयोजन किया। जिनमें सभी धर्मो के प्रतिनिधि सम्मिलित हुये। कन्स्टीटूयूशन क्लब वाले समारोह का सभापतित्व लोक सभा के तत्कालीन विद्वान अध्यक्ष माननीय श्री अनन्तशयनम आयंगर ने किया था। उसके बाद हंस जी की ख्याति सारे देश में फैल गयी। इलाहाबाद कुंभ मेले के अवसर पर और लखनऊ में हजारों व्यक्तियों द्वारा इन्हें सम्मान सहित जुलूस में ले जाया गया। उतनी सफलता मिल जाने के बाद सन् 1960 ई. में इनके उपदेशों का संगठित प्रचार करने के उद्देश्य से दिव्य संदेश परिषद (डिवाइन लाइट मिशन) का गठन किया गया और उसके बाद पटना में बकायदा उसका रजिस्ट्रेशन भी करा दिया गया।

हंस जी के सम्मान में सबसे अंतिम बड़ा जुलूस जनवरी सन् 1966 ई. में बंबई में निकाला गया था। 16 जुलाई, सन् 1966 ई. को छियासठ वर्ष की आयु में ये ब्रह्मलीन हो गये।

●श्री सकलानंद डोभाल

स्वतंत्रता संग्राम के तपस्वी जन सेवक श्री सकलानंद डोभाल का जन्म अप्रैल सन् 1896 ई. में हुआ था। इनके पिता श्री मंगलानंद डोभाल सर्वे अमीन के पद पर रह चुके थे। वे ग्राम डोभा, पट्टी इड़वालस्यूं (पौड़ी गढ़वाल) के रहने वाले थे और उनका एक संपंन तथा समृद्ध परिवार था। इन्होंने चड़धार प्राइमरी स्कूल में प्रारंभिक शिक्षा प्राप्त कर लेने के बाद कुछ समय ऋषिकेश और हरिद्वार में संस्कृत की शिक्षा प्राप्त की। फिर ये काशी गये, वहां इन्होंने शास्त्री परीक्षा में उत्तीर्ण होने के बाद आचार्य के भी कुछ खण्ड कर लिये थे। साथ ही आयुर्वेद का भी ज्ञान प्राप्त किया था। वे असहयोग आंदोलन से की स्वतंत्रता संग्राम में सम्मिलित हुए थे। जीवन के चौदह वर्ष बीतने पर उनके दिमाग को भली भांति के धार्मिक और राजनैतिक विचारों ने घेर लिया था। पिताजी की जिले में प्रतिष्ठा थी। श्रीनगर के सन् 1911 ई. के दरबार में उन्हें भी आमंत्रित किया गया था, तो भी उनके एक कर्मचारी बाबू भाई को बेगार में नाममात्र के लिए जरूर शामिल होना पड़ता था। बाबू भाई बेगार में फंसे लोगों की दर्दभरी कहानी सुनाया करते थे जिससे उनके बाल हृदय को भारी चोट पहुंचती थी। ऐसे ही अन्याय, सरकारी अन्याय, अत्याचारों को सुन-सुन कर उनकी मार्मिक वेदना बढ़ती ही गयी। जब वे अध्ययन के लिए सन् 1914 ई. में बनारस गये तो वहां इन राजनीतिक पराधीनता के कष्टों पर सोचने समझने का काफी मौका मिलने लगा।

बनारस में सन् 1916 ई. के अंतिम भाग में राष्ट्रीय कांग्रेस के कामों में अध्ययन के साथ-साथ थोड़ी बहुत दिलचस्पी आरंभ कर दी। यह सिलसिला बराबर जारी रहा और सन् 1921 ई. में महात्मा गांधी द्वारा प्रवर्तित त्रिविधि (सरकारी शिक्षा, सरकारी पदवियां और सरकारी वकालत संबंधी) बहिष्कार के प्रचण्ड आंदोलन के सिलसिले में मुझे श्री खड़ेघाट की अदालत से 6 महीने की सख्त सजा मिली। आचार्य कृपालनी स्वर्गीय भाई किदवई आदि बहुत से राजबंदी हम वहीं बनारस जेल में बंदी थे। उस वक्त तक ए.बी.सी. जैसा श्रेणीकरण राजबंदियों के लिये नहीं हुआ था प्रार्थना करने पर भोजनादि की विशेष व्यवस्था सरकार की ओर से संपंन होती थी। उन्होंने सरकार से प्रार्थना करने से इंकार कर दिया। बनारस जिला जेल, सेन्ट्रल जेल और गाजीपुर जेल में मुझे काफी तंग किया गया। पर उन्होंने सरकार की इच्छा के विपरीत कहीं भी अपने धैर्य, साहस और दृढ़ता को नहीं डिगने दिया। वैसे कायदे के अनुसार लगभग एक महीने पहले पांच महीनों में ही मुझे जेल अधिकारियों को छोड़ देना चाहिये था पर जेल में अतिरिक्त सजा दी गयी थी और रेमिशन जब्त कर दिया गया था। सन् 1928 ई. में सुभाष बाबू के नेतृत्व में साइमन कमीशन का प्रबल और संगठित विरोध करने पर इन्हें गिरफ्तार किया गया। और प्रमाणाभाव के कारण तुरन्त ही छोड़ दिया गया। सन् 1930 ई. में एबटशन कांड के कारण पौड़ी गढ़वाल में 144 दफा लगी हुई थी, श्री सकलानंद डोभाल जी ने वर्जित इलाके में जगह-जगह मीटिंगों का आयोजन कर 144 के बंधनों को तोड़ डाला फलस्वरूप पौड़ी में पं. भोला दत्त पंत की अदालत ने मुझे दो महीने की सजा दी। सन् 1932 के आंदोलन में हरिद्वार के उस पार गढ़वाल की चीला जंगलात की चौकी में मि. ब्राउन की अदालत में मुझे राजद्रोह के अभियोग में एक वर्ष की सख्त सजा देकर मुरादाबाद जेल भेज दिया गया। लगभग चार माह बाद जेल मे ही वारंट तामील किया गया और लैंसडौन गढ़वाल में मि. ब्राउन डी.सी. की अदालत ने 124 ए के अनुसार राजद्रोह के अभियोग में चार वर्ष की सख्त सजा और दो हजार रूपये का मुद्रादंड देकर वहां से जेल भेज दिया गया।

सन् 1940 में व्यक्तिगत सत्याग्रह में पौड़ी अदालत में एक साल की सजा हुई और सजा भुगत कर बरेली जेल से वापस लौटा तो वातावरण में भारी खामोशी अनुभव हुई। फलतः आगे की तैयारी के लिये प्रयत्नशील होना पड़ा। सन् 1942 की 8 अगस्त को पुलिस मेरी ताक में पौड़ी में थीपर मैं अपने गांव डोभा में था। जब मैं भारत छोड़ो आंदोलन के अंतर्गत करो या मरो के लिये गायब होना ही चाहता था तो ठीक उसी समय मुझे गिरफ्तार करने के लिए पुलिस का एक छोटा सा दल बड़ी खामोशी के साथ तारीख 9 को डोभा गांव में पहुंचा और मुझे गिरफ्तार करके पौड़ी जेल ले गये। बाद में नजरबंदी की हालत में बरेली जेल भेज दिया गया वहां से लगभग तीन वर्ष बाद सन् 1944 में रिहा कर दिया गया।

जब भारत स्वतंत्र हो गया, तब डोभाल जी का ध्यान रचनात्मक सेवा की ओर आकृष्ट हुआ इन्होंने अपने गांव से कुछ दूरी पर स्थित अपनी पट्टी का केन्द्र स्थान पर इन्होंने विश्व जनता आश्रम की स्थापना करके कुछ कदम बढ़ाये। उस योजना के अन्तर्गत स्थापित एक जूनियर हाईस्कूल अभी भी चड़धार मे इनके उन प्रयत्नों की याद दिलाता रहता है।

ये दिल्ली में किसी प्रकार से जीवन यापन कर रहे थे कि सितम्बर सन् 1961 ई. में इन्हें तार के द्वारा पौड़ी से बुलावा आया कारण यह था कि राज्य सरकार ने अंतरिम जिला परिषदों में गैर सरकारी अध्यक्ष नियुक्त करने का निश्चय किया था। सौभाग्यवश ऐसी परिस्थिति हुई कांग्रेस वालों को इन्हें तार देकर के बुलाना पड़ा। अतः ये दिल्ली से पौड़ी आये और सितम्बर सन् 1961 ई. तक इन्होंने अध्यक्ष पदपर कार्य किया। अध्यक्ष पद से मुक्त होने के बाद ये फिर दिल्ली में कष्टपूर्ण जीवन व्यतीत करने लगे। धीरे-धीरे इनका स्वास्थ्य गिरने लगा, इनकी बीमारी बढ़ती गयी और अंत में इन पर पक्षाघात रोग का आक्रमण हो गया। उस रोग के फलस्वरूप इन त्यागी, तपस्वी, स्वतंत्रता संग्राम सेनानी का अक्टूबर सन् 1966 ई. में दिल्ली में ही अंत हो गया।

●श्री रत्नाम्बर चंदोला

एक ही कविता संग्रह से काव्य क्षेत्र में ऊंचा स्थान पाने वाले श्री रत्नाम्बर दत्त चंदोला का जन्म सितम्बर सन् 1901 ई. में ग्राम थापली, पट्टी कफोलस्यूं (पौड़ी गढ़वाल) में हुआ था। इनके पिताजी श्री पीताम्बर दत्त चंदोला फौज में नौकरी करते थे। गढ़वाली के यशस्वी संपादक श्री विश्वम्भर दत्त चंदोला इनके चचेरे भाई थे। इस प्रकार ये एक संपंन परिवार से संबंधित थे, और उसके सामान्यता देहरादून में रहने के कारण ये भी अधिकांशतया यहीं रहे। इन्होंने देहरादून में अपना बाल्यकाल बिताते हुये मिशन स्कूल में आठवीं कक्षा तक शिक्षा प्राप्त की। फिर ये अपने फूफा श्री सदानंद बड़थ्वाल के पास चले गये, वे उन दिनों काशीपुर में डिप्टी कलेक्टर थे, और वहीं से इन्होंने मैट्रिक परीक्षा उत्तीर्ण की। उन्हीं दिनों इनके पिता जी तथा इनके बड़े भाइयों की मृत्यु हो जाने के कारण परिवार का पूरा भार इन पर जा पड़ा। अतः इन्हें

फौज में लिपिक के पद पर नौकरी शुरू करनी पड़ी।

प्रारंभ में ये कुछ वर्षो तक मेरठ में रहे, फिर इनका स्थानान्तरण नैनीताल को हो गया, तदुपरांत इन्हें लैंसडौन स्थानान्तरित हो करके एस.एस.ओ. के कार्यालय में कार्य करना पड़ा। इन्हें सेना में कमीशन मिलने ही वाला था कि इनकी राष्ट्रीय भावनाओं से रूष्ट हो करके फौजी अधिकारियों ने इन्हें मेम्यो (बर्मा) भेज करके एक प्रकार से देश निकाला दे दिया। वहां से सन् 1928 ई. से सन् 1942 ई. तक अर्थात पूरे चौदह वर्षो तक रहे। उसी बीच एक वायु दुर्घटना के कारण इनकी एक टांग काट दी गयी और स्वयं अपने ही शब्दों में ये चरणहीन हो गये। मेम्यो में रहते हुये ही इनकी पहली पत्नी का देहावसान हुआ। मेम्यो (बर्मा) में चौदह वर्षो का बनवास व्यतीतकर लेने के बाद इन्हें लखनऊ स्थानान्तरित किया गया। वहां रह कर इन्हें पदोन्नतियां मिली, इन्हें सूबेदार मेजर बना दिया गया। ऑनरेरी लेफ्टिनेंट का पद मिला तथा ओ.बी.आई. का सम्मान प्राप्त हुआ लखनऊ के बाद इन्हें योल (कांगड़ा) के विदेशी सैनिक कैम्प के व्यवस्थापक के पद पर भेज गया। वहां से इनकी बदली पूना के सदर्न कमाण्ड कार्यालय में हुई। और वहीं से सन् 1953 ई. में इन्होंने अवकाश ग्रहण किया। पेंशन पर जाते समय तक इन्हीं इनकी असामान्य योग्यता के कारण, पहले कैप्टेन फिर उसके बाद मेजर ऑनरेरी सम्मानपूर्ण पद मिल गया था। पेंशन पर चले जाने बाद इन्होंने अपना समय फौज के अंगहीन तथा अपंग व्यक्तियों की सहायता तथा पुर्नावास पर लगा दिया। इस उद्देश्य से इन्होंने सोसायटी फॉर रीहैबिलिटेशन ऑफ फिजिकली हैण्डीकैप्ड के नाम से एक संस्था की स्थापना की तथा उसका परिश्रम तथा योग्यता के साथ संचालन किया। इनकी सेवाओं के कारण ही राष्ट्रपति महोदय का ऑनरेरी ए.डी.सी. नियुक्त किया गया था। सन् 1961 ई. में इन्हें उसी कार्य के लिये श्रीलंका के दौरे पर भेजा गया। बाद में लंदन (इग्लैंड) के अपंगों संबंधी अन्तर्राष्ट्रीय सम्मेलनों में ये कई बार सम्मिलित हुये। अपने देश भारत का तो कई बार इन्होंने भ्रमण किया था। सन् 1965 ई. में पूना से देहरादून आ गये और अपने प्रिय कार्य के बारे में यहीं से बाहर जाते रहे, साथ ही यहां की सामाजिक तथा सांस्कृतिक गतिविधियों में भी भाग लेते रहे। अपने प्रिय कार्य के लिये ही ये दिल्ली गये हुये थे कि वहां अचानक उन्हें डबल न्यूमोनिया हो गया, जिसके कारण चौहत्तर वर्ष की आयु में वहीं 27 फरवरी सन् 1975 ई. को इन्होंने अपनी जीवन लीला समाप्त कर ली।

इनकी विद्यार्थी जीवन से ही साहित्य सेवा के प्रति गहरी अभिरूचि पैदा हो गयी थी। इनकी सर्वप्रथम कविता प्रभात शीर्षक से सन् 1919 ई. में गढ़वाली में प्रकाशित हुई थी। उन्हीं दिनों कालिंदी के तट पर भी प्रकाशित हुई। उसके बाद सन् 1921ई. में देहरादून के समाचार पत्र में इनकी कई कवितायें प्रकाशित हुई। इन्होंने महेशानंद थपलियाल जी द्वारा संपादित हृदय के संपादन तथा प्रकाशन में भी सहयोग दिया था। आशा के संपादन में भी सहायता दी थी। इनके दो उपन्यास धारावाहिक रूप में कानपुर के साप्ताहिक प्रताप में प्रकाशित हुये थे 1. स्वर्ण श्रृंखला 2. अधूरी कहानी। साथ ही उसी में पत्र में भारत (खण्ड काव्य) भी प्रकाशित हुआ था। विकलांगों की समस्याओं पर इन्होंने टूटा खिलौना (नाटक) लिखा था। मेरी मां शीर्षक से इन्होंने अपनी आत्म कथा भी लिखी थी। विकलांगों की विभिन्न समस्याओं पर इन्होंने अपनी आत्मकथा भी लिखी थी। 1. क्रूसेड टु कोलम्बो और 2. दि रोमांस ऑफ ए ब्रोकन डौल। पर दुर्भाग्यवश उपरोक्त सभी पुस्तकें अप्रकाशित ही रह गयी। पर जिस एक ही कविता संग्रह के द्वारा रत्न जी ने हिन्दी साहित्य में अपने लिये ऊंचा स्थान बना लिया है वह है मधुकोष।

●श्री कृपाराम मिश्र

स्वतंत्रता संग्राम पत्रकारिता तथा काव्य रचना के तीनों क्षेत्रों में योगदान करने वाले श्री कृपाराम मिश्र 'मनहर' का जन्म दुगड्डा (पौड़ी गढ़वाल) के समीप सरूड़ा ग्राम में अगस्त सन् 1902 ई. में हुआ था। इनके पिता श्री धनीराम मिश्र का श्री काशीराम जी के सुपुत्र के रूप में 8 अक्टूबर सन् 1872 ई. में जन्म हुआ था। उनका परिवार संपंन जमींदार था, और सरूड़ा आदि पर्वतीय गांवों के अतिरिक्त भाबर में भी उनकी बहुत बड़ी जमींदारी थी। उन्होंने मिडिल तक ही शिक्षा प्राप्त की थी, लेकिन स्वध्याय के द्वारा उन्होंने संस्कृत व हिंदी का अच्छा ज्ञान प्राप्त कर लिया था। जम्मीदारी की आय के अतिरिक्त वे ठेकेदारी का काम करते थे और कई सरकारी भवनों तथा कोटद्वार से दुगड्डा तक की मोटर सड़क का उन्होंने निर्माण करवाया था। वे सामान्यता शर्मा जी के नाम से विख्यात थे।

उनका सबसे बड़ा कार्य लैंसडौन के हाईस्कूल की स्थापना था। उन दिनों केवल पौड़ी में मिशन स्कूल और श्रीनगर में सरकारी हाईस्कूल था। इसलिए सन् 1907 ई. में उन्होंने पाली (कौड़िया) के समीप श्री बद्रीश ऐंग्लों संस्कृत स्कूल की स्थापना की। फिर सन् 1909 ई. में उसे लैंसडौन के समीप धूरा स्थान पर ले आये ताकि फौज के लोगों का सहयोग मिल सके। लंबे प्रयत्न के बाद सन् 1916 ई. में लैंसडौन छावनी के फौजी अधिकारियों ने उसे संरक्षण देना स्वीकार किया। फिर बाद में जब संयुक्त प्रांत के लैफ्टिनेंट गर्वनर लैंसडौन आये तब उन्होंने एक प्रभावशाली शिष्ट मंडल के साथ उनके समक्ष अपनी मांग रखी, फलस्वरूप शिक्षा विभाग ने उस स्कूल को मान्यता व आर्थिक सहायता स्वीकृत की। आखिर 30 जुलाई सन् 1918 ई. को जहरीखाल में वर्तमान भवन का शिलान्यास किया गया।

दुगड्डा स्थान पर व्यापारिक मंडी की स्थापना उनका दूसरा बहुत महत्वपूर्ण कार्य था। उन दिनों कोटद्वार से केवल दुगड्डा तक ही मोटर सड़क बन पाई थी। अत: उनके प्रयत्नों से सन् 1909 ई. में दुगड्डा बाजार बसना प्रारंभ हुआ। उन्होंने अपनी सब जमीन दे दी, कई दुकानें स्वयं बनाई तथा और से भी बनवाई। फौजी विभाग ने वहां पर अपना खच्चर पड़ाव स्थापित किया तथा पी. डब्ल्यू. डी. ने डाक बंगला बनाया। उनके प्रयत्नों से मंदिर, धर्मशाला तथा पाठशाला का भी निर्माण किया गया। अत: वे गढ़वाल की उस व्यापारिक मंडी के संस्थापक तथा प्रमुख सूत्रधार थे। उनका अतिथि सत्कार प्रसिद्ध था। इसी कारण उन्हें गढ़वाल के द्वार देवता के नाम से भी प्रसिद्धि मिली थी। ये स्वतंत्रता आंदोलन की ओर भी आकर्षित हुये। सन् 1930 ई. के नमक सत्याग्रह की झांकी इन्हें देहरादून में मिली और वहीं इन्हें श्री प्रताप सिंह नेगी वीर जी से परिचय प्राप्त हुआ। दोनों महानुभावों ने वहीं संकल्प किया कि गढ़वाल में भी सत्याग्रह संग्राम का बिगुल बजाया जाय। उस निश्चय के फलस्वरूप जून सन् 1930 ई. में दुगड्डे के प्रसिद्ध सत्याग्रह सम्मेलन का आयोजन किया गया। श्री नेगी जी उसके स्वागताध्यक्ष थे और श्री मनहर जी स्वागत मंत्री। तब से ये कांग्रेस में क्या शामिल हुये कि अंत तक डटे रहे। सन् 1930

ई. में दुगड्डा में हुई सत्याग्रह कांफ्रेंस समाप्त होने पर कार्यकर्ताओं की टोली लेकर पूरे गढ़वाल में जाग्रति अभियान का कार्य किया। आंदोलन छिड़ने पर सर्वप्रथम गिरफ्तार होने वालों मे श्री मिश्र भी थे। उन्हें छह मास की सजा हुई। सन् कठुलिया महादेव के मेले में राजद्रोहात्मक भाषण करने के कारण दूसरी बार तीन मास की सजा तथा पचास रूपया जुर्माना हुआ। मंत्री होने के कारण 15 दिन की सजा और हुई पर श्री हरगोविंद की पैरवी पर छूट गये। सन् 1941 ई. के व्यक्तिगत सत्याग्रह आंदोलन में जिला कांग्रेस कमेटी के मंत्री होने की हैसियत से जिले के प्रथम सत्याग्रही बने तथा देवीखाल (पट्टी सीला) में गिरफ्तार हुये। सन् 1942 ई. के भारत छोड़ो आंदोलन में लगभग एक वर्ष तक दुगड्डा तथा कोटद्वार में नजरबंद रहे। ये स्वयं जिला कांग्रेस कमेटी के कभी प्रधान कभी मंत्री तथा कभी अन्य पदाधिकारी निर्वाचित होते रहे तथा इन्होंने प्रत्येक पद पर प्रसन्नतापूर्वक कार्य किया। इसीलिए सन् 1972 ई. में गणतंत्र दिवस के अवसर पर स्वाधीनता की रजत जयंती के उपलक्ष्य में जिले से जिन चार स्वतंत्रता संग्राम सेनानियों को दिल्ली बुला कर के राजकीय ढंग पर सम्मानित किया गया था उन चार में पौड़ी गढ़वाल जिले की ओर से ये एक थे। इन्होंने गढ़देश नामक साप्ताहिक समाचार पत्र भी प्रकाशित किया। गढ़वाल के सुकवि, त्यागी पत्र संपादक और कर्मठ स्वतंत्रता संग्राम सेनानी मनहर जी ने ग्राम काशीरामपुर (कोटद्वार) में 4 अक्टूबर सन् 1975 ई. के दिन तिहत्तर वर्ष की आयु में इस संसार से विदाई ली।

●श्री मेहरबान सिंह कंडारी

उत्साही तथा कर्तव्य निष्ठ सरकारी अधिकारी एवं सेवाशील प्रबुद्ध जन प्रतिनिधि श्री मेहरबान सिंह कंडारी मूलत: ग्राम स्यूंसी पट्टी साबली, (पौड़ी गढ़वाल) के निवासी थे। लेकिन इनका जन्म मेम्यो (बर्मा) में 23 जून, सन् 1901 ई. में हुआ था। जहां इनके पिता श्री भोला सिंह कंडारी फौज में सेवारत थे।

इनके पिता गोरखा राईफल्स में भर्ती हुये थे। और धीरे-धीरे उन्नति करते हुए ये सूबेदार मेजर के पद तक पहुंच गये थे। बर्मा में बहादुरी के लिये इन्हें सरदार बहादुर की उपाधि प्रदान की गई। ऐसे संपंन परिवार में जन्म होने के कारण इनका पालन पोषण अच्छे ढंग से हुआ। इन्होंने प्रारंभिक शिक्षा बर्मा में पाई। फिर ये नैनीताल के सरकारी स्कूल से सन् 1920 ई. में हाईस्कूल (उन दिनों एस.एल.सी.) परीक्षा उत्तीर्ण की। इंटर की परीक्षा अलीगढ़ से और आगरा इलाहाबाद विश्वविद्यालय की बी.एस.सी. की परीक्षा पास की।

गढ़वाल क्षेत्र की राजकीय सेवा के में ये तीन बातों के लिए जाने जाते हैं सन् 1934 से सन् 1939 तक जिन पांच वर्षो में ये कोटद्वार में खाम सुपरिन्टेंडेंट रहे इन्होंने सुशिक्षित गढ़वाली परिवारों को वहां बसाने का अनथक प्रयत्न किया। उन दिनों इनका निवास स्थान विभिन्न महानुभावों के आतिथ्य सत्कार का केन्द्र बन गया था, सन् 1938 ई. में इन्होंने वहां एक विशाल प्रदर्शनी आयोजित की जिस अवसर पर गढ़वाल में सर्वप्रथम बार एक वायुयान द्वारा मनोरंजन उड़ान भरने से उस प्रदर्शनी में चार चांद लग गये थे।

कोटद्वार बाजार की वर्तमान चौड़ी सड़क भी इनकी सूझ-बूझ का प्रतीक है। फिर सन् 1952 से सन् 1954 ई. तक ये समूचे जिला गढ़वाल अर्थात् चमोली समेत के जिला नियोजन अधिकारी रहते हुये सारे जिले के सार्वजनिक श्रमदान के द्वारा मोटर सड़कों का निर्माण कराकर समूचे जिले में मोटर सड़कों का जाल बिछना प्रारंभ हो गया। इनकी प्रेरणा से ही स्वर्गीय श्री विष्णु सिंह रावत ने कोटद्वार में लीसा गृह उद्योग फैक्ट्री की स्थापना करके नई दिशा में कदम बढ़ाया। सन् 1957 ई. से सन् 1959 के जिन दो वर्षो में ये उत्तरकाशी समेत टिहरी गढ़वाल जिले के जिलाधीश रहे तब वहां भी इन्होंने श्रमदान आदि कार्यक्रम प्रारंभ कराये। इन्होंने चंबा मसूरी मार्ग पर फल पट्टी योजना का श्रीगणेश कराया जो बाद में और भी विकसित हुआ। **श्री मुकन्दी लाल जी** ने लिखा वे गढ़ माता के अत्यन्त योग्य कर्मठ सपूत थे। उनका नाम गढ़वाल के इतिहास में स्वर्ण अक्षर से लिखा जायेगा। **श्री चन्द्र सिंह गढ़वाली जी** ने लिखा है:- उन्होंने रामनगर से बैजरो तक मोटर मार्ग का उद्घाटन किया था, जो सतपुली-रीठाखाल होते हुये बैजरो थलीसैंण को है, उसको पूर्ण करवाया। वह मार्ग मेहरबान सिंह रोड़ के नाम से प्रचलित है। कुछ महीनों की बीमारी के बाद कोटद्वार में इन्होंने 3 मई, सन् 1978 ई. को महा प्रयाण किया। इनकी मृत्यु के बाद उनकी श्रीमती ने एक स्कूल का निर्माण करवाया, जिसका नाम **स्व. मेहरबान सिंह कण्डारी सरस्वती शिशु मंदिर** रखा गया।

●श्री हरिकृष्ण दौर्गादत्ति रूडोला

कवि तथा सहित्यकार श्री हरिकृष्ण दौर्गादत्ति रूडोला का जन्म सन् 1855 में श्रीनगर में हुआ था। इनके पिता का नाम श्री दौर्गादत्ति रूडोला था। संस्कृति साहित्य में दक्षता प्राप्त करने के बाद ये सन् 1883 में वहां के ट्रेनिंग स्कूल में संस्कृत के हेड पंडित नियुक्त हो गये। फिर सन् 1890 में ये प्रताप हाईस्कूल टिहरी में संस्कृत अध्यापक नियुक्त हो गये।

हरिकृष्ण दौर्गादत्ति रूडोला गढ़वाली में साहित्य रचना के लिए जाने जाते है। वैसे तो इन्होंने हिन्दी में भी फुटकर कवितायें लिखीं, तथापि गढ़वाली में ये अधिक सफल हुए। इनकी कई कवितायें गढ़वाली में प्रकाशित हुई जो सर्वश्री तारादत्त गैरोला द्वारा संपादित **गढ़वाली कवितावली** में संग्रहीत है। संस्कृत कविता के क्षेत्र में इन्होंने तीन पुस्तकें प्रकाशित की। **शतश्लोकी रघुवंश** में इन्होंने महाकवि कालिदास के रघुवंश का संक्षेप केवल एक सौ अनुष्टुप छंदों में किया।

प्रस्ताव पुष्पांजलि में 6 स्तवक है, जिनमें अन्योक्ति, नीति, चंद्रदर्शन, षड्ऋतु और भक्ति का क्रम से वर्णन किया गया है, यह पुस्तक लगभग 400 पदों में संपूर्ण हुई है। **स्तवन स्तवकावली** में विभिन्न देवताओं की स्तुति की गयी है। इन्होंने अपनी प्रथम दो पुस्तकों की प्रतियां संस्कृत के प्रगाढ़ अंग्रेज **विद्वान प्रोफेसर एफ. मैक्समूलर** को भेजी थी। उन्होंने सन् 1890 ई. में **ऑक्सफोर्ड** से इनके लिये अंग्रेजी में एक पत्र लिखा। मैंने प्रसन्नता के साथ प्रस्ताव **पुष्पांजलि** पढ़ी। मैंने अपना सारा जीवन संस्कृत के अध्ययन में लगा दिया लेकिन आपके समान सुंदर कविता लिखना मेरे लिये संभव नहीं है।

लेकिन दुर्भाग्य से केवल 37 वर्ष की आयु में ही जून सन् 1892 ई. में इनका देहावसान हो गया।

●श्री महेशानंद नौटियाल

व्यापार कुशल तथा पुस्तक प्रकाशक श्री महेशानंद नौटियाल का जन्म सितम्बर सन् 1870 ई. में पौड़ी में हुआ था। जहां इनके पिता श्री देवानंद नौटियाल मुहाफिज थे। इन्होंने चोपड़ा के मिशन हाईस्कूल में पढ़ाई की और फिर पब्लिक वर्क्स विभाग में नौकरी कर ली, लेकिन सन् 1900 ई. में नौकरी से त्यागपत्र देकर तीस वर्ष की आयु में इन्होंने नंदप्रयाग में स्वतंत्र व्यापार को प्रारंभ किया।

इन्होंने बद्रीनाथ-केदारनाथ धाम के यात्रियों के लिए कुछ अलग करने के उद्देश्य से गढ़वाल की वनस्पति शिलाजीत के साथ-साथ श्री बद्रीनाथ का चित्र, लॉकेट, माला व सुगंधित पदार्थों का भी व्यवसाय शुरू किया। इनका और भी महत्वपूर्ण कार्य श्री बद्रीनाथ व उत्तराखण्ड यात्रा संबंधी धार्मिक पुस्तकों का प्रकाशन है। शीघ्र ही ये गढ़वाल भर के एक बड़े प्रसिद्ध पुस्तक प्रकाशक बन गये। इनका सबसे महत्वपूर्ण ग्रंथ केदारखण्ड है। इस 1200 पृष्ठों के मोटे ग्रंथ का इन्होंने मूल संस्कृत से सरल सरस हिंदी में अनुवाद कराया। कुछ पुस्तकों का प्रकाशन कराने के लिए इन्होंने कई विद्वानों को नियुक्त किया। उनमें से **राज रहस्य, वृन्द वैद्यक** पुस्तकों का हिंदी जगत ने बहुत आदर था।

उपरोक्त पुस्तकों के अतिरिक्त इन्होंने सन् 1905 ई. में हिमालय चित्रदर्शन नामक पुस्तक भी प्रकाशित की। इन्होंने कर्णप्रयाग हाईस्कूल की स्थापना में विशेष सहयोग दिया। सन् 1903 ई. में पहले इन्होंने नंदप्रयाग में एक अंग्रेजी स्कूल स्थापित किया और बाद में समूचे चमोली तहसील के लिए एक हाईस्कूल की मांग और सारे इलाके की केन्द्रीयता व अन्य लाभ समझ कर इन्होंने अपना स्कूल कर्णप्रयाग में स्थानान्तरित कर दिया। आखिर इनका पैंतालिस वर्ष की अवस्था में ही 10 फरवरी सन् 1918 ई. को देहावसान हो गया।

●श्री गंगादत्त जोशी

प्रजा सेवी राजकर्मचारी श्री गंगादत्त जोशी का जन्म सन् 1871 ई. में पोखड़ा में हुआ था। इनके पिता श्री देवराम जोशी थे। साधारण स्कूली शिक्षा प्राप्त करने के बाद ये अल्मोड़ा जिले में गूल आमीन का कार्य करते रहे। सन् 1914 ई. में ये खाम भावर कोटद्वार के सुपरिंटेंडेंट बनाये गये। भावर में अच्छा कार्य करने व प्रथम विश्व महायुद्ध में प्रशंसनीय सहायता दिलाने के कारण ही इन्हें एम.बी.ई. की उपाधि मिली थी। खाम सुपरिटेंडेंट के पद से इनका कार्यकाल सबसे महत्वपूर्ण था। काश्तकारों की दशा सुधारने और उन्हें कर्ज से छुटकारा दिलाने की इन्होंने पूरी कोशिश की। नहरों व आबपाशी का इन्होंने आदर्श बंटवारा किया। इसके कारण भाबर के ऊसर व बंजर इलाके सरसब्ज हो गये। सनेह इलाके की जो वर्तमान नहर है उसे इंजीनियर व जिलाधीश के असंभव कहकर नामंजूर कर दिया था लेकिन अपनी जिम्मेदारी पर उसे बनवाकर सबको आश्चर्य में डाल दिया। सन् 1917-18 ई. में भंयकर दुर्भिक्ष के लिए इन्होंने गढ़वालियों की सहायता करने में महत्वपूर्ण योगदान दिया। इनकी **युद्ध ज्वर (इन्फ्लुएजा)** के कारण 23 फरवरी सन् 1922 ई. को 51 वर्ष की आयु में देहावसान हो गया।

●श्री भवानी दत्त थपलियाल

गढ़वाली कवि व नाटक लेखक श्री भवानी दत्त थपलियाल का जन्म सन् 1867 ई. में जिला पौड़ी गढ़वाल की पट्टी मवालस्यूं के खैड़ गांव में हुआ था। इनके पिता श्री विष्णुदत्त थपलियाल ने पटवारी पद पर कार्य किया। इन्होंने अंग्रेजी मिडिल तक शिक्षा ग्रहण की और फिर देहरादून को कलेक्टोरेट दफ्तर में क्लर्क नियुक्त हो गये। इन्होंने अधिकांशतया भगवद् भजन और साहित्य सेवा में व्यतीत किया। इन्होंने जय-विजय-नाटक नाम से एक पुस्तिका सन् 1911 ई में प्रकाशित की। सन् 1930 ई. में इन्होंने कलकत्ता से प्रहलाद नाटक प्रकाशित किया। इस नाटक में इन्होंने ग्रामीण जीवन का खाका भी खींचा। घिमडु प्रधान व दुर्जन सिंह फौंदार के चरित्रों द्वारा इन्होंने कन्या विक्रय प्रथा की नृशंसता व अदालतों की घूसखोरी का सफल चित्रण किया है। पद पद पर शराब, कुशिक्षा और मुकदमेंबाजी का विरोध करते हुये प्रवासी गढ़वालियों की दुर्दशा का भी प्रदर्शन किया गया है।

इस प्रकार ये गढ़वाल की सामान्य ग्रामीण जनता के गायक व नाटककार थे। इसीलिए इनका प्रहलाद नाटक उत्साही व्यक्तियों के द्वारा अभी तक खेला जाता है और इनके गीत उनके अपने बन गये हैं।

आखिर 29 अप्रैल सन् 1932 ई. को 65 वर्ष की आयु में इनका देहान्त हो गया।

●श्री कोतवाल सिंह नेगी (वकील)

पौड़ी के कोतवाल श्री कोतवाल सिंह नेगी का जन्म अक्टूबर सन् 1900 ई. में काण्डई (पौड़ी) में हुआ था। इनके पिता श्री सौंण सिंह नेगी एक साधारण व्यक्ति थे। फिर भी मिशन स्कूल चोपड़ा से हाईस्कूल परीक्षा उत्तीर्ण करने के बाद इन्होंने डी.ए.वी. कॉलेज कानपुर से बी.ए. की परीक्षा उत्तीर्ण की। तथा मिशन स्कूल चोपड़ा में अध्यापक हो गये लेकिन बाद में उन्होंने वहां से त्यागपत्र दे दिया। उससे पहले ये एल.टी. परीक्षा में भी उत्तीर्ण हो चुके थे। अध्यापकी से विदा लेने के बाद इन्होंने सन् 1929 ई. में एल.एल.बी. की परीक्षा उत्तीर्ण की और पौड़ी मे वकालत करने लगे।

कानपुर के प्रवास में ही ये वहां के गढ़वाल डिबेटिंग क्लब के मंत्री रहे तथा कुछ समय तक हिलमैन पत्रिका का संपादन भी इन्होंने किया। उन्हीं दिनों सन् 1921 ई. में गढ़वाल नवयुवक सम्मेलन की स्थापना हुई ये उसके उपप्रधान निर्वाचित हुये। इन्होंने अकाल सहायता का भी प्रशंसनीय कार्य किया। इन्होंने डी.ए.वी. हाईस्कूल पौड़ी की स्थापना में सर्वप्रमुख भाग लिया। इन्हीं के प्रयत्नों से उस स्कूल के भवनों का निर्माण हुआ। तथा डी.ए.वी. कॉलेज ट्रस्ट की संरक्षता प्राप्त हुई और अंत तक ये उस स्कूल के व्यवस्थापक रहे। सत्याग्रह आंदोलन में इन्होंने

महत्वपूर्ण भूमिका निभाई।

सन् 1930 ई. के सत्याग्रह आंदोलन में पौड़ी के इबटसन कांड में इन्हें 6 मास का कारावास मिला। तदुपरान्त अगस्त सन् 1942 में ये नजरबंद किये गये। उपरोक्त दो मुख्य कार्यों के अतिरिक्त गढ़वाल जिले के अनेक गतिविधियों में इनका हाथ था। क्षत्रिय बालकों में शिक्षा प्रसार करने का इन्होंने जोरदार प्रयत्न किया। इसी उद्देश्य से कई वर्षो तक इन्होंने पाक्षिक क्षत्रियवीर का संपादन भी किया। पौड़ी के सार्वजनिक जीवन के तो ये आधार स्तंभ थे। एक शब्द में ये पौड़ी के बहुमुंखी स्वयंसेवक थे। स्वामी सत्यदेव परिब्राजक ने इन्हें पौड़ी के कोतवाल की उपाधि भी प्रदान की थी। आखिरकार 23 मार्च सन् 1948 ई. में इन्होंने इस मृत्युलोक के रंगमंच से विदाई ली।

●श्री छ्वाण सिंह नेगी

कर्मठ और निर्भय जन सेवक श्री छवाण सिंह नेगी का जन्म उदयपुर वल्ला पट्टी के कोलसी ग्राम में सन् 1899 ई. में हुआ था। इनके पिता श्री देव सिंह नेगी पलटन हवलदार थे। अपने परिवार की साधारण स्थिति के कारण इन्होंने कक्षा छह तक ही शिक्षा पाई। लेकिन अध्यव्यवसाय से बाद में इन्होंने यथेष्ट ज्ञान प्राप्त कर लिया था। उसके बाद ही इनका ध्यान स्वतंत्र व्यवसाय की तरफ गया। और इन्होंने जंगलात के बड़े ठेकेदारों से छोटे-छोटे ठेके लेने शुरू किये। अपने गांव में इन्होंने एक दुकान खोली और उसे सफलता के साथ चलाया उस सफलता से उत्साहित होकर परगना गंगा सलाण की व्यापारिक मंडी लालढांग में इन्होंने अपनी मुख्य दुकान खोली। अपने अध्यव्यवसाय तथा व्यवहार कुशलता के द्वारा इन्होंने व्यापार में सफलता पाई।

गढ़वाल में श्री छवाण सिंह नेगी दो कार्यो के लिए जाने जाते है:-1. उत्साहपूर्वक चंदा संग्रह करके इन्होंने जाखणीखाल में पानी की व्यवस्था कराई वह पानी लगभग दो मील की दूरी से नलों द्वारा लाया गया था। 2. श्री जगमोहन सिंह नेगी को इन्होंने 1928 ई. में अष्ट ग्राम भ्रातृ मंडल की स्थापना व संचालन में सर्वाधिक सहयोग दिया। उस मंडल का उद्देश्य संबंधित आठ गांवों में ग्राम सुधार के काम करना था। उसके कारण सारे इलाके में एक नई जागृति पैदा हुई। इन्होंने सन् 1930 ई. के सत्याग्रह आंदोलन में सक्रिय भूमिका निभाई। श्री छवाण सिंह नेगी जी ने अनेक विद्यार्थियों को आर्थिक सहायता दी थी तथा भगडू (भृगुखाल) में श्रद्धानंद विद्यालय की स्थापना की। 6 दिन बीमार रहने के कारण 11 जुलाई सन् 1949 ई को इनका कनखल में देहावसान हो गया।

●श्री चेतराम बौड़ाई

हिंदी प्रचार के लिये अपना सारा जीवन आहूत कर देने वाले श्री चेतराम बौड़ाई का जन्म सन् 1891 में बंगार पट्टी साबली (पौड़ी गढ़वाल) में हुआ था।

इन्होंने पोखड़ा से मिडिल की परीक्षा उत्तीर्ण करने के बाद मिशन स्कूल चोपड़ा (पौड़ी) में मैट्रिक तक ही शिक्षा पाई। फिर इन्होंने पंजाब जाकर संस्कृत, हिंदी तथा अंग्रेजी में दक्षता प्राप्त की तथा संगीताचार्य श्री विष्णु दिगंबर जी से संगीत का शास्त्रीय अध्ययन किया। तदुपरांत इन्होंने अध्यापन कार्य में अपनी शक्ति लगाई। इन्होंने नेशनल कॉलेज, लाहौर गुरूकुल कांगड़ी, कन्या महाविद्यालय, जालंधर और आर्य कन्या गुरूकुल, पोरबंदर (सौराष्ट्र) में अध्यापन किया। इनके छात्रों में प्रसिद्ध साहित्यकार श्री यशपाल तथा श्री उपेन्द्रनाथ अश्क तथा विख्यात क्रांतिकारी सरदार भगत सिंह प्रमुख थे। वहां से ये शर्मा जी कहलाने लगे, और इन्होंने बौड़ाई शब्द छोड़ दिया।

खादी के आजीवन व्रती तथा समाज सुधार के घोर पृष्ठ पोषक होने के साथ-साथ इन्होंने साहित्य सेवा तथा हिंदी प्रचार में विशेष योगदान दिया। अनेक पत्र-पत्रिकाओं में विद्वतापूर्ण लेख प्रकाशित कराने के अतिरिक्त इन्होंने हिंदी संदेश आदि कुछ पत्रिकाओं का संपादन भी किया था। इनकी समालोचनायें जोरदार होती थी। इन्होंने पंजाब की हिंदी परीक्षाओं के लिए कुछ पाठ्य पुस्तकें भी तैयार की थी। लेकिन सबसे अधिक धुन इन्हें हिंदी के प्रचार प्रसार की थी। इसी क्रम में इन्होंने कई हिंदी प्रचारिणी सभाओं की स्थापना भी कराई थी। आखिरकार 29 मई सन् 1953 को पोरबंदर से लौटने के बाद अपने जन्म ग्राम में ही इन्होंने प्रभु की गोद में विश्राम लिया।

●श्री सी.एच. चौफीन

जिला गढ़वाल के लोकप्रिय शिक्षा विस्तारक श्री सी.एच. चौफीन एक संभ्रांत ईसाई परिवार से संबंधित थे। और 11 मार्च 1877 ई. को इनका जन्म हुआ था।

इनके पूर्वज चाय बगीचों के विशेषज्ञ के रूप में चीन से आये थे, लेकिन बाद में ईसाई हो गये थे। वे मुसेटी, पट्टी चोपड़ाकोट के चाय बगीचे में नियुक्त हो गये थे, बाद में वे मुसेटी का चाय बगीचा बेचकर पौड़ी के समीप गड़ोली में आ गये। इन्होंने उच्च शिक्षा प्राप्त करने के बाद चोपड़ा स्कूल में अध्यापन किया और कुछ वर्षो के बाद प्रधानाध्यापक नियुक्त हुये। सन् 1906 ई. में इन्हें जिला गढ़वाल का डिप्टी इंसपेक्टर ऑफ स्कूल्स नियुक्त किया गया। और लगभग तीस वर्षो तक इन्होंने उस पद पर कार्य किया। उसी बीच ये गढ़वाल जिले के प्राय: प्रत्येक गांव में गये। और इन्होंने अपनी वाक् पटुता और व्यवहार कुशलता के द्वारा सैकड़ों प्राईमरी विद्यालय खुलवाने में सफलता पाई। इनका नाम **छंग चुन** था। वह नाम सारे गढ़वाल में फैल गया था।

1 सितंबर सन् 1959 को जब इनका देहावसान हुआ तब सारे गढ़वाल जिले में शोक मनाया गया था।

श्री घुत्ता सिंह गुंसाई

शिक्षा में लगभग शून्य लेकिन सूझ-बूझ और कार्य कुशलता में भरपूर श्री घुत्ता सिंह गुंसाई ग्राम ढुंगी, पट्टी बनगढ़स्यूं (पौड़ी गढ़वाल) के निवासी थे। गरीबी के कारण इन्हें शिक्षा नहीं मिल पाई तथापि अपने परिश्रम से इन्होंने अपना ज्ञान बढ़ाया। प्रारंभ में इन्होंने यात्रा मार्ग पर स्थित रानीबाग स्थान पर दूकान की। फिर ये पट्टी चौधरी नियुक्त हो गये। ये तभी से समाज सेवा में सहयोग देने लगे थे।

ये अपने क्षेत्र से जिला बोर्ड के निर्विरोध सदस्य चुन लिये गये। सन् 1948 ई और सन् 1958 ई. में भी निर्विरोध चुने गये। इस प्रकार लगभग छब्बीस वर्षो तक सदस्य रहकर इन्होंने एक कीर्तिमान स्थापित किया था। जिला बोर्ड के सदस्य के रूप में इन्होंने असाधारण सफलता प्राप्त की ये कई वर्षो तक पौड़ी तहसील कमेटी के अध्यक्ष रहे। उस पद से इन्होंने कई

सड़कों व ग्राम बटियों का निर्माण कराया और कई स्कूल स्थापित कराये। अपनी लोकप्रियता के कारण ये जिला बोर्ड की ओर से बद्रीनाथ मंदिर समिति के सदस्य भी चुने गये। देलचौंरी के विद्यालय के पीछे तो ये मानों पागल से हो गये थे। पहले वहां पर केवल प्राइमरी स्कूल था। उसे पहले मिडिल स्कूल बनवाया तथा बाद में हाईस्कूल करा दिया।

ऐसे कर्मठ जन प्रतिनिधि की 17 जून सन् 1961 ई. के दिन मृत्यु हो गयी।

●श्री हरि राम धस्माणा

वैदिक साहित्य के अध्येता श्री हरिराम धस्माणा ग्राम बग्याली पट्टी मौदाड़स्यूं (पौड़ी गढ़वाल) के निवासी थे। गढ़वाल के विद्यालयों में प्रारंभिक शिक्षा प्राप्त कर लेने के बाद इन्होंने बरेली कॉलेज से हाईस्कूल, इण्टरमीडिएट और बी.ए. की परीक्षाएं उत्तीर्ण की। फिर कुछ समय तक इलाहाबाद ए.जी. ऑफिस में कार्य करने के उपरांत इन्हें स्कूलों का सब डिप्टी इंसपेक्टर नियुक्त किया गया। और कुछ वर्षो के बाद इन्हें डिप्टी इंसपेक्टर बना दिया गया। उस पद पर नियुक्त होने वाले ये प्रथम गढ़वाली थे, पर इन्होंने अधिकांश सेवा अल्मोड़ा व नैनीताल जिलों में की। फिर इन्हें तहसीलदारी का पद मिला। लेकिन अपने अक्खड़ स्वभाव के कारण इन्हें सन् 1931 में स्वेच्छापूर्वक अवकाश ले लेना पड़ा। प्राचीन ऋषियों की तरह वैदिक साहित्य का अध्ययन करके इन्होंने उस नाम को सार्थक कर दिया। उन दिनों इनके कई जानकारी पूर्ण लेख पच्चजन्य (लखनऊ), उत्तर भारत (पौड़ी) और कर्मभूमि (लैंसडौन) में प्रकाशित हुये थे। फिर इनकी चार पुस्तकें प्रकाशित हुई-1. सभ्य मानव का मूल स्थान, 2. ऋगवेदिक शिक्षा विज्ञान, 3. ऋगवेदिक इतिहास, 4. वेद माता अर्थात् ऋगवेदिक भूगोल। उन्होंने अनेक उदाहरण देकर यह बताया कि बहुत से वैदिक शब्द अभी भी गढ़वाली शब्द भंडार में प्रायः उसी रूप में विद्यमान हैं। भौगोलिक नामों की सहायता से भी इन्होंने अपने मत की पुष्टि की थी। अधिक वृद्ध हो जाने पर ये अधिकांशतया अपने ज्येष्ठ पुत्र श्री ईशान दत्त धस्माणा के साथ लखनऊ में रहा करते थे। वहीं लगभग छियासी वर्ष की आयु में 20 दिसम्बर सन् 1961 को इन्होंने महाप्रयाण किया।

●श्री बृजमोहन चंदोला

जिला गढ़वाल के सर्वप्रथम वकील तथा जिला बोर्ड के गैर सरकारी सभापति श्री बृजमोहन चंदोला का जन्म पौड़ी के समीप रांई गांव में हुआ था। इन्होंने म्योर सेंट्रल कॉलेज, इलाहाबाद से एम.ए. की परीक्षा उत्तीर्ण करने के बाद वकालत भी पास की। ये गढ़वाल जिले के सर्वप्रथम वकील थे। इसीलिये जब डिग्रीयों से विभूषित होकर ये गढ़वाल लौटे, तब गढ़वाल के प्रवेश द्वार कोटद्वार में बाजे गाजों के साथ इनका स्वागत हुआ था।

इन्हें विद्यार्थी जीवन से ही साहित्य प्रेम था। विशेषकर अंग्रेजी साहित्य की इन्हें विस्तृत जानकारी थी। और कभी-कभी स्वान्तः सुखाय अंग्रेजी में पद्य रचना भी कर लिया करते थे। इनके पास कानूनी पुस्तकों का एक बड़ा संग्रह था, जिसे इन्होंने बाद में पौड़ी के सार्वजनिक पुस्तकालय को दान कर दिया था। ये उत्तर प्रदेशीय वकील संघ के उपाध्यक्ष भी रहे। जून सन् 1923 ई. में ये गढ़वाल जिला बोर्ड के सर्वप्रथम गैर सरकार चेयरमैन चुने गये। उस पद पर इन्होंने अक्टूबर सन् 1925 ई. तक कार्य किया। उसी बीच सन् 1924 ई. (साल इकासी) की भयंकर बाढ़ से कई पुल बह गये, और सड़कें समाप्त हो गयी। इनके प्रयत्नों से राज्य सरकार ने बोर्ड को दो लाख रूपयों का अनुदान दिया। और तब कई पुलों का पुर्ननिर्माण कराया गया। उसी अच्छे कार्य के लिए इन्हें रायबहादुरी से सम्मानित किया गया था। अनेक वेदनाओं को सहने के बाद 30 अप्रैल सन् 1962 ई को इनका देहान्त हो गया।

●रायफलमैन जशवंत

चीनी सैनिकों के विरूद्ध असाधारण शूरवीरता के साथ आत्मोत्सर्ग करने वाले रायफलमैन जशवंत सिंह रावत का जन्म ग्राम बाड्यूं पट्टी खटली (पौड़ी गढ़वाल) में सन् 1941 ई. में हुआ था। इनके पिता श्री गुमान सिंह रावत देहरादून के मिलिटरी डेयरी फार्म में कर्मचारी थे। इन्होंने देहरादून में ही नवीं कक्षा तक शिक्षा पाई और सन् 1961 ई. में लैंसडौन जाकर ये गढ़वाल राईफल्स में भर्ती हो गये। 17 नवम्बर सन् 1962 ई. को चीनी सेनाओं की घुसपैठ को देखते किया। श्री रावत को उत्तरी पूर्वी सीमान्त (नेफा) में अपनी गढ़वाली बटालियन का नेतृत्व करने का मौका मिला। परिणाम स्वरूप श्री रावत को अपनी शूरवीरता दिखाने का मौका मिला। जहां इन्हें वीरगति प्राप्त हुई। भारत सरकार ने इनकी महान कर्तव्य परायणता तथा अनुपम वीरता पर इन्हें मरणोपरान्त महावीर चक्र देने की घोषणा की। बाद में भारत के राष्ट्रपति डॉ. सर्वपल्ली राधाकृष्णन जी ने स्वयं अपने कर कमलों से इनके पिता को वह गौरवशाली पदक प्रदान किया। रायफलमैन जशवंत सिंह रावत ने अपना जो अनुपम बलिदान किया था तथा इनके अन्य साथियों ने जो जमकर युद्ध किया था उसी के कारण उस क्षेत्र के कोर कमांडर लेफ्टिनेंट जनरल बी.एम. कौल ने बाद में लिखा था कि यदि अन्य भारतीय सेनायें भी उस गढ़वाली बटालियन की तरह बहादुरी के साथ लड़ी होती तो भारत-चीन युद्ध का नक्शा कुछ ओर ही होता।

●श्री प्रताप सिंह चौहान

बद्रीनाथ मंदिर कमेटी के सर्वप्रथम सेक्रेटरी तथा कोटद्वार नगर पालिका के लोकप्रिय अध्यक्ष श्री प्रताप सिंह चौहान का ग्राम जमाल, पट्टी उदयपुर (पौड़ी गढ़वाल) में सन् 1895 में जन्म हुआ था। मैट्रिक की परीक्षा उत्तीर्ण करने पर इन्हें सन् 1919 ई. में नायब तहसीलदारी का पद मिला। ये परिश्रमी, योग्य तथा व्यवहार कुशल तो थे ही अतः पहले ये तहसीलदार के पद पर पदोन्नत किये गये फिर डिप्टी कलेक्टर के पद पर इनका चयन किया गया। अंत में सम्मान तथा सफलता के साथ सरकारी नौकरी करते हुये इन्होंने स्थानापन्न जिलाधीश के पद से अवकाश ग्रहण किया।

ये गढ़वाल के बद्रीनाथ मंदिर समिति के सर्वप्रथम सेक्रेटरी नियुक्त किये गये। विपरीत परिस्थितियों में इन्होंने असाधारण धैर्य और आत्म विश्वास का परिचय दिया। कोटद्वार नगर में निवास करने पर वहां नागरिकों ने इन्हें अपनी नगरपालिका का अध्यक्ष चुना और पूरे बारह वर्षो तक इन्होंने उस कार्यभार को कुशलतापूर्वक निभाया। उसी बीच इन्होंने निष्पक्षता, कर्तव्य-परायणता और प्रशासन पटुता का परिचय दिया था। उनके अंदर जनसेवा की भावना प्राकृतिक रूप से भरी हुई थी, और अंतिम सांस रहने तक वे जनसेवा में बड़ी लगन व निष्ठा से लगे रहे। उन्होंने कोटद्वार नगर

की जो सेवा की वह सदा स्मरणीय रहेगी। अन्त में उनका देहावसान 8 अक्टूबर सन् 1966 को हुआ।

●हवलदार नारायण सिंह

श्री नारायण सिंह गुंसाई ग्राम मरखोला, पट्टी घुड़दौड़स्यूं (पौड़ी गढ़वाल) के निवासी थे। और वहीं सन् 1887 में इनका जन्म हुआ था। बाद में लैंसडौन पहुंच कर गुंसाई जी गढ़वाली सेना में भर्ती हो गये। गढ़वाल में श्री नारायण सिंह गुंसाई जी पेशावर कांड में श्री चंद्र सिंह गढ़वाली जी के दाहिने हाथ के रूप में जाने जाते है। 22,23,24 अप्रैल सन् 1930 ई. की प्रसिद्ध ऐतिहासिक पेशावर घटना हुई। उस अवसर पर इस्तीफे के कागज पर जो हस्ताक्षर कराये गये थे, उसमें गुंसाई जी का विशेष हाथ था। उस कोर्ट मार्शल में इन्हें पन्द्रह वर्ष के कारावास की सजा हुई थी। आखिर नवम्बर सन् 1967 ई. में इन्होंने शांतिपूर्वक अपनी इह-लीला समाप्त की।

●ब्रहमचारी बालक राम

दरिद्रतम घर में जन्म लेकर और जन्मान्ध होते हुये भी आर्य समाज के विद्वान पृष्ठ पोषक श्री बालकराम का जन्म 10 अप्रैल, सन् 1915 करे ग्राम बिंजोली, पट्टी गुराड़स्यूं (पौड़ी गढ़वाल) के एक शिल्पकार परिवार में हुआ था। इनके पिता जागरी का काम करके निर्वाह करते थे, इसलिये बिना शिक्षा पाये इन्होंने देवताओं के जागर आदि कण्ठस्थ कर लिये तथा चौबीस वर्ष की आयु तक अपना पैतृक व्यवसाय चलाते रहे।

सन् 1945 ई. में इनका ध्यान गढ़वाल की और गया। तब इन्होंने डोला पालकी की प्रश्न को हल करने का बीड़ा उठाया। फिर भी इन्हें लगातार दौड़भाग करनी पड़ी यहां तक कि उपवास भी लेने पड़े। अंत में इन्हें सफलता मिली और उत्तर प्रदेश की कांग्रेसी सरकार ने सामाजिक अयोग्यता निवारक कानून पारित करके सदा के लिए उस अधिकार की पुष्टि कर दी। पंजाब के हिंदी रक्षा आंदोलन में इन्होंने उत्साहपूर्वक भाग लिया। ये कई बार गिरफ्तार करके छोड़ दिये गये। लेकिन ये वापस जाकर सत्याग्रह करते रहे। तब जाकर पंजाब की सरकार झुकी। फिर सन् 1966-67 ई. के दिल्ली के गोरखा आंदोलन में भी इन्होंने सक्रिय भाग लिया। उपरोक्त जेल यात्राओं और अनशनों के कारण 19 जनवरी, सन् 1968 में इन्होंने परम धाम की यात्रा की।

●श्री महेशानंद थपलियाल

सिद्धहस्त पत्रकार तथा राष्ट्रीय कार्यकर्ता श्री महेशानंद थपलियाल का ग्राम टोलू, पट्टी मनियारस्यूं (पौड़ी गढ़वाल) में सन् 1901 में जन्म हुआ था। नैथाणा विद्यालय के बाद इन्होंने श्रीनगर से सन् 1918 में हाईस्कूल की परीक्षा उत्तीर्ण की। वहां डॉ. पीताम्बर दत्त बड़थ्वाल भी पढ़ रहे थे, वहां इनकी लेखन शक्ति का भी विकास हुआ।

प्रारंभ में ये एक पर्वतीय पाषाण के उपनाम से कवितायें लिखा करते थे जो स्थानीय पत्र-पत्रिकाओं में छपा करती थी। मेरठ प्रवास के दिनों में इन्होंने श्री रत्नाम्बर दत्त चंदोला के सहयोग से साप्ताहिक **हृदय** का संपादन किया। पर वह उच्च स्तरीय साप्ताहिक पत्र दो वर्ष ही चल पाया। उसके बाद साप्ताहिक **उत्तर भारत, नव प्रभात** कों भी संपादन किया। जिन दिनों ये लैंसडौन में कार्यरत थे। तब इन्होंने साप्ताहिक **नवप्रभात** शुरू किया। स्वयं सरकारी नौकर होने के कारण ये अपना नाम नहीं दे सकते थे इसलिये संपादक के आगे श्री **ललिता प्रसाद 'ललाम'** तथा प्रकाशक के स्थान पर श्री **नेत्र सिंह बिष्ट** के नाम से प्रकाशित होते थे।

लेख लिखने व पत्र संपादन के अतिरिक्त इन्होंने गढ़वाल जिले का एक भूगोल भी लिखा था। जो कई वर्षो तक वहां के विद्यालयों मे पढ़ाया जाता था। इसके अतिरिक्त इन्होंने स्कूल संबंधी कुछ छोटी-छोटी पुस्तकें भी प्रकाशित कराई थी। पर थपलियाल जी कोरी साहित्यिक व्यक्ति नहीं थे, इन्होंने स्वतंत्रता संग्राम में भी सक्रिय योगदान दिया था। इसलिये सन् 1930 के सत्याग्रह आंदोलन में इन्हें इबटसन-कांड में छह मास का कारावास भुगतना पड़ा था।

ऐसे सिद्धहस्त पत्रकार तथा जन-सेवक का दिल्ली में 20 फरवरी, सन् 1969 के दिन देहान्त हो गया।

●श्री जोध सिंह रावत

प्रवासी गढ़वालियों के अनन्य सेवक तथा शिक्षा प्रसारक श्री जोध सिंह रावत ग्राम भलगांव, पट्टी लंगूर पल्ला (पौड़ी गढ़वाल) के निवासी थे। इनका जन्म अक्टूबर सन् 1901 में हुआ था। गरीबी के कारण इन्हें कष्टकारी जीवन बिताना पड़ा बावजूद इसके मित्रों के सहायता से इन्होंने सरस्वती विद्यालय की स्थापना की। वह विद्यालय सरकारी दफ्तरों के साथ जाड़ों में दिल्ली और गर्मियों में शिमला में चला करता था लेकिन सन् 1942 से इन्होंने दिल्ली ही में स्थायी रूप से रहना और अपना विद्यालय चलाना प्रारंभ किया। हनुमान मंदिर के पास इन्होंने अपना कार्य प्रारंभ किया। उस विद्यालय को धीरे-धीरे सरस्वती महाविद्यालय बना दिया। जिससे इनकी ख्याति चारों ओर फैल गयी। सरस्वती महाविद्यालय आर्थिक परिस्थिति से कुचले हुये युवकों, बच्चों तथा बूढ़ों के लिए साक्षात सरस्वती के तरह पर बल देने वाला था। इस प्रकार रावत जी पूरे सत्ताईस वर्षो तक शिक्षा प्रसार के उस पुनीत यज्ञ को चलाते रहे और अपने उस महान उत्तर दायित्व से इन्होंने तभी मुक्ति पायी जब इनके शरीर ने जवाब दे दिया। इसीलिए इनके छात्र इन्हें श्रद्धावश आचार्य जी कहकर संबोधित करते थे।

उपरोक्त शिक्षा प्रसार के अतिरिक्त ये साहित्य सेवा में भी संलंन रहे। ये कई वर्षो तक दिल्ली प्रांतीय साहित्य सम्मेलन के पदाधिकारी रहे। इन्होंने साहित्यिक विषयों पर कई आलोचनात्मक लेख, कहानियां, कवितायें तथा एकांकी नाटक भी लिखे। इन्होंने मित्रता और देशप्रेम शीर्षक से दो एकांकी नाटकों की भी रचना की थी। ये गढ़वाली संस्था गढ़वाल हितैषिणी सभा के ये मुख्य स्तम्भ थे।

ऐसे कर्मठ समाज सेवी तथा शिक्षा विस्तारक श्री जोध सिंह रावत का दिल्ली में ही 9 अगस्त सन् 1970 ई. के दिन जीवन दीप बुझ गया।

श्री परमेश्वरानन्द घिल्डियाल

संस्कृत शिक्षा के क्षेत्र में अखिल भारतीय ख्याति प्राप्त करने वाले श्री परमेश्वरानन्द घिल्डियाल का जन्म 1 जनवरी, सन् 1898 के दिन देहरादून में हुआ था। जहां इनके पूर्वज डांग (श्रीनगर) से आकर बस गये थे। इन्होंने ऋषिकुल ब्रह्मचार्याश्रम, हरिद्वार में शिक्षा पाई इन्होंने पंजाब विश्वविद्यालय की शास्त्री परीक्षा भी सर्वोच्च अंकों में उत्तीर्ण की।

लाहौर में सनातन धर्म संस्कृत कॉलेज में सन् 1920 से सन् 1947 तक अध्यापन कार्य किया। पहले ये चार वर्षो तक उपाचार्य रहे और फिर सन् 1924 से इन्होंने प्रधानाचार्य का कार्यभार संभाला। जून, सन् 1942 में भारत सरकार ने भी इन्हें महामहोपाध्याय की पदवी प्रदान की। अच्छे सुयोग्य छात्रों को सैकड़ों की संख्या में तैयार करने के अतिरिक्त इन्होंने संस्कृत में शोधकार्य का निर्देशन किया। चार संस्कृत पत्रिकाओं का संपादन किया। ग्यारह शास्त्रीय ग्रंथों के सुलभ संस्करण तैयार किया। पांच ग्रंथों पर गवेषणापूर्ण टीकायें तथा भूमिकायें लिखी। आकाशवाणी से संस्कृत प्रसारणों में सहयोग दिया। तथा कुछ अखिल भारतीय संस्कृत सम्मेलनों का आयोजन कराया। केन्द्रीय संस्कृत विद्यापीठ ने एक स्मृति ग्रंथ का प्रकाशन किया है। उसके अनुसार वे गीतकार तथा गीतज्ञा, नाट्यशास्त्र विशेषज्ञ, प्रतिभासंपंन लेखक, प्रमाणिक वक्ता, भाषातज्ञा साहित्यकार, अलंकार शास्त्र के मर्मज्ञ विद्वान तथा अनुसंधान कला निपुण मार्गदर्शक थे। केन्द्रीय संस्कृत विद्यापीठ से अवकाश लेने के बाद ये होशियारपुर में उच्च स्तरीय शोधकार्य का संचालन करते रहे और वहीं 3 जुलाई सन् 1973 ई. को इन्होंने पार्थिव शरीर की तिलाजंलि दी।

●श्री घनश्याम डिमरी

ख्यातनामा वकील तथा विनम्र जन-सेवक श्री घनश्याम डिमरी का जन्म कर्णप्रयाग के समीप ग्राम डिम्मर में हुआ था। उच्चतम शिक्षा प्राप्त कर लेने के बाद सन् 1928 में इन्होंने चमोली में वकालत प्रारंभ की। वहीं इनकी वकालत चमकती चली गयी और धीरे-धीरे केवल चमोली तथा गढ़वाल में ही नहीं बल्कि बाहर के जिलों में भी इनकी ख्याति फैल गयी। अपने कुछ विशेष गुणों के कारण उन्हें बुद्धिजीवी समुदाय धर्मराज की उपाधि देने में नहीं हिचकता था।

इन्हें कई पदों से सेवा करने का मौका मिला ये उन्नीस वर्षो तक गढ़वाल जिला बोर्ड के सदस्य रहे। चमोली जिले का अलग से निर्माण हो जाने पर ये जिलाधीश की परामर्शदात्री समिति के सदस्य रहे। ये कुमाऊं फॉरेस्ट कमेटी और जिला नियोजन समिति आदि अनेक संस्थाओं के सदस्य भी रहे। इन्होंने कई विद्यालयों की प्रबंध समितियों के मैनेजर के पद से कार्य करने के अतिरिक्त कई वर्षो तक श्री केदारनाथ मंदिर के रिसीवर का भी कार्य किया। ये जिला गढ़वाल विकास संघ के अनेक वर्षो तक सदस्य रहे और बाद में संघ के चैयरमैन भी मनोनीत किये गये। इन्होंने सन् 1957 में एसेम्बली का चुनाव एक निर्दलीय उम्मीदवार के रूप में लड़ा और पांच वर्षो तक एम.एल.ए. रहे। इन्होंने निष्ठापूर्वक अपने कर्तव्य का पालन किया। ऐसे स्वच्छ सार्वजनिक जीवन वाले समाज सेवक का 11 अप्रैल सन् 1976 के दिन महा-प्रयाण हुआ।

●श्री दामोदर थपलियाल

गढ़वाली भाषा के उन्नायक श्री दामोदर प्रसाद थपलियाल का जन्म 23 मार्च, सन् 1923 को पौड़ी गढ़वाल की खातस्यूं पट्टी के ग्राम पालकोट में हुआ था। अपने ननिहाल रीठाखाल में प्रारंभिक शिक्षा पाने के बाद ये किसी प्रकार पंजाब पहुंच गये और पंजाब विश्वविद्यालय की प्रभाकर (हिंदी) तथा शास्त्री (संस्कृत) की परीक्षायें उत्तीर्ण कर ली। इन्होंने अध्यापन कार्य आरंभ किया। ये अध्यापकों के अधिकारों और कर्तव्यों के हिमायती थे। अत: ये कई वर्षो तक माध्यमिक शिक्षक संघ के पदाधिकारी रहे तथा देहावसान के समय ये गढ़वाल विश्वविद्यालय शिक्षक संघ के प्रधान थे। पर गढ़वाली बोली को साहित्यिक भाषा का पद दिलाने के लिये तो ये मानों पागल थे। इस उद्देश्य से इन्होंने देहरादून मे गढ़वाली साहित्य परिषद की स्थापना कराई और उसकी ओर से फ्योंली नामक पत्रिका का प्रकाशन कराया। बाद में उस संस्था का नाम गढ़वाली जन साहित्य परिषद् हो गया। पहाड़ी जी ने लिखा है कि वे गढ़वाली भाषा के उन्नायक के रूप में वे सदा हमारी धरती पर अमर रहेंगे। यह उनका ही प्रयास था कि गढ़वाली ने बोली की केंचुली उतार कर भाषा का सबल रूप ले लिया है। वे स्वयं में एक संस्था थे। वे 12 नवम्बर सन् 1977 को स्वर्गधाम सिधारे।

●श्री महीधर बड़थ्वाल

सुलेखक तथा समाज सेवक श्री महीधर बड़थ्वाल का ग्राम बुडोली, पट्टी गंगवाड़स्यूं (पौड़ी गढ़वाल) में सन् 1902 में जन्म हुआ। ये अंग्रेजी मिडिल तक ही शिक्षा पा सके पर बाद में इन्होंने अपना ज्ञान क्षेत्र विस्तृत कर लिया था। ये जहां कहां भी रहे, इन्होंने प्रवासी गढ़वालियों को संगठित करके उनकी सेवा की। इस क्रम में पहले इन्होंने गढ़देश सेवा संघ का गठन किया। बाद में श्री श्रीदेव सुमन जी के सुझाव पर इन्होंने उसे हिमालय सेवा संघ में बदल दिया। ये गढ़वालियों की सम्मान रक्षा के हिमायती थे। एक बार तो दिल्ली के चित्रपट (साप्ताहिक) में गढ़वालियों पर कुछ आक्षेप छपने के कारण इन्होंने उस नौकरी से त्याग पत्र देकर एक प्रबल जन आंदोलन खड़ा कर दिया था। विभिन्न पत्र पत्रिकाओं में इनके संयत और सुलझे हुये लेख अक्सर छपा करते थे। इन्होंने तीन पुस्तकें भी प्रकाशित की- जागृति नाद, कश्मीर समस्या और गढ़वाल में कौन कहां। अंतिम पुस्तक में इन्होंने गजेटियर औश्र हू-इज-हू को सम्मिलित करने का प्रयत्न किया था। यह पुस्तक जानकारी पूर्ण और उपयोगी है पर ये इच्छा रहते हुये भी इसका नया संस्करण प्रकाशित नहीं कर पाये।

●श्री वाणी विलास डबराल

अपने नाम को सार्थक करने वाले श्री वाणी विलास शास्त्री का जन्म ग्राम तिमली, पट्टी डबरालस्यूं (पौड़ी गढ़वाल) में 22 अक्टूबर सन् 1899 को हुआ था। इनके पिता श्री सदानन्द डबराल एक धुरंधर विद्वान और सुकवि थे।

वाणी विलास जी को पितामह और पिता से उत्तराधिकार के रूप में प्रतिभा मिली थी। इन्होंने तिमली और देवप्रयाग में शिक्षा प्राप्त करने के बाद सन् 1920 में लाहौर से शास्त्री परीक्षा उत्तीर्ण की। उसके बाद परिस्थितवश इनका मुख्य कार्यक्षेत्र मध्य प्रदेश रहा। वहां के नगरों में इनके हजारों भक्त और प्रशंसक हो गये थे। अपनी प्रवचन प्रवीणता के कारण इन्हें बर्मा, मलेशिया, थाइलैण्ड, हॉगकॉग आदि दक्षिण पूर्वी देशों और पूर्वी देशों और पूर्वी अफ्रीका में भी जाने का अवसर मिला था। इनकी स्मरण शक्ति अद्भुत थी और ये धार्मिक विषयों पर घंटों तक भाषण देने में सिद्धहस्त थे। गढ़वाल के बाहर रहते हुये भी इन्हें अपने क्षेत्र का ध्यान रहता था। इन्होंने देवीखेत के विद्यालय को कई हजार रूपये दान दिये थे। तिमली, श्रीनगर, चैलूसैंण और सिलोगी के विद्यालयों की भी इन्होंने सहायता की थी। आखिर ये बीमार होकर अपने बड़े पुत्र

डॉ. श्री विलास डबराल के पास धामपुर पहुंचे। और वहीं 22 अक्टूबर, सन् 1978 को ये ब्रह्मलोक को सिधारे।

●श्री मुकुन्दराम बड़थ्वाल

दैवज्ञ तथा अभिनव बाराह मिहिर की उपाधियों से अलंकृत श्री मुकुन्दराम बड़थ्वाल पौड़ी गढ़वाल जिले में पट्टी बिचला ढांगू के ग्राम खण्ड के रहने वाले थे। अपने पिता श्री रघुबर दत्त से संस्कृत, ज्योतिष तथा कर्मकांड की शिक्षा प्राप्त करने के बाद इन्होंने देवप्रयाग, हरिद्वार तथा लाहौर में शिक्षा प्राप्त करने के बाद इन्होंने देवप्रयाग में मनोयोग पूर्वक संस्कृत और ज्योतिष का अध्यापन किया।

ये अपनी ज्योतिष संबंधी ग्रन्थ रचना के लिए स्मरण किये जाते रहेंगे। इन्होंने कुल पैंतालिस ग्रन्थों की रचना की। जिनकी संख्या विभिन्न खण्डों को मिलाकर 153 हो जाती हैं। इनकी महत्वपूर्ण रचनाओं में सर्वश्रेष्ठ **मुकुन्द कोष** है। जिसके 106 खण्ड हैं तथा उसमें समस्त संस्कृत साहित्य, आयुर्वेद शास्त्र एवं ज्योतिष आदि सभी विषयों का समावेश किया गया है। उस ग्रंथ की पांडुलिपि को देखकर केन्द्रीय शिक्षा मंत्रालय के सचिव ने आश्चर्य चकित हो कर कहा था-'इतना वृहत कार्य एक संस्थान के द्वारा ही संभव है।' इस पर इन्होंने कहा वह व्यक्ति अथवा संस्थान स्वयं आपके समक्ष है।**मुकुन्द कोष** के अतिरिक्त दैवज्ञ जी ने कई सारणियों की रचना की। उनमें से **कैतकीय गणित, खेट प्रकाशिका** और **मकरन्द तति** की विद्वानों ने बहुत प्रशंसा की थी उनके कारण पंचांगो का प्रयोग अनावश्यक हो गया था। इन्होंने ग्यारह टीका ग्रंथ भी लिखे जिन्हें पाठ्य पुस्तकों की तरह पढ़ाया जाता है। **भारतीय ज्योतिष अनुसंधान संस्थान** ने इन्हें **अभिनव बाराह मिहिर** की उपाधि से अलंकृत करके स्वयं अपने आपको सम्मानित किया। गढ़वाली विद्वत समाज में तो ये **दैवज्ञ** के नाम से पहले ही विख्यात हो चुके थे।आखिर ज्योतिष जगत के ये जाज्वल्यमान नक्षत्र, गंगा नदी के समीपवर्ती अपने **मुकुंदाश्रम** की कुटिया में अंत तक अपनी लेखनी से परिश्रम करते हुये 30 सितम्बर सन् 1979 के दिन सदा के लिए अस्त हो गये।

●श्री महीधर डंगवाल

ये एक प्रसिद्ध ज्योतिषी तथा तांत्रिक थे और डांग (श्रीनगर) के निवासी थे। सन् 1849 में इनका जन्म हुआ था और सन् 1915 में निधन हुआ। इन्होंने संस्कृत, ज्योतिष व तंत्र शास्त्र में अच्छी प्रसिद्धि पाई थी। स्वामी रामतीर्थ जी भी इनसे प्रभावित हुये थे और इन्होंने अपने अमरीका प्रवास में इनका उल्लेख किया था। इस कारण वहां के भी कई व्यक्ति इनके शिष्य हो गये थे। इन्होंने एक सौ वर्ष की अवधि का एक सर्वांग पूर्ण पंचांग तैयार करके उसे कीर्ति पंचाग के नाम से प्रकाशित किया। अभी तक भी उसकी गणनायें ठीक निकलती है। इन्होंने संस्कृत व हिंदी के उन्नतीस ग्रंथ लिखे थे। उनमें से 1600 पदों का गंगा सागर महोदधि काव्य इन्होंने प्रतापशाह जी को भेंट किया था।

●श्री हरि शर्मा मुनि

इनका जन्म सन् 1850 में हुआ था। और सन् 1886 में क्यूंकालेश्वर महादेव (पौड़ी) के ये महंत बने थे। इन्होंने उस मंदिर का जीर्णोद्धार कराके उसे लोकप्रिय बनाया। इन्होंने एक संस्कृत विद्यालय भी स्थापित किया था जो अभी तक चल रहा है। भारत धर्म महामंडल ने इन्हें ध र्म रत्न और ब्रिटिश सरकार ने महामहोपाध्याय की पदवी प्रदान की थी। सारे पर्वतीय प्रदेश में उस सम्मान को पाने वाले ये प्रथम व्यक्ति थे। इन्होंने कई विद्वान छात्रों को भी तैयार किया। मार्च सन् 1917 में इनका निधन हुआ।

●श्री आलम सिंह राणा

दिसंबर सन् 1843 मे इनका जन्म पट्टी चलणस्यूं के दुंग्रीपंथ ग्राम (पौड़ी गढ़वाल) में हुआ था। ये प्रशिक्षित अध्यापकों की प्रथम टोली में थे और फिर बयालीस वर्ष तक जिला गढ़वाल में स्कूलों के सब डिप्टी इंसपेक्टर रह कर सन् 1906 में ये पेंशन पर गये। इन्होंने दर्जनों विद्यालय खुलवाने तथा उनकी व्यवस्था ठीक करने का जोरदार प्रयत्न किया ये कुछ वर्षो तक जिला बोर्ड के सदस्य भी रहे। 15 अक्टूबर, सन् 1923 को इनका निधन हुआ। श्री जयानंद थपलियाल ने अपनी पुस्तक मैं और मेरा युग में इनका आकर्षक विवरण दिया है।

●श्री शिव नारायण

जिला पौड़ी गढ़वाल की पट्टी मन्यारस्यूं के ग्राम बड़खोलू में इनका 17 जनवरी, सन् 1887 को जन्म हुआ था। इन्होंने स्वतंत्र व्यवसाय को अपनाया और गढ़वाल व्यवसाय भंडार की स्थापना में मुख्य भाग लिया। इन्हीं के प्रयत्नों से फरवरी, सन् 1923 में दुगड्डा में उसकी स्थापना हुई। कुछ वर्षो तक वह अच्छा चला पर सन् 1934 वाले दुगड्डा के अग्नि कांड में उसका शेष सामान भी स्वाहा हो गया। इन्होंने व्यापार संबंधी कुछ पुस्तकें भी प्रकाशित की थी।

इन्होंने गढु सुम्याल के प्रसिद्ध पंवाड़े का संपादन और प्रकाशन सन् 1928 में किया था। पर ये अन्य पंवाड़े प्रकाशित नहीं कर पाये। ये दो बार जिला बोर्ड के सदस्य रहे। और जिला क्षत्रिय समिति के सभापति पद पर भी इन्होंने कार्य किया। 2 अगस्त, सन् 1933 में इनका देहान्त हुआ।

●श्री जोधसिंह नेगी

प्रतिभाशाली राजकर्मचारी तथा रचनात्मक जनसेवक श्री जोध सिंह नेगी का जन्म सन् 1863 ई0 पट्टी असवालस्यूं के सूला ग्राम में हुआ था। इनके पिता श्री पद्म सिंह नेगी पौड़ी की अदालत में एक साधारण पद पर थे। वहीं इन्होंने मिशन हाईस्कूल में अंग्रेजी मिडिल तक शिक्षा पाई और फिर कलेक्ट्रेट में नियुक्त हो गये।

सरकारी नौकरी प्रारम्भ करते समय ये पन्द्रह रूपये मासिक वेतन पर एक साधारण क्लर्क नियुक्त हुए थे। लेकिन अपने परिश्रम और सच्चरित्रता से शीघ्रता के साथ इन्होंने उन्नति की। कुछ वर्षों बाद ये पौड़ी के डिप्टी कलेक्टर की अदालत में सेकेण्ड क्लर्क बनाये गये।

सन् 1896 ई0 में ये बन्दोबस्ती कार्य के लिए अल्मोड़ा जिले में परिवर्तित किये गये। वहां पहले ये असिस्टेंट सेटलमेंट ऑफिसर के सरिश्तेदार रहे और फिर कुछ समय बाद सर्वे अमीनों के सुपरवाइजर पद पर नियुक्त हुए। गढ़वाल में पहले-पहले देश प्रेम की भावना पैदा करने

वाले ठा0 जोध सिंह नेगी अल्मोड़ में सेटलमेण्ट ऑफिसर हुये। उन्होंने वहां गढ़वाली अमीन बड़ी संख्या में भर्ती किये। 1904 ई0 में इनका स्थानांनतरण पौड़ी को हुआ। लगभग पांच वर्षों तक ये वहां रहे। इनके लगातार प्रशंसनीय कार्य से प्रसन्न होकर गवर्नमेंट ने इन्हें डिप्टी कलेक्टरी के लिए छांट लिया था कि इन्हें टिहरी गढ़वाल जाना पड़ा। श्री सदानंद कुकरेती इनको अपना सरिश्तेदार छांटा। वे विशाल कीर्ति के सम्पादक की हैसियत से सरकारी हल्कों में बहुत खटक चुके थे। फिर भी उनकी कट्ट सत्यप्रियता और कार्य तत्परता के कारण इन्होंने सरकारी हल्कों की परवाह न करते हुए भी उन्हें ही छांटा। पेंशन में आ जाने पर इन्होंने गढ़वाल जिले के सार्वजनिक जीवन में प्रवेश किया। सन् 1920 में माटेगू-चेम्सफोर्ड सुधारों के अन्तर्गत प्रान्तीय जेजिस्लेटिव कौंसिल के लिए प्रथम निर्वाचन हुए। तो ये भी उस पद के लिए उम्मीदवार हो गये। इनके मुकाबले में कई दिग्गज व प्रभावशाली महानुभाव थे। लेकिन ये प्रबल बहुमत से निर्वाचित हुए। कौंसिल में इन्होंने परिश्रम से कार्य किया। उसी बीच ब्रिटिश सरकार ने इन्हें रायबहादुर की उपाधि प्रदान करके सम्मानित किया। 15 नवम्बर सन् 1925 ई0 को इन्होंने बासठ वर्ष की आयु में अपनी जीवन लीला समाप्त की। इनका निधन15 नवम्बर सन् 1925 ई0 को हुआ।

डॉ पीताम्बर दत्त बड़थ्वाल

(जन्म 13 दिसम्बर 1901 ई0 निधन 24 जुलाई 1944)

इस युग में गढ़वाल के सर्वश्रेष्ठ साहित्य वेत्ता, धुरंधर विद्वान तथा सिद्धहस्त लेखक डा. पीताम्बर दत्त बड़थ्वाल का जन्म लैंसडौन से केवल तीन मील दूर कौड़िया पट्टी के पाली ग्राम में गते मार्गशीर्ष सम्वत 1858 वि. (13 दिसम्बर सन् 1901 ई0) को हुआ था। इनके पिता श्री गौरीदत्त बड़थ्वाल ज्योतिषी तथा कर्मकांडी ब्राह्मण थे, पर इनकी बाल्यावस्था में ही उनका देहावसान हो गया। अत: अधिकांशतया इनके ताऊ जी ने ही इनकी देखभाल की। समीपवर्ती एक विद्यालय में कुछ समय तक अध्ययन करने के बाद ये गवर्नमेंट हाईस्कूल श्रीनगर में प्रविष्ट हो गये।

कालीचरण हाईस्कूल में सन् 1920 ई. में इन्होंने सम्मान सहित मैट्रिक और हाईस्कूल की परीक्षाएं उत्तीर्ण की। इंटरमीडिएट के लिए ये कानपुर गये और वहां सन् 1922 में इन्होंने डीएवी कॉलेज से एफए परीक्षा उत्तीर्ण की। वनारस विश्वविद्यालय में प्रविष्ट हुए और सन् 1926 में इन्होंने बीए की परीक्षा उत्तीर्ण की। सौभाग्य से उन्हीं दिनों हिन्दी में एमए कक्षा प्रारम्भ हुई और ये उसके सर्वप्रथम दल में सम्मिलित हुए। इन्होंने सन् 1928 ई. में एमए परीक्षा में प्रथम श्रेणी में प्रथम स्थान प्राप्त किया।

दो वर्ष के बाद सन् 1930 ई. में इन्हें उसी विभाग में प्रवक्ता लेक्चरर का पद मिल गया। काशीनगरी प्रचारिणी सभा ने इन्हें अपना खोज विभाग का अवैतनिक संचालक (ऑनरेरी सुपरिटेंडेण्ट, सर्च ऑफ हिन्दी मैनसक्रिप्टस भी नियुक्त किया। ये उस पद पर कई वर्षों तक रहे। उपरोक्त शोध संचालन के साथ-साथ ये स्वयं भी डॉक्टरेट की तैयारी करते रहे। 2-3 वर्ष के परिश्रम के बाद इन्होंने सन् 1931 ई0 में अपना निबन्ध (थीसिस) हिन्दी काव्य में निर्गुणवाद विश्वविद्यालय को समर्पित किया।

परीक्षक थे ऑक्सफोर्ड विश्वविद्यालय के उर्दू हिन्दी विभाग के अध्यक्ष डॉ. टीग्राहम बेली, प्रयाग विश्वविद्यालय में दर्शन विभाग के अध्यक्ष प्रो. रास चंद्र दत्तात्रेय रानाडे और श्री श्याम सुन्दर दास। अबकी बार परीक्षकों ने उसे डी. लिट् डॉक्टर ऑफ लेटर्स साहित्याचार्य की पदवी के लिए उसकी प्रशंसा की। सन् 1933 ई0 के दीक्षान्त समारोह (कनवोकेशन) में इन्हें वह पदवी प्रदान की गई। शुद्ध हिन्दी साहित्य के विषय को लेकर डॉक्टरेट पाने वाले ये सर्वप्रथम व्यक्ति थे। इन्होंने कई पुस्तकें लिखी। अपने दो वर्ष के अध्ययन काल में इन्होंने प्राकृतिक चिकित्सा प्रणाली से अपने आप को रोगमुक्त किया था। प्राणायम विज्ञान और कला तथा ध्यान आत्म चिकित्सा पुस्तकें लिखकर प्रकाशित कराई थी। उपरोक्त पुस्तकों के अतिरिक्त इन्होंने कबीर ग्रंथावली तथा रामचंद्रिका का सम्पादन किया। गद्य सौरभ पुस्तक इन्होंने श्री रामचंद्र शुक्ल के सहयोग से लिखी। अपने गुरू श्री श्यामसुन्दर दास के सहयोग से लिखी। इन्होंने दो पुस्तकें प्रकाशित की। गोस्वामी तुलसी दास और रूपक रहस्य प्रथम में इन्होंने हिंदी के महाकावि गोस्वामी तुलसीदास की जीवनी और कविता की अनुपम विवेचना की है। द्वितीय पुस्तक में इन्होंने भारतीय नाट्य शास्त्र की विशद् व्याख्या की है। गोरखवाणी का इन्होंने स्वत: सम्पादन किया तथा उसकी गवेषणापूर्ण प्रस्तावना लिखी। उस पुस्तक में इन्होंने प्रसिद्ध समाज सुधारक तथा पंथ प्रणेता गुरू गोरखनाथ की जीवनी और वाणियों पर प्रकाश डाला अपने ढंग की यह एक बेजोड़ पुस्तक है।

सन् 1944 ई0 में ये छुट्टी लेकर घर आये, तब फिर वापिस नहीं जा सके। कई बीमारियों ने इन्हें एक साथ घेर लिया। औषधोपचार चलता रहा। लेकिन तथ्य यह है कि आर्थिक संकट और मानसिक चिंताओं के कारण जमकर इलाज नहीं हो पाया, और हालत बिगड़ती ही चली गई आखिर 24 जुलाई सन् 1944 ई. को अपने पितृस्थान पाली में इनकी अमर आत्मा ने इस नश्वर मानवी चोले से विदाई ले ली। जैसा कि पहले उल्लेख किया जा चुका है इनका पारिवारिक जीवन चिन्तापूर्ण था।

इनके सभी पुत्र शारीरिक तथा मानसिक दृष्टि से दोषपूर्ण थे। और इन सबका देहान्त हो गया था। कुछ समय बाद इनकी पत्नी भी स्वर्ग सिधार गई। इनकी तीन पुत्रियां है बड़ी पुत्री के पति श्री नत्थी प्रसाद जुगडाण दिल्ली प्रशासन में अध्यापक थे तथा साहित्यिक अभिरूचि के युवक थे पर 20 अप्रैल सन् 1963 ई0 को उनका भी उनचालीस वर्ष की आयु में ही देहावसान हो गया। इनकी मंझली पुत्री प्रसन्ना के तथा उनके पति के प्रयत्नों से दिल्ली में बड़थ्वाल प्रतिष्ठान की स्थापना हुई है और छोटी पुत्री इनके घर की देखभाल करती है। सौभाग्य से डॉ. बड़थ्वाल जी की माता श्री रूकमणि देवी लम्बे समय तक जीवित रही। उन्होंने सभी आपदाओं का सामना धैर्य के साथ किया था पर अब वे भी स्वर्ग सिधार चुकी है।

●सामाजिक सरोकारों के लिए समर्पित शशिधर भट्ट

सामाजिक सरोकारों के लिए समर्पित शशिधर भट्ट का जन्म 24 मार्च 1932 को उत्तराखण्ड के पौड़ी जिले के ग्राम पीपली, पट्टी मनियारस्यूं

में हुआ था। आपके पिताजी का नाम भवानीदत्त भट्ट तथा माता का नाम विमला देवी था। आपकी प्राथमिक शिक्षा कोटद्वार में हुई तथा आठवीं आपने जूनियर हाईस्कूल कांसखेत से ग्रहण की। नजीबाबाद राजकीय इण्टर कालेज से सन् 1951 में आपने हाईस्कूल की परीक्षा उत्तीर्ण की तथा राजकीय इण्टर कालेज बिजनौर से आपने इण्टर की परीक्षा पास करने के पश्चात् आपने एक वर्ष में बी0ए0 की परीक्षा उत्तीर्ण करने के पश्चात अपरिहार्य कारणों से आप आगे की शिक्षा नहीं ले पाये।

आप समाजवादी विचारधारा से प्रभावित रहे हैं तथा पैतृक व्यवसाय ट्रांसपोर्ट होने के कारण सन् 1965 में प्रथम बार अपने पिताजी के स्थान पर आपको जी0एम0ओ0यू0लि0 में निर्विरोध संचालक चुने गये।

सन् 1967 में आपने टैक्सी व्यवसाय में पदार्पण किया तथा कोटद्वार के अवैतनिक सचिव व अधयक्ष रहे। सन 1980 में गढ़वाल से चलने वाले माल भार वाहन के सुचारू संचालन के लिए संयुक्त यातायात समिति का गठन हुआ। संयुक्त यातायात समिति के गठन में महत्वपूर्ण भूमिका के रूप में आप प्रमुख संयोजक रहे । बचपन से ही खेलों के प्रति आपका रूझान रहा है। स्थानीय युवकों का खेलों के प्रति आकर्षण पैदा करने के उद्देश्य से आपने 1958 में कोटद्वार स्पोर्टस क्लब का गठन किया। कोटद्वार स्पोर्टस क्लब के गठन के पश्चात् कोटद्वार में खेलों के प्रति रूझान बढ़ा तथा धीरे-धीरे यहां पर अनेक खेल प्रतियोगिताओं का आयोजन होने लगा।

सन् 1985 से 1988 तक आप जिला खेलकूद संघ के उपाध्यक्ष पद पर रहे । सन 1986 से 1988 तक आप जी0एम0ओ0यू0लि0 के अध्यक्ष पद पर रहे। सन 1988 में रामनगर में उत्तराखण्ड परिवहन संघर्ष समिति का गठन किया गया। उक्त संघर्ष समिति में आप निरन्तर 10 वर्षों तक अध्यक्ष पद पर रहे। अध्यक्ष पद पर रहते हुए आपने गढ़वाल और कुमायूं की परिवहन संस्थाओं की कई पेचदिगियों का सरलीकरण करवाया।

सन 1988 में आप कोटद्वार नगर पालिका परिषद के अध्यक्ष पद पर निर्वाचित हुए। आपके कार्यकाल में कोटद्वार नगर पालिका परिषद में कई जनहित के कार्य करवाये गये। कोटद्वार के इन्दिरा नगर में आप ने वर्षों से चला आ रहा भूमि विवाद को सुलझाया। दरअसल इन्दिरा नगर के आमसौड़ मैदान के बगल वाली भूमि पर वर्षों से रक्षा विभाग तथा जिला प्रशासन का वर्षों से विवाद चल रहा था। इस विवाद को सुलझाने में आपने अपनी बुद्धि-विवेक का परिचय देते हुए महत्वपूर्ण भूमिका निभायी।

कोटद्वार के खेल प्रेमियों की मांग पर पनियाली तल्ली में सात एकड़ जमीन पर अवैध कब्जे को हटवाकर आपने शासन द्वारा एक मिनी स्टेडियम स्वीकृत करवाया। वर्तमान में यह मिनी स्टेडियम आपके नाम पर शशिधर भट्ट मिनी स्टेडियम के नाम से जाना जाता है। मोटर नगर स्थित 30 बीघा भूमि को वापस नगर पालिका परिषद में लाने के लिए आपने अहम योगदान दिया है।

दरअसल 1976-77 में कोटद्वार नगर पालिका परिषद द्वारा मोटर नगर में एक बस अड्डे का निर्माण के लिए मोटर नगर में 30 बीघा भूमि का चयन किय गया था। परन्तु 1988 में तत्कालीन जिला प्रशासन ने उक्त भूमि को वर्कशॉप बनाने के लिए परिवहन विभाग उत्तर प्रदेश को 7,50,000/रूपये में परिवहन विभाग उत्तर प्रदेश को वर्कशॉप बनाने के लिए बेच दिया था। परिषद का अध्यक्ष होने के नाते आपने उसका कड़ा प्रतिकार किया तथा परिषद की भूमि को वापस पाने के लिए जोरदार प्रयास शुरू कर दिये। आपके सद्प्रयासों से उक्त जमीन पुनः नगर पालिका परिषद को वापस मिल गयी। भले ही यहां पर अभी आपके सपनों का बस अड्डा बनना शेष है।

उत्तराखण्ड राज्य आन्दोलन में भी आपने सक्रिय भूमिका निभायी तथा सन् 1992 आपको सर्वसम्मति से उत्तराखण्ड संघर्ष समिति में जिला संयोजक बनाया गया। आप शासन प्रशासन में जनहित के मुद्दे निरन्तर उठाते रहे बेहतर कोटद्वार के लिए अन्तिम सांस तक लड़ते रहे। सामाजिक सरोकारों के लिए समर्पित व्यक्तित्व 26 सितम्बर 2016 को भौतिक शरीर छोड़ कर आत्मिक रूप से परमात्मा में विलीन हो गये।

सर्वोदय सेवा का पथिक : मान सिंह रावत

हिमालय क्षेत्र की पुण्य देवभूमि उत्तराखण्ड सदा ही उच्च मानवीय गुणों से परिपूर्ण मानवों की भूमि रही है। यहां पर जन्म लेने वाले मानव सदा ही श्रेष्ठ मानवीय गुणों को धारित करते हैं। इसलिए यह भूमि देवभूमि कहलाती है। देवत्व से ओत-प्रोत इस भूमि में समय-समय पर अनेक महापुरूषों ने जन्म लेकर मानव की भावी पीढ़ी को जीने की नयी राह बतायी है। मान सिंह रावत भी ऐसे ही श्रेष्ठ महापुरूषों में एक थे।

जिन्होंने आजीवन सर्वोदय सेवा का व्रत लिया था। मान सिंह रावत उत्तराखण्ड के पौड़ी जिले के निष्ठावान सर्वोदय सेवक थे। वह गांधीजी के ग्राम स्वराज, विनोबा भावे के सर्वोदय और जयप्रकाश नारायण के जीवनदान के मूल सिद्धान्तों के प्रति गहरी आस्था रखते थे। सर्वोदय आन्दोलन में उनके द्वारा किया गया कार्य ग्राम स्वराज का कार्य था। उन्होंने देश के विकास के लिए जीविका आन्दोलन में भाग लिया और जीवनदान का संकल्प किया। मान सिंह रावत ने नेपाल, सिक्किम, भूटान, पश्चिम बंगाल, उत्तर प्रदेश तथा गढ़वाल में ''विश्व शान्ति पदयात्रा'' शान्ति और भाईचारे का प्रचार करने के लिए की । उन्होंने उत्तराखण्ड के कण्वनगरी कोटद्वार के मालिनी नदी के तट पर स्थित हल्दूखाता और उसके आस-पास के गांवों में बोक्सा जनजाति के उत्थान और सतत् विकास के लिए अपना सम्पूर्ण जीवन समर्पित कर दिया।

सर्वोदय सेवा का यह पथिक आजीवन सर्वोदय सेवा का सत्यव्रती था तथा सर्वोदय सेवा के लिए जिया तथा उसी के लिए अपने जीवन का दान कर दिया।

सर्वोदय सेवक मान सिंह रावत का जन्म 24 जनवरी 1928 को उत्तराखण्ड के पौड़ी गढ़वाल जिले की थैलीसैंण तहसील के अन्तर्गत नाम कैंडुल में हुआ था। आपकी माता का नाम गौरी देवी तथा पिता का नाम बाम सिंह रावत था। आपकी प्राथमिक षिक्षा गांव में ही सम्पन्न हुई। छठवीं से आठवीं तक की शिक्षा आपने सिलोगी में ली तथा हाईस्कूल की परीक्षा आपने मैसमोर इण्टर कालेज, पौड़ी से उत्तीर्ण की। इण्टर की परीक्षा आपने राजकीय इण्टर कालेज, लैन्सडौन से उत्तीर्ण की तथा स्नातक की परीक्षा आपने आगरा विश्वविद्यालय से पास की। पैरा स्नातक के लिए आप मुम्बई गये तथा टाटा इंस्टिट्यूट ऑफ सोशल साइन्सेंज बम्बई से आपने पैरा स्नातक की डिग्री ली। दो साल की एडवान्स स्टडीज के लिए कोलम्बिया यूनिवर्सिटी न्यूयार्क जाने की आप तैयारी कर चुके थे परन्तु गाँधी जी की शिष्या सरला बहन ने एक साल भूदान यज्ञ में समय देने के लिए आपसे अनुरोध किया जिसे आपने सहर्ष स्वीकार करते हुए भूदान आन्दोलन में यज्ञ आहुति दी। 18 अप्रैल 1954 को लोकनायक जयप्रकाश नारायण के आह्वान पर आप सर्वोदय सेवा के 'जीवनदान' मिशन से जुड़ गये तथा उसके बाद उत्तराखण्ड में भूदान यज्ञ के लिए निरन्तर कार्य करते रहे। 15 जुलाई 1955 को आपकी शादी बड़े सादे ढंग से शशिप्रभा से हुई। विवाह के पश्चात

नवम्बर 1956 से आप बिजनौर, हरिद्वार तथा पौड़ी की सीमा में बोक्सा जनजाति के उत्थान के कार्य में जुड़ गये। बोक्सा जनजाति की शिक्षा और विकास को आपने अपना ध्येय बना लिया। 30 जनवरी 1966 से 31 दिसम्बर 1968 तक निरन्तर तीन साल तक आप सर्वोदय सेवा विचार के प्रचार-प्रसार के लिए पदयात्रा करते हुए विश्व मैत्री यात्रा पर निकल पड़े। दिसम्बर 1968 में गांधी शताब्दी वर्ष तथा सन 1972 तक आप ग्रामीण पेयजल योजना तथा नशामुक्ति के लिए संघर्ष करते रहे।

1972 में कण्वनगरी कोटद्वार के हल्दूखाता में बोक्सा जनजाति को भूमिहीनता से बचाने के लिए आपने सर्वोदय सेवा केन्द्र की स्थापना की। इसका उद्देश्य बोक्सा जन जाति में शिक्षा का प्रसार करना था। 1994 से 2004 तक आप गढ़वाल जिले की नयार घाटी के 85 गाँवों में भ्रमणरत रहे तथा इस दौरान आपने विभिन्न गांवों में ग्राम स्वराज समिति, महिला उत्थान के लिए महिला मंगल दलों की स्थापना, वन संरक्षण के प्रति जनजागरण, बाल संस्कार केन्द्रों की स्थापना जैसे अनेक जनहित के कार्यक्रम चलाते रहे। उत्तराखण्ड में सन 2004 से सन 2005 तकं आपने उत्तराखण्ड में ग्राम स्वराज पदयात्रा के माध्यम से गांवों को नशामुक्त तथा ग्राम सशक्तिकरण करने का संदेश दिया।

कण्वनगरी कोटद्वार में सर्वोदय सेवा के विचारों के क्रियान्वयन के लिए आप निरन्तर कार्य करते रहे। गाँधी विचारों का प्रसार तथा आपकी समाज के प्रति सेवा भक्ति को देखते हुए सन 2015 में आपको अन्तर्राष्ट्रीय जमना लाल बजाज पुरस्कार से सम्मानित किया गया। पुरस्कार पाने के बाद आपके इन विचारों से आपकी महानता का पता लग जाता है। पुरस्कार राशि को समाज हित के लिए समर्पित करते हुए vkusdgk **^यह राशि हमारी कमाई नहीं है। उसे हम अपने व्यक्तिगत उपयोग में थोड़े ही ला सकते हैं। हम जो कुछ कर रहे हैं, और जो कुछ किया है वह सर्वोदय सेवक के रूप में कर रहे हैं। अतः इस राशि का उपयोग सर्वोदय कार्य को आगे बढ़ाने के लिये ही उचित रहेगा।**

हमारे लिए इतना ही बहुत है कि इसके कारण हमारी सेवायें आप लोग स्वीकार कर रहे हैं।'' व्यक्ति अपने विचारों से महान होता है तथा विचारों से ही उसकी महानता का पता लगता है। सर्वोदय सेवक मान सिंह रावत उन महान व्यक्तित्व में सम्मिलित थे जिन्होंने अपना सर्वस्व जीवन समाज सेवा के लिये न्यौछावर कर दिया। 13 फरवरी 2019 को सादा जीवन, उच्च विचार वाला सर्वोदय सेवा का यह पथिक अपनी यात्र पूर्ण कर अनंत आकाश में विलीन हो गये। भले ही आज मान सिंह रावत जैसे महान व्यक्तित्व भौतिक शरीर के रूप में हमारे बीच में न हों परन्तु वैचारिक रूप से आप सदैव इस ध रती पर विराजमान रहेंगे।

सामाजिक क्रांति के अग्रदूत : बलदेव सिंह आर्य

गढ़वाल की धरती राष्ट्रीयता से ओत-प्रोत वीर भोग्य भूमि रही है. समय- समय पर इस धरती पर अनेक समाज सेवियों ने जन्म लेकर न सिर्फ समाज में व्याप्त कुरीतियों को मिटाने के लिए डटकर मुकाबला किया बल्कि उन कुरीतियों को जड़ से समाप्त करने का संकल्प भी व्यक्त किया. उन्हीं समाज सेवियों के अथक प्रयासों से समाज में व्याप्त अनेक कुरीतियों को मिटाया जा सका है. अपनी मजबूत इच्छा शक्ति के चलते ऐसे समाज उत्थान कर्ताओं ने जीवन में कभी हार नहीं मानी तथा आने वाली पीढ़ियों को भी जीवन जीने की नई राह बतायी है समाज उत्थानक ऐसे समाज सेवी जीवनभर न सिर्फ दु:खी-पीड़ित वर्ग के हक की लड़ाई रहे बल्कि सामाजिक न्याय को ही अपना धर्म बनाया. गढ़वाल की माटी में जन्में सामाजिक क्रांति के अग्रदूत बलदेव सिंह आर्य भी उन समाज सेवियों में से एक थे जिन्होंने सामाजिक क्रांति के लिए न सिर्फ आवाज बुलंद की बल्कि समाज में दलित और पीड़ित वर्ग के हक में न्याय की लड़ाई लड़ी।

सामाजिक क्रांति के अग्रदूत रहे बलदेव सिंह आर्य का जन्म १२ मई १९१२ को उत्तराखंड राज्य के जिला पौड़ी गढ़वाल के विकास खण्ड दुगड्डा के अन्तर्गत पट्टी सीला ग्राम उमथ में हुआ था। उनकी माता का नाम विश्वम्भरी देवी तथा पिताजी का नाम दौलत सिंह था. काफी समय तक कोटद्वार में भी निवास किया। बलदेव सिंह आर्य स्वतंत्रता संग्राम सेनानी, जनप्रतिनिधि, समाज सेवी तथा मूल रूप से गांधी विचारक थे। सन् १९३० से जीवनप्रर्यन्त गांधीजी के विचारों से आत्मसात् करते हुए समर्पित भाव से कमजोर तथा दलित वर्ग के उत्थान के लिए कार्य करते रहे। आपकी नजर में हर वो व्यक्ति शोषित, दलित तथा कमजोर था जिसके अधिकारों पर एक खास वर्ग कब्जा करके बैठा था। सन् १९३० में ब्रिटिश शासन काल में राजद्रोहात्मक भाषण देने के कारण डेढ़ साल की सजा हुई।

सन् १९३२ में यमकेश्वर में राज अवमानना में पुन: गिरफ्तार हुए तथा छ: महीने की कठोर सजा के साथ ही जुर्माना भी लगाया गया. स्वतंत्रता संग्राम में भाग लेने के कारण १९४१ में नजरबंद किये गये. उस समय पर्वतीय क्षेत्रों में एक कुप्रथा व्याप्त थी, शिल्पकारों की बारात वर-वधू सवर्णो के गांव के बीच से डोला- पालकी के साथ नहीं गुजर सकता थी। गांव के बीच में वर और वधू को पैदल ही जाना पड़ता था। जिसका शिल्पकार समाज द्वारा विरोध किया जा रहा था. श्री आर्य ने शिल्पकार समाज के इस सामाजिक अधिकार को दिलाने में सक्रिय भूमिका निभाई।

उन्होंने १९४१ में शिल्पकार समाज के मानवीय अधिकार को दिलाने के लिए डोला- पालकी आन्दोलन को वृहद स्वरूप प्रदान किया गया। उन्होंने गांधीजी से शिल्पकारों के अधिकार को दिलाने के लिए हस्तक्षेप करने की मांग की तथा वे इस मुद्दे को प्रदेश और राष्ट्रीय स्तर तक ले गये। उनकी मुखरता को देखते हुए राष्ट्रीय स्तर पर ऐसे कृत्यों की तीव्र निन्दा की गयी तथा शिल्पकारों के सामाजिक अधिकारों को दिलाने के लिए कानून बना।

शोषित समाज को वापस उसके सामाजिक अधिकार प्राप्त हुए। उनकी पहल पर सेठ डालमिया ने गढ़वाल में १७ स्कूल खुलवाये जिनका व्यय भार उन्होंने स्वयं वहन किया। बाद में इन स्कूलों को सरकार ने अधिग्रहित किया। सन् १९५० में प्राविजनल पार्लियामेंट के सदस्य मनोनीत हुए। प्रथम आमचुनाव में गढ़वाल से उत्तर प्रदेश विधानसभा के लिए चुने गये। बाद के वर्षों में १९५७, ६२, ७४, ८०, ८५ के चुनावों में विधानसभा के सदस्य तथा १९६८ से १९७४ तक विधान परिषद के सदस्य रहे। १९५२ से पंडित गोविन्द बल्लभ पन्त के मुख्यमंत्री काल से लेकर उत्तर प्रदेश में गठित सभी कांग्रेस सरकारों में मंत्रीमंडल में शामिल रहे। उत्तर प्रदेश सरकार द्वारा नियुक्त कोल्टा जांच समिति के अध्यक्ष, १९६७ में यूपीसीसी के महामंत्री, वर्षों तक एआईसीसी के सदस्य, वनों की समस्या के निराकरण एवं निरुपण समिति के सदस्य, अखिल भारतीय हरिजन सेवक संघ के उपाध्यक्ष आदि कई राज्यस्तरीय एवं राष्ट्रीय स्तर की समितियों से जुड़े रहे। २२ दिसम्बर १९९२ को सामाजिक क्रांति का यह अग्रदूत पंचतत्व में विलीन हो गया।

धधकता पहाड़ से दैनिक जयन्त का नियमित प्रकाशन

पहाड़ की वेदना से चिंतित युवा नरेन्द्र उन दिनों दिल्ली में पहाड़ के प्रवासी लोगों को उत्तराखंड की खुशहाली के एकमात्र विकल्प पृथक उत्तराखण्ड राज्य की मांग के समर्थन में एक सूत्र में लाने की मुहिम पर लगे थे। इसी समय नरेंद्र उनियाल ने विचार बनाया, उत्तराखंड की अवाम को वहां की विषम समस्याओं से संघर्ष और उत्तराखंड पृथक राज्य की मांग के लिये जनजागृति लाने की दिशा में एक समाचार पत्र का प्रकाशन किया जाय जो इस अभियान का सबल माध्यम हो।

अपने इस दृढ निश्चय के साथ उनियाल जी कोटद्वार पहुंचे। यहां अपने कुछ परिचित मित्रों से अपनी मंशा जाहिर करते हुए उन्होने परामर्श किया और 1971 में गढ़वाल के प्रमुख नगर कोटद्वार से साप्ताहिक "धधकता पहाड़" समाचार पत्र का प्रकाशन प्रारंभ कर दिया। सन् 1971 से अप्रैल 1975 तक "धधकता पहाड़" भ्रष्ट प्रशासन तंत्र और निरंकुश सत्ताधिकारियों की गले की मुसीबत के रूप में प्रख्यात हो गया था। इसी बीच श्रीमती इंदिरा गांधी के शासनकाल में घोषित आपातकाल में डी. आई.आर के तहत नरेन्द्र उनियाल को 26 जून 1975 को गिरफ्तार कर 19 माह तक जेल में रखा गया। इससे "धधकता पहाड़" का प्रभावित होना स्वाभाविक था। 19 फरवरी 1977 को श्री उनियाल को जेल से रिहाई मिली। वहां वे अत्यन्त रूग्ण हो गये थे। इसके बावजूद भी वे अपने पत्र को नियमित चलाते रहे।

साप्ताहिक 'जयन्त' का प्रकाशन क्यों?

"धधकता पहाड़" जबकि उस समय के अनुकूल शासन-प्रशासन पर भारी पड़ रहा था। लोकतंत्र को अपने हित के लिये इस्तेमाल करने वाले भ्रष्ट राजनेताओं की किरकिरी बना हुआ था, उसकी हत्या के इरादे से एक सोची समझी साजिश के तहत उसके सम्पादक नरेन्द्र उनियाल को आपातकाल के काले कानून के अन्तर्गत जेल के सींखचों तक पहुंचा दिया था इसके साथ ही "धधकता पहाड़" की संघर्ष व ईमानदारी के कारण बनी आक्रामक छवि को देखते हुए बुद्धिजीवी मित्रों ने रिहाई के बाद नरेन्द्र जी को परामर्श दिया कि "धधकता पहाड़" के स्थान पर वे किसी दूसरे नाम से पत्र का प्रकाशन करें।

यद्यपि उस समय कोटद्वार नगर से वर्षो से अनेक पत्र प्रकाशित होते थे। इसलिये भी इनसे इतर एक नौजवान समाचार पत्र की नितांत आवश्यकता थी जो जनता की आवाज को निष्पक्षता के साथ बुलंद कर सके तथा शासन प्रशासन की गतिविधियों से आम जनता को परिचित करा सकें। मित्रों के यह विचार नरेन्द्र उनियाल को पंसद आ गये और उन्होने नए नाम से साप्ताहिक प्रकाशित करने की योजना बना ली। उनियाल जी जिस लक्ष्य का निर्धारण कर लेते थे, उसे पूरा करने में कभी भी, कैसी भी परिस्थितियों में पीछे हटना नहीं जानते थे और सन् 1779 में उन्होंने यह कर दिखाया।

साप्ताहिक "जयन्त"

7 मई सन्1979 को साप्ताहिक **जयन्त** का प्रथम अंक पाठकों के हाथों में था। इस अंक का सम्पादकीय जो 'धर्म स्वतन्त्र विधेयक' तथा 'उत्तरप्रदेश के विभाजन' दो बिन्दुओं पर लिखे गये थे, पत्र के सम्पादक स्व. नरेन्द्र उनियाल की विलक्षण बुद्धि एवं प्रतिभा को प्रदर्शित करता है। बड़े संघर्षो से स्थापित प्रतिभा प्रेस कोटद्वार से नरेन्द्र उनियाल के स्वामित्व / मुद्रक/ प्रकाशक एवं सम्पादन में प्रकाशित साप्ताहिक **जयन्त** का कलेवर भी बुद्धिजीवियों के आकर्षण का विषय था। इसे जिन स्तम्भों में निरूपित किया था उनमें दो स्तम्भ जन संसद और राष्ट्र चिन्तन क्रमशः जनसमस्याओं और उत्तराखण्ड के चिन्तनशील बुद्धिजीवियों और राजनीतिक स्तम्भकारों के साथ विशेष रूप में यहां के युवा चिन्तनशील वर्ग के लिये सुरक्षित थे।

सन् 1981 में **जयन्त** की इस समग्र यात्रा में एक ऐसी अनहोनी घटी जब **जयन्त** के सम्पादक का पार्थिक शरीर कोटद्वार स्थित **जयन्त** कार्यालय में लाया गया। इस घटना के लिये जिम्मेदार 23 जुलाई सन् 1981 का मनहूस दिवस पूरी तरह से उत्तरदायी है और इस ब्रजपात से **जयन्त** परिवार तो आहत था ही, साथ कोटद्वार से लेकर गढ़वाल का बुद्धिजीवी , राजनीतिज्ञ, सामाजिक कार्यकर्ता, साहित्यकार और पत्रकार वर्ग श्री नरेन्द्र उनियाल के नाम से पूर्व स्वर्गीय शब्द जोड़ने से पूर्णतया शोक संतप्त ही नहीं निराशा से ग्रस्त थे। मृत्यु को निश्चित मानते हुए सभी उस तीन वर्षीय शिशु (**जयन्त**) के जीवन के प्रति चिंतित थे और सर्शकित थे कि संरक्षण के अभाव में इस शिशु की अकाल मृत्यु कतिपय कारणों से न हो जाये। लेकिन यह बड़े गर्व के साथ कहना होगा कि स्व. नरेन्द्र के पश्चात उनके अनुज नागेन्द्र उनियाल ने उसे वही संरक्षण, लालन-पालन और यौवन प्रदान किया जिसके फलस्वरूप **जयन्त** आज उत्तराखण्ड के दैनिक समाचार पत्रों की अग्रिम पंक्ति में हैं।

अब स्व. नरेन्द्र उनियाल का सम्पूर्ण दायित्व उनके अनुज श्री नागेन्द्र उनियाल के कंधो पर था फिर भी परिवार के मुखिया के अनायास निधन से जो समस्याये उसके उत्तराधिकारी पर आ जाती है, वहीं नागेन्द्र के सामने भी आ उपस्थित हुई। अब उन्हें दोहरी जिम्मेदारियों से रूबरू होना पड़ा। इसमें प्रथम तो **जयन्त** का दीर्घ जीवन और दूसरा पारिवारिक दायित्व, इन दोहरी जिम्मेदारियों का उन्होनें बखूबी निर्वहन किया जो दैनिक **जयन्त** के रूप में देखा जा रहा है। साप्ताहिक की जिम्मेदारियां जिन्हें हम पूर्व में उल्लिखित कर चुके हैं को जीवटता के साथ निभाते नागेन्द्र ने अपने मन में एक संकल्प दृढ़ता के साथ ले लिया था जो साप्ताहिक **जयन्त** को दैनिक कलेवर के साथ प्रकाशन था। सन् 1981 से सन् 1986 तक **जयन्त** का नियमित साप्ताहिक प्रकाशन होता रहा।

दैनिक "जयन्त"

यहां यह उल्लेख करना भी आवश्यक समझते हैं कि स्व. नरेन्द्र की मृत्यु के समय **जयन्त** 2 वर्ष 02 माह 16 दिन का अबोध शिशु था और 1986 की 18 अप्रैल को 6 वर्ष 4 माह 11 दिन की किशोर वय में समाज की हर भाषा को समझने की और संघर्ष के हर मोड़ पर अड़ने की क्षमता को प्राप्त कर चुका था। यह सब श्री नागेन्द्र उनियाल के ही कुशल अनुभव और संरक्षण तथा संकल्पित उद्देश्य तक पहुंचने के विशुद्ध अनुभवों ने उसे दिया। अपनी इस किशोर वय में ही 'जयन्त' "दैनिक **जयन्त**" के कलेवर के साथ पत्रकारिता के मापदण्डों, संघर्ष, सेवा और प्रगति की भावना के साथ समाज की सेवा में जुट गया।

आज प्रश्न ये खड़ा होता है कि जब कोटद्वार में जयन्त के साथ और बाद में आर्थिक सम्पन्न लोगों द्वारा शुरू किए गए समाचार पत्र एकाएक पिछले 2-5 वर्षो में बंद हो गए तो फिर **जयन्त** कैसे चल रहा है। इसके लिए हम कोई टिप्पणी नहीं करना चाहते है। किन्तु **जयन्त** क्यों चल रहा है? इस पर कहने की हमारी पूरी नैतिक जिम्मेदारी बनती है।

जहां तक हम मानते है कि समाचार पत्र के प्रकाशन की सफलता और असफलता सबसे अधिक उसके सम्पादकों और प्रकाशकों के मूल उद्देश्य पर निर्भर करती है। समाचार पत्र क्यों प्रकाशित होते है? इसे समाज बखूबी जानता है, इसलिए समाचार पत्र किस उद्देश्य से निकल रहा है इसे समाज पहचान लेता है। इस प्रकार जनता समाज के जनजागरण के उद्देश्य से प्रकाशित होने वाले समाचार पत्रों को तो स्वीकार कर लेता है और स्वयं की स्वार्थ सिद्धि के उद्देश्य से निकलने वाले समाचार पत्रों को किनारे कर लेता है और जिस समाचार पत्र को समाज ने स्वीकार कर लिया उसे आर्थिक संकट तो क्या सरकार तक भी डिगा नहीं सकती। **जयन्त** इसका नायाब उदाहरण है।

अब **जयन्त** की आर्थिक स्थिति पर नजर डाली जाये तो लगता है कि इस पत्र ने संघर्षो का जीवन जी कर जनचेतना के अपने लक्ष्य को हमेशा पूरा किया। सन् 1979 में हैंड कम्पोजिंग के चार केस लेकर **जयन्त** मुद्रित करवाना शुरू किया। 6 माह बाद बैंक से ऋण लेकर ट्रेडिल प्रिंटिग मशीन खरीदी। तकनीकी विकास का युग आया और हैंड कम्पोजिंग की जगह कम्प्यूटर से कम्पोजिंग होने लगी। 1993 में देहरादून को छोड़ गढ़वाल के समाचार पत्रों में **जयन्त** में पहला कम्प्यूटर आया।

प्रगति के पथ पर अग्रसर **जयन्त** में कम्प्यूटर आने के बाद वर्ष 2000 में आफसेट मशीन आई और अब जबकि **जयन्त** का समाचार संकलन और मुद्रण पूरी तरह हाईटेक हो चुका है, **जयन्त** हाईटेक टेक्नोलॉजी के साथ वैब आफसेट मशीन पर कोटद्वार में ही मुद्रित हो रहा है।

पूर्णतया हाईटेक हो चुके गढ़वाल के प्रथम समाचार पत्र दैनिक **जयन्त** में देश विदेश की खबरें जहां अब इटरनेट से पहुंचती हैं वहीं पहाड़ की खबरों के लिये फैक्स, मॉडम व ई मेल की सुविधा है। लेकिन स्थान का महत्व बड़ा होता है, इसलिये **जयन्त** कोटद्वार के विकास के अनुरूप ही विकास के पथ पर अग्रसर है।